साहित्य अमृत
मासिक

वर्ष-२५ ❖ अंक-४ ❖ पृष्ठ ८४ | कार्तिक-मार्गशीर्ष, संवत्-२०७६ | नवंबर २०१९

संस्थापक संपादक
स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

पूर्व संपादक
स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

संपादक
त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

प्रबंध संपादक
श्यामसुंदर

संयुक्त संपादक
डॉ. हेमंत कुकरेती

कार्यालय
४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क
एक अंक —₹ ३०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००
विदेश में
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

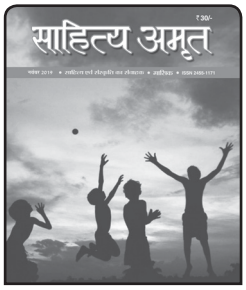

इस अंक में

संपादकीय
ह्यूस्टन में 'हाऊडी मोदी' कार्यक्रम ४

प्रतिस्मृति
गोपाल की बुद्धि/ *विष्णु प्रभाकर* १०

आलेख
गुरुनानक का जीवन-दर्शन/ *रमेश नैयर* १२
प्रेमचंद : आधी शताब्दी की शोध-यात्रा/ *कमल किशोर गोयनका* १६
श्रीगुरुनानक देव के जीवन के प्रेरणास्पद प्रसंग/ *मनमोहन गुप्ता* ४२

कहानी
मेरी बेटियाँ/ *नरेंद्र कोहली* १४
पानी की तलाश/ प्रमोद कुमार अग्रवाल ३०
मातृ रूपेण संस्थिता/ *रश्मि कुमार* ४६
हृदय परिवर्तन/ *राकेश भ्रमर* ५६

बाल-लघुकथा
बीज की आत्मकथा/ *प्रेम किशोर 'पटाखा'* २२
नन्हीं चींटी/ *प्रेम किशोर 'पटाखा'* ५०

बाल-कविता
नानी बड़ी सयानी/ *शिवचरण सरोहा* ३७
किस्सा मीठी भूल का/ *यश मालवीय* ४५
तन पे धोती, सिर पे चोटी/ *हरीश कुमार 'अमित'* ६८
बाल अंत्याक्षरी गीत/ *होड़िल सिंह 'मधुर'* ७४
नाक/ *वंदना मुकेश* ७५

कविता
यों नहीं मैला करो वातावरण को/ *सुशीला शर्मा* ४०
अनुभूति/ *माला कपूर* ४१

संस्मरण
यादों में बचपन, जो मुझमें अब भी साँस लेता है/ *प्रकाश मनु* २४

स्मरण
इलाहाबाद के माधव शुक्ल/ *हेरंब चतुर्वेदी* ३४

राम झरोखे बैठ के
एक श्रेष्ठ सैक्युलर सांसद/ *गोपाल चतुर्वेदी* ३८

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व
शोलापुर/ *बन्यामिन* ६२

व्यंग्य
भय बिनु होइ न प्रीति/ *विनोद शंकर गुप्त* ६६

साहित्य का विश्व परिपार्श्व
राजा लुई और विवाहित पुरुष/ *मैरी टेल्स* ६९

ललित-निबंध
एक नदी जीजी के गाँव की/ *नर्मदा प्रसाद सिसोदिया* ५२

यात्रा-संस्मरण
बेंगलुरु में बीस दिन/ *गोविंद सेन* ७०

बाल-संसार
कहानी रुपए और सिक्कों के जन्म की/ *कुलभूषण सोनी* ५१

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७६
वर्ग-पहेली ७७
साहित्यिक गतिविधियाँ ७८

संपादकीय

ह्यूस्टन में `हाऊडी मोदी' कार्यक्रम

'हाऊडी मोदी' का अमेरिका के ह्यूस्टन में आयोजन अपने आपमें एक उल्लेखनीय उपलब्धि है। इसको 'एक व्यक्ति को महिमामंडित करने का प्रयास' कहकर नकारा नहीं जा सकता है। प्रधानमंत्री मोदी ने स्वयं बार-बार इस बात को उजागर किया है कि यह उनके पीछे १३० करोड़ भारतीयों का जो समर्थन है, उसका सम्मान है। जिस प्रकार नरेंद्र मोदी ने विदेशों में रहनेवाले भारतीय मूल के निवासी, विदेशों में कार्यरत भारतीय नागरिक और अधिकतर भारतीय मूल के वे लोग, जो अब अन्य देशों के नागरिक हैं, उनको भारत की समस्याओं से जोड़ने की कोशिश की है और ऐसा वे निरंतर कर रहे हैं। लेकिन पहले ऐसे जोश के साथ कभी नहीं हुआ। वे लोग काफी समर्थ हैं, उन्होंने अपने परिश्रम व मेधा से वहाँ के समाज में एक स्थान बनाया है। उनकी भी आकांक्षा तो रहती ही है कि किसी प्रकार उनका संबंध उनकी मूल संस्कृति से जुड़ा रहे। उनको भी यह भान होता है कि उनका अपना मूल देश, जहाँ से वे या उनके वंशज आए हैं, उनको अपना मानता है तथा उनके महत्त्व को स्वीकार करता है। अपनी जड़ों से जुड़ने की एक आंतरिक इच्छा सभी की रहती ही है। नरेंद्र मोदी ने इस मानसिकता, भावना को समझा है। वे देशहित में इसका उपयोग करने की कोशिश करते हैं। वे सब लोग एक प्रकार से भारत के अनौपचारिक राजदूत की तरह काम कर सकते हैं। भारत की समस्याओं को ठीक ढंग से समझकर आवश्यकतानुसार उनको प्रस्तुत कर सकते हैं। वे एक लॉबी का भी काम कर सकते हैं। भारत की नीतियों के विषय में जो भ्रांतियाँ पैदा की जाती हैं, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उनका निराकरण कर सकते हैं। भारत के दूतावास के काम में सहयोग दे सकते हैं। यह सब तभी संभव होता है, जब उनसे विचारों का आदान-प्रदान लगातार होता रहे। उनको भी गर्व होता है, जब भारत का प्रधानमंत्री उनसे मिलता है, उद्‌बोधन करता है। एक विश्वास का सूत्र निर्मित होता है। इसीलिए प्रधानमंत्री मोदी जहाँ भी जाते हैं, भारतीय मूल के व्यक्तियों से संपर्क को महत्त्व देते हैं, उन्हें जानकारी भी देते हैं कि भारत कैसे बदल रहा है, किस तरह उन्नति कर रहा है और आगे की क्या संभावनाएँ हैं।

ह्यूस्टन का आयोजन स्थानीय व्यक्तियों और संस्थाओं ने आयोजित किया। आयोजन अत्यंत शानदार रहा। स्टेडियम में पचास हजार से अधिक लोगों की उपस्थिति रही। रंग-बिरंगे सांस्कृतिक कार्यक्रम हुए। माँ भारती की विविधता तथा भव्यता का प्रदर्शन हुआ। एक अतीव उत्साह और हर्ष का वातावरण बना। प्रधानमंत्री मोदी ने अपने उद्‌बोधन में भारत के भविष्य, नीतियों, कार्यक्रमों आदि अनेक पक्षों की चर्चा की, जिसे श्रोताओं ने बहुत ध्यान से सुना। पूरे विश्व का ध्यान भी इस आयोजन की ओर गया। उनको भी भारत की उपलब्धियों, बहुमुखी क्षमता और संभावनाओं का एहसास हुआ। अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप आयोजन में सम्मिलित हुए। अमेरिका के दोनों दलों, रिपब्लिकन और डेमोक्रेट, के कई सदस्य भी उपस्थित हुए। उन्होंने भी अपने विचार रखे। ये सब बातें भारत की उभरती हुई शक्ति को रेखांकित करती हैं। भारत की नीति तो सब देशों से आत्मसम्मान व बराबरी के साथ दोस्ती और भाईचारे के संबंध बनाने की है। ह्यूस्टन के समारोह के बारे में पाकिस्तान ने बहुत कुप्रचार किया, पर उसका कोई असर नहीं हुआ। भारत में कुछ दलों ने भी आलोचना की। आशा थी कि राष्ट्रपति ट्रंप, भारत की जो व्यापार संबंधी करों की कठिनाइयाँ हैं, उनके बारे में कुछ कहेंगे, पर वह नहीं हुआ। आयोजन भारतीय मूल के लोगों ने किया था। इसका उद्‌देश्य किसी सौदेबाजी का नहीं था। भारत और अमेरिका के बीच जो भी मतभेद हैं, उनके समाधान के दूसरे फोरम हैं।

यह भी ध्यान देने की बात है कि संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल एसेंबली में पाकिस्तानी प्रधानमंत्री इमरान खान ने अनुच्छेद ३७० और जम्मू-कश्मीर के विशेष दर्जे को निरस्त करने और दो केंद्र शासित प्रदेशों में विभक्त करने की बड़े कटु व अभद्र शब्दों में आलोचना की। अपने नियत समय से अधिक बोलते रहे। उनकी अनर्गल बातों का प्रधानमंत्री ने कोई संज्ञान ही नहीं लिया। उनका सकारात्मक भाषण तो विश्व के सामने उपस्थित खतरों और समस्याओं पर केंद्रित था। जम्मू-कश्मीर भारत का आंतरिक मामला है। अंतरराष्ट्रीय फोरम पर इसकी चर्चा बेमानी है। वैसे पहले भी भारतीय राजनयिक पाकिस्तान के कुतर्कों का समुचित उत्तर दे चुके हैं। अपने दौरे में भारत के विदेश मंत्री भी इस विषय में भारत के दृष्टिकोण को अन्य देशों के समक्ष स्पष्ट कर चुके हैं। प्रधानमंत्री मोदी भी अपने अनौपचारिक विचार-विमर्श में अनेक देशों के राष्ट्राध्यक्ष एवं प्रधानमंत्रियों को स्थिति से अवगत कराते रहे हैं। इमरान की झुँझलाहट ने बकवास का रूप ले लिया। उन्हें मानना पड़ा कि पाकिस्तान की बात अन्य देश नहीं सुन रहे हैं। उन्होंने आणविक युद्ध की संभावना का जिक्र किया। तरह-तरह के अपशब्द प्रधानमंत्री मोदी के लिए कहे। यह उनके संस्कारों का ही सूचक है। अधिकतर देश भारत के दृष्टिकोण को समझते हैं। केवल टर्की और मलेशिया के प्रधानमंत्री ने भारत के जम्मू-कश्मीर विषयक कदम की आलोचना की। इसका उत्तर भारत ने दे दिया। कुर्दों के विरुद्ध टर्की

की कारवाई पर भारत ने टिप्पणी की। भारत आवश्यकतानुसार और कारवाई करेगा। मलेशिया के प्रधानमंत्री का भाषण आश्चर्यजनक था। उनसे प्रधानमंत्री मोदी की बातचीत हो चुकी थी। भारत मलेशिया के पाम ऑयल का सबसे बड़ा खरीददार है। शायद भारत के लिए अब यह संभव न हो। कुछ और कदम भी उठाए जा सकते हैं, जिसका मलेशिया की अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल असर पड़ेगा। जहाँ तक चीन का प्रश्न है, वह तो पाकिस्तान को अच्छे और बुरे दोनों समय का दोस्त मानता है। चीन भारत को न्यूक्लियर सप्लायर ग्रुप में शामिल करने का विरोध करता है। सुरक्षा परिषद् में भारत को स्थायी सदस्यता मिले, चीन इसका भी विरोधी है। हालाँकि भारत ने ही सबसे पहले चीन को सुरक्षा परिषद् की सदस्यता की पेशकश की थी।

इसी परिप्रेक्ष्य में हमें चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की मलप्पुरम में हुई अनौपचारिक वार्त्ता को देखना होगा। एक बड़े पड़ोसी देश से सहयोग और समझौते के रास्ते तो हमेशा तलाश करने होंगे। यह अंतरराष्ट्रीय कूटनीति की माँग है। साथ ही सतर्कता एक राष्ट्रीय कर्तव्य है।

मलप्पुरम में राष्ट्रपति शी का भव्य आतिथ्य

बुहान के बाद दूसरी अनौपचारिक बैठक प्रधानमंत्री मोदी और राष्ट्रपति शी के बीच मलप्पुरम में हुई। बुहान की सद्भावना को बरकरार रखना और बढ़ाना भी आवश्यक है। चीन के साथ अनेक विषयों पर मतभेद भी हुए। मलप्पुरम एक प्राचीन ऐतिहासिक दर्शनीय स्थल है। प्रधानमंत्री मोदी ने राष्ट्रपति शी का बड़े उत्साह से स्वागत किया, मेहमानदारी की। वे स्वयं अपने अतिथि को मलप्पुरम के महत्त्व को बतलाने के लिए साथ ले गए। प्रधानमंत्री मोदी ने तमिलनाडु की वेष्ठि पहनी हुई थी। उनको कहाँ क्या कैसे वस्त्र पहनने चाहिए, इसका बड़ा भान या समझ है। यह सब टी.वी. पर दिखाया गया और समाचार-पत्रों में भी आया। इस अनौपचारिक बैठक में प्रयास यह था कि सहअस्तित्व व सहयोग के स्तर को और ऊपर उठाया जाए। मतभेदों को दूर करते हुए बातचीत में जम्मू-कश्मीर का मसला नहीं उठाया गया। सबसे महत्त्वपूर्ण निर्णय था एक नई व्यवस्था की स्थापना करना, जो व्यापार एवं निवेश के मामलों को सुलझा सके। आतंकवाद के विषय में बातचीत हुई। चीन ने भारत को आश्वासन दिया कि बढ़ते हुए व्यापारिक असंतुलन को कम किया जाएगा। भारत का निर्यात किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है, इस पर बातचीत हुई। दोनों देशों के प्रतिनिधिमंडलों की अलग से बैठकें हुईं। भारत के प्रतिनिधिमंडल में राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल और विदेश मंत्री एस. जयशंकर प्रमुख थे। मोदी और शी के बीच सुरक्षा सहयोग के बारे में बातचीत हुई। बैठक बड़े सौहार्दपूर्ण और आशावाद के वातावरण में संपन्न हुई। प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि यह बैठक चीन और भारत के संबंधों में एक नए युग की प्रवर्तक होगी। शी ने कहा कि बातचीत खुले दिल से हुई। २०२० का वर्ष भारत और चीन के बीच सांस्कृतिक एवं 'पीपुल टू पीपुल' अर्थात् जन-जन के बीच का कहा जाएगा। तब भारत अपना ७५वाँ स्वतंत्रता दिवस मनाएगा, साथ ही चीन भी विदेशी प्रभाव से मुक्त रिपब्लिक ऑफ चाइना के स्थापना की ७०वीं जयंती को रेखांकित करेगा। यह कथन 'अगली शताब्दी एशिया की शताब्दी कही जाएगी' तभी संभव होगा, जब एशिया के दो देश, जिनकी अति प्राचीन सभ्यताएँ हैं, सहयोग-सहकार एवं अंतरराष्ट्रीय नियमों के अनुसार व्यवहार करेंगे।

विश्वव्यापी मंदी और भारत

देश मंदी के दौरे से गुजर रहा है। यह मंदी विश्वव्यापी है। कम या अधिक सभी देशों के सामने यह समस्या है। विश्व में भारत पाँचवीं या चौथी बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में उभर रहा है। इसीलिए हमारे लिए यह एक चिंता का विषय है। प्रधानमंत्री मोदी ने देश के समाने तीन ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था का लक्ष्य रखा है। इसे प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि हर क्षेत्र का सहयोग मिले। बेरोजगारी, किसानों के कष्ट, अन्य समस्याएँ पिछले पाँच वर्ष में ही पैदा नहीं हुई हैं। सरकार अपनी अनेक योजनाओं द्वारा उनके निराकरण के लिए प्रयत्नशील है, ताकि रोजगार के नए-नए मार्ग निकल सकें। अनुभव के बाद उनमें जो खामियाँ हैं, उनको दूर करने की भी चेष्टा हो रही है। जहाँ तक देश के आर्थिक मूलभूत तत्त्वों की बात है, वे पूर्णतया सुरक्षित हैं। इस बात को क्षेत्रीय और अंतरराष्ट्रीय आर्थिक संगठन भी मानते हैं और उनका भी आकलन है कि भारत की आर्थिक प्रगति एक वर्ष बाद पुन: गति पकड़ेगी। प्रधानमंत्री ने परिवार नियोजन का जो प्रश्न उठाया है, अधिकतर राजनीतिक दल आपातकाल के अनुभव के बाद से उससे कतराते रहे हैं। किंतु यह एक समस्या है, जिसका सामना संवेदनशीलता और सुविचारित ढंग से करना होगा। इसमें राज्य सरकारों की भूमिका अहम है। पॉपुलेशन मिशन की स्थापना वाजपेयीजी की सरकार के समय की गई थी, पर वह अपने लक्ष्य-प्राप्ति में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त नहीं कर पाई है। इस पर पुनर्विचार करना होगा। केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश आदि ने कैसे जनसंख्या नियंत्रण में सफलता प्राप्त की है, यह हिंदीभाषी प्रदेशों की सरकारों को गंभीरता से समझकर उनसे नसीहत लेनी चाहिए।

मंदी से निपटने के लिए विभिन्न क्षेत्रों की समस्याओं के अध्ययन के पश्चात्, वहाँ के भागीदारों और स्टेकहोल्डर्स से विचार-विमर्श कर वित्त मंत्री नए-नए कार्यक्रमों और सुविधाओं की व्यवस्था कर रही हैं। बहुत सी सुविधाएँ उद्योग समूहों को दी जा रही हैं। कर आदि में छूट दी गई है, जो मानसिक बाधा पैदा कर रहे थे। भारत के बजट को 'गैंबल इन मानसून' कहा जाता है, अर्थात् मानसून कैसा है, उस पर आर्थिक व्यवस्था की गति निर्भर करती है। इस वर्ष का मानसून बहुत ही विचित्र, अस्थिर रहा है—कहीं बाढ़, कहीं सूखा। यही नहीं, कुछ स्थानों पर दो-दो बार बाढ़ आई। ऐसे प्राकृतिक कोप समय-समय पर आते रहते हैं, उनसे जूझने की तैयारी मजबूत होनी चाहिए। खेद है कि दुर्घटना के समय तो बहुत सक्रियता दिखती है और फिर वही शिथिलता पसर जाती है। यह चक्र चलता रहता है, पर उसके कुप्रभाव से बचने के लिए प्रशासनिक क्षमता विकसित होनी चाहिए।

मंदी की समस्या के समाधान के लिए माँग पक्ष तथा आपूर्ति पक्ष, दोनों की कठिनाइयाँ देखना जरूरी है। सरकार इसके लिए कोशिश कर

रही है। जो माल बनाते हैं, वे क्या चाहते हैं और जहाँ इस माल की खपत होती है, खरीदारों को क्या दिक्कतें हैं, उनको देखना भी जरूरी होता है। सरकार ने यह नीति अपनाई है। रिजर्व बैंक ने ब्याज दरों में कमी की है। मकान बनाने, खरीदने अथवा अन्य वस्तुओं के लिए नए नियम और सुविधाएँ घोषित की हैं। प्रयत्न है कि त्योहारों के इस मौसम में उसमें गतिशीलता आए, माँग और आपूर्ति में संतुलन बैठ सके, यह प्रयोग जारी है।

कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि अर्थव्यवस्था में कुछ बड़े परिवर्तन आने चाहिए, जैसे अनिवेश या डिसइनवेस्टमेंट को बढ़ावा देना चाहिए। बहुत से जो सरकारी उपक्रम हैं, उनको निजी सेक्टर में देना चाहिए। उनका मत है कि सरकार की आर्थिक सुधारों की गति शनैः-शनैः वाली है, जो अधिक कारगर और फायदेमंद नहीं है। हम समझते हैं कि सरकार दोनों रास्तों के समन्वय का प्रयास कर रही है, कहीं धीरे-धीरे और कहीं तेज गति से। कोई भी सरकार नहीं चाहेगी कि ऐसा परिवर्तन एक झटके में हो, जिससे राजनीतिक और आर्थिक अस्थिरता व असंतोष पैदा हो। फिर भी हम समझते हैं कि प्रधानमंत्री मोदी को इस दिशा में और अधिक विचार-विमर्श करना पड़ेगा। बहुत से विशेषज्ञ, जो प्रधानमंत्री के प्रशंसक हैं, जैसे विख्यात अर्थशास्त्री जगदीश भगवती, उनका भी कहना है कि कुछ बड़े कदम उठाए जाने चाहिए, निराशा का कोई प्रश्न नहीं है, क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था के मौलिक तत्त्व सही और मजबूत हैं। इससे देश में विश्वास का वातावरण निर्मित होगा। इस विषय में पत्र-पत्रिकाओं में काफी वाद-विवाद चल रहा है। यह अच्छा है, क्योंकि हर पहलू के विषय में जानने के बाद ही एक उचित निर्णय लिया जा सकता है।

डॉ. स्वामी और उनकी पुस्तक

इस विषय में डॉ. सुब्रमण्यम स्वामी की एक नई पुस्तक 'Reset : Reclaiming India's Economic Legacy' (एलेफ-रूपा, दिल्ली) प्रकाशित हुई है। डॉ. स्वामी अर्थशास्त्र के विद्वान् हैं। उन्होंने हावर्ड में पढ़ाया है। चीन की अर्थव्यवस्था का उनका गहरा अध्ययन है। वे चंद्रशेखर मंत्रिमंडल में मंत्री रहे और आज राज्यसभा के सदस्य हैं। डॉ. स्वामी अपना दृष्टिकोण, अपने विचार स्पष्टता से ही नहीं, कभी-कभी जरूरत से अधिक खरेपन से रखते हैं। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में उन्होंने छह अध्यायों में स्थिति का विश्लेषण किया है और अपने सुझाव रखे हैं। क्यों और कैसे, जो हमारा हक था, हमारी थाती थी, उसको हमने खोया और कैसे प्राप्त किया जा सकता है! भारतीय अर्थव्यवस्था की कमजोरियाँ और भविष्य की संभावनाएँ, दोनों डॉ. स्वामी ने रेखांकित की हैं। पुस्तक विचारोत्तेजक है। यह पुस्तक न केवल अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों को, वरन् नीति-निर्धारकों को भी पढ़नी चाहिए। अपने विचारों और तर्कों को उन्होंने आँकड़ों के साथ प्रस्तुत किया है। यह आवश्यक नहीं है कि उनके विवेचन या उनके सुझावों से हर व्यक्ति शत-प्रतिशत सहमत हो, पर इससे तो इनकार नहीं किया जा सकता है कि अपनी सोच के अनुसार उन्होंने एक विचारणीय दस्तावेज प्रस्तुत किया है। नीति आयोग का ध्यान इस पुस्तक के प्रति आकर्षित होना चाहिए। डॉ. स्वामी के व्यक्तित्व में एक स्वाभाविक अक्खड़पन है, पर अर्थशास्त्र की समस्याओं में उनकी गहरी पैठ है, यह मानना पड़ेगा। उनकी भाषा की तल्खी अथवा कहीं-कहीं विचारों की कटुता के प्रस्तुतीकरण से भ्रमित होने की आवश्यकता नहीं है। पुस्तक की भूमिका में उन्होंने अपनी सोच के संकेत दिए हैं। प्रकाशक एक सामयिक और विचारशील पुस्तक के प्रकाशन के लिए साधुवाद के पात्र हैं।

भ्रष्टाचार और प्रशासनिक क्षमता

हाल ही में समाचार आया है कि स्विस सरकार ने करार के अनुसार भारतीय नागरिकों के खातों की और जानकारी भारत सरकार को दी है। कर-चोरी का पैसा स्विट्जरलैंड के बैंकों में जमा होता रहा है। इन खातों की जाँच-पड़ताल वित्त मंत्रालय कर रहा है, और जानकारी शीघ्र ही सामने आएगी। भ्रष्टाचार, कर-चोरी और मादक वस्तुओं की तस्करी तथा व्यापारियों और अन्य पेशेवरों से डरा-धमकाकर धन वसूलने का अवैध पैसा स्विस बैंकों में जमा होता रहा है। पहले वे उसकी जानकारी नहीं देते थे। अब स्थिति में परिवर्तन आता जान पड़ता है। खाताधारकों में भारत के राजनेताओं, भ्रष्ट अधिकारियों और उद्योगपतियों आदि के नामों की अफवाहें उड़ती रही हैं। सरकार चेष्टा कर रही है, शीर्ष न्यायालय का दबाव भी है और नरेंद्र मोदी सरकार काफी समय से क्रियाशील है, पर संतोषजनक नतीजे नहीं निकल पाए हैं। यह रोग पुराना है। शायद वह अब संभव हो सकेगा।

भ्रष्टाचार तेरे रूप अनेक

भारतीय नागरिकों को कितना धन विदेशी बैंकों में जमा है। इसका आकलन करना कठिन है। अलग-अलग आँकड़े आते हैं। कुछ आँकड़े बहुत बढ़ा-चढ़ाकर भी दिए गए हैं। जो भी हो, यह तो स्पष्ट है कि देश की आर्थिक व्यवस्था पर इसका हानिकर प्रभाव पड़ता है। यही नहीं, साधारण जनता अपने कर आदि का कानून और नियमों के अनुसार भुगतान करती है, इससे उनका सरकार के प्रति मोहभंग होता है। यह लोकतंत्र के लिए गंभीर समस्या बन सकती है।

इस प्रकार के प्रकरणों में प्रशासन की कार्यक्षमता पर भी प्रश्न उठते हैं। राजनेताओं, अधिकारियों, उद्योगपतियों एवं व्यापारियों तथा अपराधियों की साँठ-गाँठ और मिलीभगत की भी चर्चा प्रायः होती है। जैसे-जैसे इलाज की कोशिश होती है, बीमारी बढ़ती जाती है। इसका बुरा प्रभाव है कि आम जन व सरकार के बीच अविश्वास की खाई और चौड़ी होती जाती है। आवाज उठती है, सभी चोर हैं। समाचार मिलते हैं कि भ्रष्टाचार पंचायतों तक पहुँच गया है। एक ओर माँग कि अधिकारों का विकेंद्रीकरण हो, दूसरी ओर भ्रष्टाचार का विकेंद्रीकरण। न्यायपालिका, जिसका हम सब अत्यंत आदर करते हैं, वह भी अछूती नहीं रही। सर्वोच्च न्यायालय के कुछ पूर्व न्यायाधीशों के नाम सर्वोच्च न्यायालय को दिए गए थे। वे नाम कुछ पत्रिकाओं में भी आए थे, पर उसके विषय में कोई जानकारी नहीं कि आगे हुआ क्या? उड़ीसा के एक निवर्तमान जज एक मेडिकल कॉलेज की अनुचित सहायता करने की कोशिश में अब कानून के शिकंजे में हैं। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश से शिकायतों के कारण उनका मुकदमे

सुनने का अधिकार मुख्य न्यायाधीश ने वापस ले लिया। अब शायद उनके खिलाफ विधिवत् जाँच हो रही है।

कुछ न्यायाधीशों ने इस्तीफा देकर अपने बचने का रास्ता निकाल लिया। सेवानिवृत्ति के बाद की सुविधाएँ तो उन्हें मिलती ही रहेंगी। ऐसे और बहुत से उदाहरण हैं। किंतु अभी भी जनता न्यायालय के प्रति आशा भरी निगाहों से देखती है, क्योंकि न्याय का वही अंतिम सहारा है। केंद्र सरकार ने भी कुछ आई.ए.एस. और आई.पी.एस. अधिकारियों को संविधान के एक विशेष अनुच्छेद के तहत सरकारी सेवा से निकाल दिया है। सरकार ने दो-तीन दर्जन इनकम टैक्स, एक्साइज और कस्टम (सीमा शुल्क) विभाग के अधिकारियों के खिलाफ काररवाई की है। यह अच्छा कदम है। साधारण जनता को प्रतीत होता है कि सरकार की यह काररवाई उनकी शंकाओं की पुष्टि करती है। ऐसी नकारात्मक सोच के निराकरण की आवश्यकता है।

इसी मास अक्तूबर में दक्षिण अफ्रीका में भ्रष्टाचार का एक बड़ा नेटवर्क चलाने वाले भारतीय मूल के तीन बंधुओं—अजय गुप्ता, अतुल गुप्ता, रजिश गुप्ता और उनके सहयोगी सलीम इसा पर पाबंदी लगाई है। दक्षिण अफ्रीका के राष्ट्राध्यक्ष को तो इनके साथ भ्रष्टाचार में संलिप्त होने के समाचार आते ही जनांदोलन के कारण इस्तीफा देना पड़ा। अब गुप्ता बंधुओं ने अपना कारोबार दुबई में स्थानांतरित कर लिया है। ऐसे लोगों के कारण भारतीय व्यापारी और उद्योगपति, जो नियमानुसार काम करते हैं, व्यर्थ में शंका के घेरे में आते हैं। ये गुप्ता बंधु कुछ समय पहले परिवार में बड़ी शान-शौकत से दो शादियाँ करने के कारण सुर्खियों में थे। सब कानून और नियमों को तोड़कर विवाह-कार्यक्रम उत्तराखंड में संपन्न हुआ था। पर्यावरण का पूरी तरह निषेध किया गया। उनके वैवाहिक कार्यक्रम के कारण प्रदूषण बुरी तरह बढ़ा। अपने पैसे के रुआब अथवा राजनेताओं और अधिकारियों की साँठ-गाँठ के कारण उनको ऐसे कार्यक्रम करने की इजाजत मिली, जो प्रतिबंधित थे। स्थानीय लोगों ने जब आंदोलन किया, तब प्रशासन की नींद टूटी। कुछ नोटिस दिए गए, जुरमाने देने के कुछ आदेश जिलाधिकारी तथा अन्य संबंधित अधिकारियों ने जारी किए। आगे हुआ क्या, कुछ पता नहीं।

उत्तराखंड पर्यावरण की दृष्टि से अत्यंत संवेदनशील है, किंतु जब शादी का आयोजन हो रहा था, तब अधिकारी सो रहे थे या कानून और नियमों की अवहेलना की ओर से आँखे मूँदकर शादी में मालपुआ खा रहे थे। जैसे सत्ता के मद में चूर सांसद या विधायक अपने को कानून से ऊपर समझने लगते हैं, उसी प्रकार धन के मद में चूर गुप्ता बंधु जैसे लोग अपने को कानून से ऊपर मानते हैं। वे समझते हैं कि सबकुछ और हर कोई पैसे से खरीदा जा सकता है। इस भ्रम को तोड़ने की आवश्यकता है। सरकार और अधिकारियों का तो यह सीधा दायित्व है, लेकिन समाज को ऐसे लोगों की प्रतारणा करनी होगी। जहाँ गरीब बच्चे और माताएँ कुपोषण के शिकार हों, गाँवों और दूरदराज के क्षेत्रों में समुचित चिकित्सा का अभाव हो, वहाँ इस प्रकार का दिखावे का खानपान एक पाप है, एक घृणित अपराध है। प्रधानमंत्री मोदी की स्वच्छता, प्रदूषण रोकने, खाद्य पदार्थ बरबाद न हों, इन सब अपीलों की अवमानना, अवहेलना है। खुशी के अवसर पर पहले लोग दान देते थे, गरीबों को खाना खिलाते थे। आज इस प्रकार के धनवान अपना झूठा बड़प्पन दिखाने और नियमों के उल्लंघन को अपना अधिकार मानते हैं। जब कानून स्वयं को असहाय महसूस करने लगे तो जन-जागरण और जन-आंदोलन का ही मार्ग दिखाई देता है।

कितना नैराश्य का वातावरण दिखाई देता है, जब पढ़ते हैं कि फोर्टिस हेल्थ केयर के पूर्व प्रवर्तक शिवेंदर सिंह एवं तीन अन्य व्यक्तियों को रेलिगेयर फिनवेस्ट लिमिटेड के कोष में २३९७ करोड़ के कथित हेराफेरी के आरोप में दिल्ली पुलिस की अपराध शाखा ने गिरफ्तार किया है। साथ ही शिवेंदर के बड़े भाई मालवेंदर सिंह, जो फरार चल रहे हैं, उनके खिलाफ 'लुक आउट नोटिस' जारी था, वह भी पकड़े गए हैं। पंजाब-महाराष्ट्र को-ऑपरेटिव बैंक के घोटाले के समाचार आए हैं। एक एच.डी.आई.एल. नामक कंपनी को कर्ज दिया गया। दोनों के ऑडिटर एक थे। ऐसे में हेराफेरी का काम आसान हो जाता है। पी.एम.सी. के उच्चाधिकारी जेल में हैं और पी.एम.सी. के उपभोक्ता सकते में। पी.सी.एम. के तीन खातेधारकों की सदमे में हृदयाघात से मृत्यु हो गई। एच.डी.आई.एल. के अध्यक्ष के बारे में टीवी और अखबारों में तसवीरें आई थीं। उनमें एक थी समंदर पर बना दो एकड़ में विशाल मकान, जिसमें बाईस कमरे हैं। समझा जा सकता है कि कैसे आमजन के पैसे का दुरुपयोग होता है और उनके विश्वास को धक्का लगता है। कुछ राजनेताओं के नाम भी आए हैं, पर उनका कहना है कि यह राजनीति से प्रेरित है। राजनीति से प्रेरित वाक्य तो राजनीतिज्ञों का कवच बन गया है।

गाजियाबाद में एक जमीन के आवंटन के घोटाले में करीब ३७ छोटे-बड़े अधिकारी चिह्नित किए गए हैं, जिनमें कुछ रिटायर हो चुके हैं। अधिकतर अधिकारी इंजीनियर हैं, जिनकी पढ़ाई पर जनता का धन व्यय होता है, इस आशा से कि वे देश के विकास में साझेदार होंगे। इसी प्रकार का प्रकरण नोएडा के शाहबेरी का है, जहाँ १७ जुलाई, २०१८ में निर्माणाधीन इमारत के गिरने से नौ लोगों की मौत हो गई। इसके निर्माण में न ग्रेटर नोएडा प्राधिकरण से मंजूरी ली गई और न सुरक्षा मानकों का ध्यान रखा गया। अब इन बिल्डरों की ३० करोड़ की संपत्ति कुर्क की गई है। केरल में भी शीर्ष न्यायालय के आदेश और बार-बार रुग्णता प्रकट करने के बाद वे इमारतें गिराई जा रही हैं, जो समुद्री किनारे के नियंत्रक नियमों की अनदेखी करके बनाई गई थीं। आखिर ऐसी नौबत आती क्यों है? ऐसे मामलों का जिक्र करना व्यर्थ है। सवाल यह है कि जब अनधिकृत रूप से मकान बनते हैं, सरकारी जमीन पर नाजायज कब्जा होता है, तब संबंधित अधिकारी क्यों हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहते हैं। यह सब यकायक नहीं हो जाता है। इसीलिए सवाल खड़ा होता है—शासन की अक्षमता या गठबंधन का। निगरानी का भी अभाव है। यह भी स्मरण रखना है कि अदालतों के आदेश से या स्वयं प्रशासन के द्वारा जब तोड़-फोड़ होती है तो जन-संपत्ति का ही नुकसान होता है। दिल्ली में करीब ५० सांसदों ने नोटिसों के बाद भी सरकारी आवास खाली नहीं किए। कुछ सांसदों को अतिथि के नाते फ्लैट दिए गए थे, वे भी डरे हुए

हैं। सरकार को मजबूरी में पुलिस द्वारा ये मकान खाली कराने पड़ रहे हैं। इससे सांसदों की छवि कैसी बनेगी, इन लोगों को कोई चिंता नहीं है। बेशर्मी ही इनका सहारा है। आश्चर्यजनक यह है कि कमलनाथ, जो अब मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री हैं और पूर्व मुख्यमंत्री अखिलेश यादव की पत्नी, जिनके पास मकानों की, सुविधाओं की कमी नहीं है, उन्होंने भी एक मास के अंदर अपने दिल्ली के निवास-स्थान खाली नहीं किए। खाली तब किए जब नोटिस मिले और जबरदस्ती पुलिस द्वारा खाली कराने की धमकी प्राप्त हुई। आज के सांसद होटलों में या अन्य स्थानों में ठहरे हुए हैं। कैसी नैतिकता है ऐसे लोगों की? राज्य सरकारों और केंद्र सरकार को भ्रष्टाचार की समस्या से निपटने के लिए कमर कसनी पड़ेगी। अधिकारियों की लापरवाही, अक्षमता और मिलीभगत पर नकेल लगानी होगी। समय-समय पर निगरानी की व्यवस्था करनी होगी। इन मामलों की जाँच में शिथिलता नहीं होनी चाहिए। साथ-ही-साथ कोई भी पार्टी हो, राजनीतिक हस्तक्षेप रोकने के लिए आत्मनियंत्रण करना होगा। विशेषज्ञों और प्रशासन में सुधार के सुझाव समय-समय पर अनेक कमीशनों ने दिए हैं। अभाव है तो राजनीतिक इच्छाशक्ति का, सुझावों का नहीं। अगर राजनीतिक स्तर पर इच्छाशक्ति दृढ़ होगी, तभी इस दिशा में सार्थक कार्यान्वयन संभव है। वैसे रामभरोसे तो हम हैं ही।

राजनाथ सिंह और राजनीति

राजनाथ सिंह का स्थान आज देश के प्रमुख राजनेताओं में है। राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की पहली सरकार में वे गृहमंत्री रहे और अब वे रक्षा मंत्री हैं। दोनों मंत्रालय अत्यंत संवेदनशील हैं और एक-दूसरे के पूरक, जहाँ तक देश की शांति-व्यवस्था और सीमाओं की सुरक्षा का प्रश्न है, राजनाथ सिंह का प्रोटोकॉल अथवा कैबिनेट की वरिष्ठता के क्रम में प्रधानमंत्री के उपरांत दूसरा स्थान है। ऐसे राजनेता के व्यक्तित्व और पृष्ठभूमि जानने के विषय में उत्सुकता स्वाभाविक है। यह संतोष का विषय है कि पहली बार राजनाथ सिंह की अंग्रेजी में लिखित विस्तृत जीवनी प्रकाशित हुई है। पुस्तक के लेखक हैं गौतम चिंतामणि और प्रकाशक हैं पेंगुइन रैंडम हाउस। लेखक मुख्यत: फिल्म हिस्टोरियन हैं और इस क्षेत्र में उनकी कई पुस्तकें हैं। उससे हटकर पहली बार लेखक ने एक राजनीतिज्ञ की जीवनी लिखने का प्रयास किया है। वे सी.वाई. चिंतामणि के प्रपौत्र हैं, जो अपने समय के प्रसिद्ध लेखक व पत्रकार रहे। पं. मालवीय एवं मोतीलाल नेहरू द्वारा स्थापित इलाहाबाद (अब प्रयागराज) 'द लीडर' पत्र के वे अंत समय तक संपादक रहे। वे कुछ समय संयुक्त प्रांत में शिक्षा मंत्री रहे, पर सरकार से मतभेद होने पर इस्तीफा दे दिया। उनके लेखन की विश्वसनीयता का पता इस बात से चलता है कि श्री सी.वाई. चिंतामणि की टिप्पणियाँ विदेशों के समाचार-पत्रों में भी छपती थीं और ब्रिटिश संसद् में भी उद्धृत होती थीं। वे उदार दल के विशिष्ट नेताओं में से थे। उन्होंने कई पुस्तकों का संपादन किया एवं लिखीं भी।

गौतम चिंतामणि ने अपनी पुस्तक राजनाथ सिंह की जीवनी का नामकरण किया है—'राजनीति', क्योंकि लेखक का मत है कि राजनाथ सिंह की रजानीति मूल्यों से प्रेरित है। वे राजनीति को जनसेवा का साधन मानते हैं, अपने स्वार्थ का नहीं। उनका विश्वास नीति में है, अनीति में नहीं। उनका जन्म एक साधारण किसान राजपूत परिवार में १० जुलाई, १९५१ को मामौरा गाँव में हुआ, जो उस समय वाराणासी जिले में था, अब चंदौली में। उनके पिता रामवदन सिंह एक स्वतंत्रता सेनानी थे। वे प्रतिष्ठावान व आत्मसम्मानी व्यक्ति थे, जिनका आदर जिले भर के लोग करते थे। उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पं. कमलापति त्रिपाठी से उनके बड़े नजदीकी संबंध थे, पर स्वतंत्र भारत में वे राजनीतिक जीवन से अलग हो गए। त्रिपाठीजी साल में एक-दो बार अवश्य उनके यहाँ आते थे। उनके बहुत कोशिश करने पर भी रामवदन सिंह ने राजनीति में भागीदारी स्वीकार नहीं की। उनके तीन पुत्र और चार कन्याएँ थीं।

राजनाथ सिंह की प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई। उनके पिता हर विषय पर जानकारी देते थे। देश के इतिहास, स्वराज संघर्ष, संस्कृति और विरासत के संबंध में विशद जानकारी पिता से प्राप्त हुई। इससे राजनाथ सिंह की अधिकाधिक जानने व समझने की उत्सुकता को बल मिला। अनुशासन और संस्कार तथा सिद्धांतप्रियता के गुण उन्हें अपने पिता से प्राप्त हुए। अपनी माता गुजराती देवी के सबसे कनिष्ठ पुत्र होने के कारण वे विशेष प्रेम, लाड़-दुलार के पात्र रहे। बचपन में काफी स्वच्छंदता से रहने के उपरांत भी वे और उनके भाई-बहन न उच्छृंखल हुए और न किसी प्रकार की बुराइयों के शिकार। माँ-बाप के नैतिक मूल्यों का प्रभाव राजनाथ की जीवनशैली पर अमिट होकर उनका मार्गदर्शक बना।

राजनाथ सिंह एक मेधावी छात्र थे। इंटरमीडिएट की परीक्षा में तीन नंबरों की कमी से प्रथम श्रेणी से वंचित रहे। विज्ञान में रुचि थी। उन्होंने एम.एस-सी. भौतिक-शास्त्र में की और फिर वे पोस्ट ग्रैजुएट कॉलेज, मिरजापुर में शिक्षक बने। स्कूल के दिनों में ही वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा में जाने लगे। गोरखपुर विश्वविद्यालय में शिक्षा ग्रहण करते हुए ए.बी.वी.पी. से जुड़ गए। १९७७ में सावित्री देवी से विवाह हुआ। राजनाथ सिंह के राजनीतिक जीवन पर दृष्टि डालने पर पता चलता है कि हर जगह वे सीढ़ी-दर-सीढ़ी चलते गए। वे न केवल अपने गाँव से जुड़े रहे, बल्कि हर क्षेत्र में राजनाथ ने अपने को जमीनी हकीकत से अवगत रखा। इस प्रकार उनके भविष्य में राजनीतिक जीवन के लिए एक मजबूत पृष्ठभूमि निर्मित होती गई। वे १९६९ में गोरखपुर डिवीजन के संगठन मंत्री; १९७४ में भारतीय जनसंघ मिरजापुर इकाई के जनरल सेक्रेटरी बने। अपनी निष्ठा, कार्यकुशलता, संगठन क्षमता तथा सिद्धांतों के प्रति दृढ़ता के कारण आगे बढ़ते रहे। आपातकाल में वे मिरजापुर में गिरफ्तार हुए तो उन्हें नैनी जेल में रखा गया। उनकी ममतामयी माँ के फिर उन्हें दर्शन नहीं हो सके, चूँकि राजनाथ सिंह ने पैरोल की शर्तों पर रिहा होने से इनकार कर दिया था। बहुत कम राजनेताओं के जीवन में अनुभवों की विविधता दिखाई देती है। वे जिले से राज्य स्तर, राज्य स्तर से अखिल भारतीय स्तर पर पहुँचे, ए.बी.वी.पी. में भी ऐसा हुआ और इस प्रकार उनका परिचय-क्षेत्र भी विस्तृत होता रहा। एक कठिन समय में जब

उत्तर प्रदेश के शासन में एक शिथिलता आ गई थी और अगले चुनाव आने वाले थे, तब भाजपा हाईकमान ने राजनाथ सिंह को उत्तर प्रदेश का मुख्यमंत्री बनाया। केंद्र में वाजपेयीजी के मंत्रिमंडल में कई मंत्रालयों के मंत्री रहे और सफलतापूर्वक कार्य किया। उनको एक शिकायत यही रही कि जल्दी-जल्दी परिवर्तनों के कारण हाथ में लिये गए कार्यक्रमों और पहल की सफलता का वे स्वयं आकलन न कर सके। इसको समझने के लिए पूरी पुस्तक पढ़ना जरूरी है। विस्तार में यहाँ चर्चा संभव नहीं है। इसी प्रकार दो बार अत्यंत विवादास्पद समय में उन्हें भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष का पद सँभालना पड़ा, एक बार आडवाणीजी के बाद और दूसरी बार नितिन गडकरी के बाद। अपनी सक्रियता, योग्यता और परिश्रम के बल पर राजनाथ सिंह का अपना स्थान राजनीतिक क्षेत्र में स्वयमेव बनता गया। २०१४ के आम चुनाव के समय भी कार्यकर्ताओं की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए कि अगर एनडीए सरकार बनाने में सफल हो तो प्रधानमंत्री पद के लिए किसे प्रस्तावित किया जाए, यह एक यक्षप्रश्न था। राजनाथ सिंह ने अनेक कठिनाइयों के बीच शालीनता और चातुर्य से इस प्रश्न के समाधान का रास्ता निकाला। यह सब पुस्तक में विस्तार से रेखांकित है। राजनाथ सिंह मृदुभाषी हैं, किंतु उनकी सोच में स्पष्टता है और वाणी में संतुलन। उनकी सफलता का यह एक बड़ा कारण है।

पिछले चार-पाँच दशकों की भारतीय राजनीति के परिप्रेक्ष्य में उत्तर प्रदेश की रजानीति एवं भाजपा के अपने उतार-चढ़ाव तथा निष्कर्षों के बीच में गौतम चिंतामणि द्वारा लिखित राजनाथ की जीवनी का अपना महत्त्व है। एक विशाल परिदृश्य में एक सौम्य, किंतु कार्यकुशल तथा दूरदृष्टि वाले व्यक्ति को उभरता देख सकते हैं। एक व्यक्ति के चित्रांकन के साथ-साथ भारतीय तथा उत्तर प्रदेश की रजानीति का भी चित्रांकन है, विशेषतया भाजपा के संदर्भ में। समकालीन भारतीय राजनीति को समझने के लिए यह पुस्तक उपयोगी है। यह उत्तम होगा, यदि इस ग्रंथ का अनुवाद शीघ्र ही हिंदी तथा अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में आए, ताकि अधिक-से-अधिक लोग राजनाथ सिंह के व्यक्तित्व और कृतित्व के संबंध में सही जानकारी प्राप्त कर सकें।

कुछ पत्र-पत्रिकाओं की चर्चा

लोकतंत्र का 'पाँचवाँ स्तंभ' पिछले तेरह वर्षों से प्रकाशित हो रही है। संस्थापक संपादक श्रीमती मृदुला सिन्हा थीं। वे आज गोवा की राज्यपाल हैं। उनको जनजीवन का लंबा अनुभव है। वे एक जानी-मानी साहित्यकार, उपन्यासकार, कहानीकार और विचारक हैं। उन्होंने जो मानक 'पाँचवाँ स्तंभ' के लिए रखे थे, उनका अनुसरण निरंतर हो रहा है; यह प्रसन्नता का विषय है। यह तेरह वर्षों से प्रकाशित हो रही है। साहित्य और संस्कृति के अतिरिक्त इसमें जनता के सरोकारों के विषय में लेख प्रकाशित होते हैं। अक्तूबर २०१९ का अंक महात्मा गांधी की १५०वीं जयंती को समर्पित है। गांधीजी के जीवन, उनकी सोच और उनके कार्यकलापों के विषय में अत्यंत पठनीय सामग्री संगृहीत है।

'यथावत' मासिक पत्रिका का १६-३० सितंबर का अंक हमारे सामने है। रामबहादुर राय का आलेख 'मील का पत्थर-१९३४' कांग्रेस और देश के इतिहास के अनछुए पक्ष को उजागर करता है। 'यथावत' में सभी रचनाएँ स्तरीय रहती हैं। इस अंक में विशेषतया इसरो की उपलब्धियों और चंद्रयान-२ के विषय में प्रचुर सामग्री है। अन्य विषयों के अतिरिक्त, चंद्रयान-२ के विषय में जो लेख हैं, वे जानकारी से भरपूर और स्थायी महत्त्व के हैं। इसरो के लैंडर विक्रम से चाँद पर उतरने से ठीक पहले संपर्क टूट गया, जिससे हतोत्साहित इसरो के अधिकारियों का मनोबल दृढ़ करने के लिए प्रधानमंत्री मोदी का जो उद्‌बोधन था, उसके मुख्य अंश दिए गए हैं। इस स्तंभ में भी उसकी चर्चा की गई थी। प्रधानमंत्री का उद्‌बोधन वैज्ञानिकों और संपूर्ण देश के लिए संजीवनी साबित हुआ। उनके शब्दों 'आज चंद्रमा को छूने की हमारी इच्छाशक्ति और दृढ़ हुई है, संकल्प और प्रबल हुआ है।' ने वैज्ञानिकों में एक नई ऊर्जा, नूतन उत्साह पैदा कर दिया। नैराश्य के बादल छँट गए। यह उनकी प्रेरक क्षमता और प्रत्युत्पन्न संवेदना का एक उदाहरण है।

'आधुनिक साहित्य' त्रैमासिक पत्रिका है, जिसे विश्व हिंदी परिषद् पिछले आठ साल से प्रकाशित कर रही है। यह द्विभाषी भी है। कभी अंग्रेजी के लेख भी छपते हैं। इसमें साहित्य के विषय में सारगर्भित लेख रहते हैं। जुलाई-दिसंबर संयुक्तांक में भी गांधीजी से संबंधित लेख हैं। अन्य अच्छी सामग्री है, विशेषकर भारतीय अंतरराष्ट्रीय संबंध परिषद् के अध्यक्ष विनय सहस्रबुद्धे का साक्षात्कार, जो सोचने के लिए बहुत सारे बिंदु प्रस्तुत करता है। हरेंद्र प्रताप से संपादक ने गांधीवाद के विषय में जो साक्षात्कार लिया, वह भी उत्तम है। 'आधुनिक साहित्य' के इस वर्ष के पिछले दो अंक भी देखने को मिले। हिंदी साहित्य के विद्यार्थियों और शोधकर्ताओं, विशेषतया कॉलेज व विश्वविद्यालय के स्तर पर यह द्विभाषी त्रैमासिक उपयोगी है।

गुरु नानकदेव की ५५०वीं जयंती

इस वर्ष १२ नवंबर को एक महान् आध्यात्मिक विभूति का जन्मदिवस है। पूरे विश्व में, खासकर भारत में विविध आयोजनों की व्यवस्था हो रही है। उनके शांति, समता, सेवा, साधना, संस्कार, सहिष्णुता, विनम्रता और मातृभाव के संदेश की आज संपूर्ण मानव जाति को आवश्यकता है। गुरुनानक देव के चरणों में नमन करते हुए उनके दो वचन उद्धृत करना चाहेंगे। कथनी और करनी के मतभेद के इस युग में उनका कथन कि 'सत्य महान् है, पर उससे महानतर है सत्य के अनुसार जीवनयापन करना।' दूसरा वचन है—'ओ नानक, घास की तरह छोटे रहो, दूसरे पौधे सूख जाएँगे, किंतु घास हरी-भरी रहेगी।' पद, धन और सत्ता के मद में चूर आज के समय में गुरुनानक देव द्वारा विनम्रता का यह सबको संदेश है। श्री लालबहादुर शास्त्री ने अपनी डेस्क पर यह वाक्य लिखकर रखा हुआ था, जो वास्तव में शास्त्रीजी के जीवनदर्शन को प्रदर्शित करता है। काश, इसका मर्म आज हम सब समझ सकें।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)

गोपाल की बुद्धि

● विष्णु प्रभाकर

एक था लड़का। उसका नाम था गोपाल। वह बहुत ही चतुर और समझदार था। एक बार उसकी प्यारी माँ बीमार पड़ी, बहुत बीमार। बहुत दिन हो गए, पर वह अच्छी नहीं हुई। बड़े-बड़े वैद्यों ने देखा, डॉक्टरों ने देखा, हकीमों ने देखा; मगर कुछ न हुआ। गोपाल की माँ अच्छी नहीं हुई। आखिर एक हकीमजी आए। बड़े-बूढ़े, लंबी-लंबी उनकी दाढ़ी, बिलकुल सफेद बाल, पर बड़े समझदार। बहुत देर तक देखने के बाद वे बोले—बीमारी दूर तो हो सकती है, पर इन्हें एक खास तरह के पेड़ की छाल पकाकर देनी होगी। वह पेड़ बहुत दूर बर्फ के पहाड़ों की घाटी में होता है। आजकल वहाँ जाना बड़ा मुश्किल है। भयंकर रास्ते हैं और उनसे भी अधिक भयंकर जानवर वहाँ रहते हैं। जहाँ वह पेड़ है, वहाँ से कुछ पहले बड़े खूँखार भालू रहते हैं। उनसे बचकर जाना बड़ा मुश्किल है। अगर उनसे कोई बचकर चला भी जाए तो आगे चलकर एक शेर रहता है। वह इतना खूँखार है, इतना खूँखार है कि उसके पंजे से कोई आदमी बच नहीं सकता।

यह जानकर कि गोपाल की अम्मा को अच्छा करने की दवा तो है, पर कोई उसे ला नहीं सकता, गोपाल के पिता बहुत दुःखी हुए। यह तो ऐसी ही बात थी कि कोई बच्चों से कहे—देखो बच्चो, मिठाई तो है, पर तुम खा नहीं सकते।

लेकिन गोपाल हिम्मत हारनेवाला नहीं था। कई दिन तक वह इस बारे में सोचता-विचारता रहा। उसने अपने दोस्तों से कहा, ''पुराने जमाने में ऐसी बातें होती थीं, पर आजकल तो दूसरा जमाना है। ऊँ हूँ, मैं वहाँ जाऊँगा और उस पेड़ की छाल लेकर लौटूँगा, कोई बात है। कौन-सी ऐसी जगह है, जहाँ आज आदमी नहीं जा सकता? खतरनाक है तो हुआ करे। वह आदमी ही क्या, जो खतरे से डर जाए!''

कई दोस्तों ने गोपाल की बात का समर्थन किया। एक तो उसे साथ चलने को तैयार भी हो गया। लेकिन उसके पिता ने सुना तो घबरा उठे। किसी भी तरह वे गोपाल को भेजने को तैयार नहीं हुए, पर गोपाल तो इरादे का पक्का था। उसने पिता को समझाया और वह सब सामान भी दिखाया, जो उसने साथ ले जाने के लिए तैयार किया था। उसने यह भी कहा कि पिताजी, अब तो पंद्रह वर्ष के बच्चे शेर का शिकार खेलते हैं।

आखिर किसी तरह पिता को मनाकर गोपाल उस पेड़ की तलाश में चल पड़ा। साथ में उसका दोस्त अमित भी था। दोनों का दिमाग खूब चलता था। पहले वे रेल में बैठे, फिर बस में। आखिर में चालीस मील पैदल का रास्ता था। यह बड़ा तंग रास्ता था, जो बड़े-बड़े ऊँचे पहाड़ों से होकर एक नदी के किनारे-किनारे जाता था। जरा आँख बची कि कई सौ फीट नीचे नदी में जाकर गिरे उस नदी में पत्थर पानी से अधिक थे। पहाड़ी नदियों में पत्थर बहुत होते हैं। पानी थोड़ा होता है, पर बहता बहुत तेज है। सो वहाँ पहुँचकर उन्होंने एक खच्चर लिया। कोई चलने को तैयार नहीं था, पर जब मुँह माँगे दाम मिले तो एक आदमी तैयार हो गया। फिर कुछ लोगों को उनका साहस देखकर उनसे हमदर्दी हो गई थी।

खच्चर लेकर वे आगे बढ़ गए। बढ़ते चले गए, बढ़ते चले गए। उन्होंने बर्फ से लदे तंग रास्ते को पार किया, झूलते पूलों पर से नदी पार उतरे। कहीं-कहीं तो बर्फ के पुल से नदी पार की। चारों ओर आसमान को छूनेवाली बर्फ से ढकी चोटियाँ, घने जंगल, खूँखार जानवर, किसी-किसी दिन तो सारा दिन कुहासा छाया रहे, सूरज के दर्शन ही न हों, आँधी चल पड़े तो आगे न बढ़ने दे। एक दिन के रास्ते में तीन दिन लग जाएँ। पर उन दोनों दोस्तों ने हिम्मत नहीं हारी। खच्चर वाला उन्हें राह बताता जाता था। वह उनसे बहुत खुश था।

आखिर राम-राम करके बीस मील पार कर गए तो भयंकर घाटी में पहुँचे, जहाँ रीछ रहता था। दिन छिप चुका था। बर्फ उड़ रही थी। किसी तरह एक टूटे मकान में उन्होंने डेरा डाला। वे अपने साथ रेडियो और ग्रामोफोन भी ले गए थे। जहाँ कहीं डेरा डालते, वहीं जंगल में मंगल कर देते। यहाँ भी ऐसा ही किया। चाय बनाई, फिर सोने का इंतजाम किया; पर तभी उन्होंने सुना, जैसे रीछ गुर्रा रहा हो। दोनों दोस्त चौंक पड़े। मकान में किवाड़ नहीं थे। उन्होंने तंबू का कपड़ा बाँध रखा था। उसे हटाकर देखा तो दूर कुछ काला-काला-सा चलता दिखाई दिया। बस, गोपाल ने झट कुछ रिकॉर्ड निकाले और ग्रामोफोन पर चढ़ा दिए। अमित ने रेडियो खोल दिया। पक्का गाना हो रहा था। उधर रिकॉर्ड में से शेर की आवाज निकलने लगी, जैसे सचमुच का शेर गरज रहा हो। रीछ मकान के काफी पास आ गया था। गाने की तेज आवाज जो सुनी

तो उचककर पीछे हटा। उधर शेर गुर्रा रहा था, गुर्राए चला जा रहा था। रीछ की जान निकलने लगी। घबराकर पीछे दौड़ा। दोनों दोस्त परदे के पीछे से झाँक रहे थे। बड़े जोर से हँसे।

रीछ कभी पीछे हटता, कभी आगे बढ़ता; कभी नाचता, कभी कूदता; पर जैसे ही आगे बढ़ता कि शेर की दहाड़ सुनाई पड़ी। आखिर यह हुआ कि रीछ तंग आकर भाग गया। वे ऐसे खुश हुए, मानो खजाना मिल गया। पर बेचारों को सारी रात जागना पड़ा, क्योंकि रीछ फिर आया। पता नहीं वही था या कोई दूसरा। शेर की आवाज सुनकर वह भी तीर की तरह भाग गया। गोपाल जोर से हँसकर बोला, डरपोक कहीं का। अमित तो नाचने लगा और खच्चरवाला! उसने तो ऐसा दृश्य कभी देखा ही नहीं था। वह तो हक्का-बक्का रह गया।

जैसे-तैसे सवेरा हुआ। वे फिर आगे बढ़े। शरीर से थक रहे थे, पर मन से बहुत खुश थे। एक मंजिल तय कर ली। लोगों ने डराया था कि रीछ तुम्हें खा जाएगा, लेकिन वह रीछ भी डरकर भाग गया।

आगे रास्ता और भी खराब था। बर्फ भी ज्यादा थी। कहीं-कहीं तो गड्ढों पर बर्फ जम गई थी। पैर फिसलता था। कहीं नीचे उतरना, कहीं ऊपर चढ़ना; कहीं पत्थर, कहीं मिट्टी, कहीं पानी। लेकिन खच्चरवाला अब भी जी-जान से उनकी सहायता कर रहा था। सो हाँफते-हाँफते वे आगे बढ़ते गए। हवा भी तेज होती गई। कभी ऐसा लगता, जैसे कोई जोर-जोर से नाच-गा रहा है। खच्चरवाले ने कहा, ''यहाँ शिवाजी महाराज नाचते और गाते हैं।''

गोपाल और अमित हँस पड़े। वैसे डर तो उन्हें भी लग रहा था। हाँ, वे उसका खयाल नहीं करते थे। आखिर वे किसी तरह उस जगह पहुँचे, जहाँ पर वह पेड़ था, जिसकी छाल लेनी थी। उस जगह से कुछ दूर एक गाँव में उन्होंने डेरा डाला। गाँव क्या था, केवल आठ-दस घर थे। गाँववाले नीचे चले गए थे। वहीं एक खुले दालान में तिरपाल बाँधकर हवा से बचाव कर लिया। उसी के अंदर बैठकर उन्होंने रेडियो लगाया, ग्रामोफोन तैयार किया और टॉर्च भी निकाल ली। वहाँ चारों तरफ कुहरा छा रहा था। कुछ दिखाई नहीं देता था। लेकिन जब रेडियो पर गाना शुरू हुआ तो उन्होंने सुना जैसे कोई गरज रहा है। वे समझ गए कि यही यहाँ का रखवाला शेर है। बस, वे तैयार हो गए। गोपाल ने इस मौके के लिए जो रिकॉर्ड रखे थे, वे निकाल लिये। रेडियो पर संगीत आ रहा था। गीत खत्म हुए तो किसी ने वंशी की तान छेड़ दी। खच्चरेवाला बहुत खुश हुआ। पहाड़ी लोग तो स्वयं बाँसुरी बहुत सुंदर बजाते हैं।

गोपाल और अमित हँस पड़े। वैसे डर तो उन्हें भी लग रहा था। हाँ, वे उसका खयाल नहीं करते थे। आखिर वे किसी तरह उस जगह पहुँचे, जहाँ पर वह पेड़ था, जिसकी छाल लेनी थी। उस जगह से कुछ दूर एक गाँव में उन्होंने डेरा डाला। गाँव क्या था, केवल आठ-दस घर थे। गाँववाले नीचे चले गए थे। वहीं एक खुले दालान में तिरपाल बाँधकर हवा से बचाव कर लिया। उसी के अंदर बैठकर उन्होंने रेडियो लगाया, ग्रामोफोन तैयार किया और टॉर्च भी निकाल ली। वहाँ चारों तरफ कुहरा छा रहा था। कुछ दिखाई नहीं देता था। लेकिन जब रेडियो पर गाना शुरू हुआ तो उन्होंने सुना जैसे कोई गरज रहा है। वे समझ गए कि यही यहाँ का रखवाला शेर है।

तभी गोपाल ने देखा, शेर धीरे-धीरे उनके पास आ रहा है। शेर क्या था? बस, दानव था। देखने में बड़ा खूँखार लगता था। आँखें ऐसी चमकीली जैसे मशाल। उनके दिल काँप उठे, पर उन्होंने हिम्मत से काम लिया। उन्होंने शेर की बोली का रिकॉर्ड चढ़ा दिया। जैसे ही उसकी आवाज निकली, सामने आता शेर चौंका, ठिठका, फिर चारों तरफ देखा और जोर से दहाड़ा। बस, इसी वक्त गोपाल ने बंदूक और तोप की आवाजवाला तवा चढ़ाया। जरासी देर में फटाफट, दनादन गोले छूटने लगे। उस वक्त शेर की हालत देखते बनती थी। कभी इधर देखता, कभी उधर, कभी दहाड़ता, कभी आगे भागता, कभी पीछे; लेकिन जब तोपों की आवाज से वह वन गूँज उठा और चारों तरफ चिल्लाहट मच गई तो शेर वहाँ से भागा। गोपाल इसी ताक में था। उसने बड़ी टॉर्च और छुरा लेकर उसका पीछा किया। अमित ने ग्रामोफोन उठाया। रिकॉर्ड खच्चरवाला लिये था।

शेर आगे और वे पीछे। अचानक शेर ने एकदम छलाँग लगाई, बीच घाटी में जाकर गिरा। गिरते ही वह इतने जोर से दहाड़ा कि कान फटने लगे, घाटी गूँज उठी, सारे वन में खलबली मच गई। बहुत देर तक शेर दहाड़ता रहा, तोपें छूटती रहीं और गोपाल उस पेड़ की छाल उतारता रहा।

आखिर धीरे-धीरे शेर की दहाड़ कम हुई। उधर सूरज भी कुछ चमका। उन्होंने देखा, दूर नदी के उस पार एक और शेर बेचैनी से घूम रहा है। खच्चरवाले से कहा, अब यहाँ मत रुको। लौट चलो। रात हो गई तो सर्दी के मारे गल जाएँगे। फिर यहाँ तो और भी शेर हैं, बाप रे···।

फिर तो उन्होंने ऐसी जल्दी की कि एक दिन में दस मील का भयानक रास्ता पूरा कर लिया। अब उतार था न रीछ मिले, पर वे नदी पार थे। रात तक वे एक सुरक्षित जगह पर आ गए। अब तो वे जैसे हवा में उड़ रहे थे। खुशी के मारे सब तकलीफ भूल गए थे। जब वे वहाँ पहुँचे, जहाँ से खच्चर लिया था तो लोगों को यकीन नहीं आया। लेकिन खच्चरवाले ने जब सारी बातें उन्हें बताईं तब तो सब जगह उनकी तारीफ होने लगी। माँ-बाप तो उन्हें देखकर जैसे स्वर्ग पा गए। बहुत खुश हुए। गोपाल ने वह छाल पकाकर माँ को पिलाई। देखते-देखते चार-पाँच दिन में माँ अच्छी होने लगी। इससे सबको बड़ी खुशी हुई। पर गोपाल और अमित के आनंद का तो कहना ही क्या था!

गुरु नानक का जीवन-दर्शन

● रमेश नैयर

भारत सहित विश्व के अनेक देशों में सिख पंथ के संस्थापक गुरु नानकदेवजी की ५५०वीं जयंती बड़े उत्साह से मनाई जा रही है। उनका जन्म १४६९ में दीपावली के पंद्रह दिन बाद कार्तिक पूर्णिमा को तलवंडी में हुआ था। गुरु नानक की जन्म-स्थली होने के कारण यह 'ननकाना साहेब' के नाम से जाना जाने लगा। गुरु नानक देवजी के पिता मेहता कालूजी थे। वे खत्री कुल से थे। सिख पंथ के सभी दस गुरु इसी कुल से थे। दसवें गुरु श्री गोविंद सिंहजी ने वंश-परंपरा के आधार पर गुरु का पद समाप्त करके इसे लोकतांत्रिक स्वरूप दे दिया था, तब से सिख संगत द्वारा चुने गए पंज प्यारे ही पंथ के सभी प्रमुख निर्णय करते आ रहे हैं।

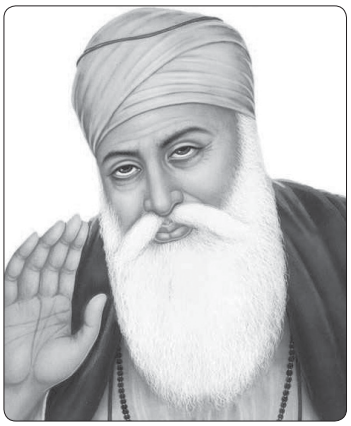

उनके दो परम शिष्य थे—भाई मरदाना और भाई बाला। उनके साथ ही लहना और रामदास भी उनकी तीर्थ-यात्राओं में साथ रहा करते थे। नानक देवजी ने भारत के विभिन्न भागों के साथ ही अफगानिस्तान, फारस और अनेक अरब देशों का व्यापक भ्रमण किया। सभी जगह उनके वचनों से प्रभावित होकर बड़ी संख्या में लोग सिख बनते गए। उन्होंने मूर्तिपूजा और विभिन्न देवी-देवताओं के उपासना के स्थान पर एक ही ब्रह्म पर आस्था रखने का विश्वास जताया। उनका प्रसिद्ध और व्यापक रूप से प्रचलित 'शब्द' है 'एक ओंकार सतनाम कर्तापुरख निर्भय निर्वैर, अकाल मूरत अजूनी सैभंग प्रसाद।'

इसका प्रभाव इतना व्यापक हुआ कि हिंदुओं के साथ ही मुस्लिम भी उनके अनुयायी बनने लगे। अनेक सूफी संत भी उनकी शिक्षाओं से प्रभावित हुए। सूफियों के प्रभाव का उपयोग इसलाम के प्रचार के लिए भी होने लगा। नानक देवजी का उनसे कभी कोई सीधा टकराव नहीं रहा। उन्होंने उन्हें भी सिख पंथ में समाहित करने का प्रयास किया। इसी दृष्टि से उन्होंने लिखा 'अव्वल अल्लाह नूर उपाया, कुदरत के सब बंदे। एक नूर से सब जग उपज्या कौन भले कौन मंदे।

गुरु नानक देवजी को अपने परिवार की आजीविका के लिए कई बार दूसरों के यहाँ काम भी करना पड़ा। अपने बहनोई जैरामजी के माध्यम से वे सुल्तानपुर लोधी के नवाब के शाही भंडार की देख-रेख करने लगे। उनके बारे में एक प्रसंग बहुत प्रचलित है। वह था कि जब वे तराजू से अनाज तौलकर ग्राहक को दे रहे थे तो गिनते-गिनते जब ग्यारा, बारा, तेरा पर पहुँचे तो उन्हें कुछ अतींद्रिय अनुभूति हुई। वे तौलते जाते थे और तेरा के बाद तेरा फिर तेरा और सब तेरा ही तेरा कहते गए। आम धारणा है कि पहली बार ईश्वर का ज्ञान उन्हें उसी समय प्राप्त हुआ और वे मानने लगे, जो कुछ है, वह ईश्वर का है, मेरा क्या है? इसी प्रकार एक और रोचक प्रसंग है कि अपनी यात्रा के दौरान वे एक धर्मस्थल की तरफ पैर करके लेट गए। उस धर्म के अनुयायियों ने इस पर आपत्ति की तो गुरु नानक ने कहा, मेरे पैर उस दिशा में कर दो, जहाँ ईश्वर का कोई निवास-स्थल नहीं है। कहते हैं, वे जिस तरफ गुरु नानक के पैर उठाकर करते, उसी दिशा में वह धर्म स्थल उपस्थित दिखता। आशय यह कि ईश्वर प्रत्येक दिशा में है। ईश्वर जैसे प्रत्येक जीव में है, वैसे ही हर दिशा में भी है। इन सीधी-सरल बातों के कारण उनकी वाणियों को सभी धर्मों और पंथों के लोग अपनाने लगे। उनके दो-तीन उदाहरण देना प्रांसगिक मालूम होता है—

सुपने ज्यों धन पिछान, काहे पर करत मान।
बारुकी भीत तैसें, बसुधाकौ राज है॥
मुरसिद मेरा मरहमी, जिन मरम बताया।
दिल अंदर दीदार है, खोजा तिन पाया॥
पीर पैगंबर औलिया, सब मरने आया।
नाहक जीव न मारिये, पोषनको काया॥

नानक देवजी के जीवन के दो और प्रसंग बहुत प्रचलित हैं। एक यह कि गुरदासपुर में अपनी यात्राओं के दौरान उनकी भेंट नाथपंथी

योगी भांगरनाथ के साथ हुई। दोनों में धार्मिक परिसंवाद भी हुआ। जब गुरु नानक देवजी के तर्कों को काट सकने में नाथपंथी योगी विफल हो गया तो वह कुछ तांत्रिक क्रियाओं का सहारा लेने लगा। इस पर सहजता से मुसकराते हुए नानकजी ने कहा कि भाई, ईश्वर तक पहुँचने का सीधा सरल रास्ता है प्रेम और सहजता से काम लेना। यही ईश्वर प्राप्ति का एकमात्र माध्यम है, तंत्र-मंत्र से कुछ हासिल होनेवाला नहीं है। दूसरा प्रसंग है कि एक बार जब गुरु नानक देवजी मरदाना के साथ वैन नदी के किनारे बैठे थे तो अचानक उन्होंने पानी में डुबकी लगा दी और दो-तीन दिन तक पानी में ही समाए रहे। आम धारणा है कि उन्हीं दिनों में फिर से उनका ईश्वर से साक्षात्कार हुआ। सभी लोग मानने लगे कि उनका पानी में डूबकर देहांत हो, परंतु वे तीसरे दिन अचानक नदी की सतह पर प्रकट हो गए। वहीं पर उन्होंने बेर का एक बीज धरती में बो दिया, जो आज बहुत बड़े पेड़ के रूप में विकसित हो चुका है। कपूरथला के सुल्तानपुर लोधी में बेर के उस पेड़ के पास भव्य गुरुद्वारा 'बेर साहेब' उपस्थित है।

गुरुनानक देव का मानना था कि प्रभु को पाने और जीवन को सार्थक करने के लिए घर-बार छोड़कर जंगलों में भटकने की जरूरत नहीं है। उनका कहना था कि समाज की मुख्यधारा से कटकर ईश्वर की तलाश करनेवालों का श्रम व्यर्थ जाता है। नानकदेवजी बहुत कठिन समय में अवतरित हुए थे। व्यापक हिंदू समाज दोहरी कठिनाइयों से जूझ रहा था। पहली बड़ी व्याधि थी स्वयं समाज के भीतर जात-पाँत और छुआछूत की कुरीति और दूसरी थी लंबे मुसलिम शासन के दौरान होनेवाला बलात् धर्मांतरण। इस कारण समाज में सांप्रदायिक टकराव भी होते थे। साधु-संत समाज में समरसता लाने और सांप्रदायिक हिंसा को दूर करने के दायित्व से आँख मूँदकर एकांत साधना अथवा विभिन्न धार्मिक अनुष्ठानों में तल्लीन रहते थे।

गुरु नानक ने सामाजिक एवं धार्मिक संघर्षों को नियंत्रित करने के लिए दो स्तरों पर काम करने को महत्त्व दिया। पहला यह कि व्यापक हिंदू समाज से जातिवाद और धर्म के नाम पर आडंबर को समाप्त करना। दूसरा, सभी का एक ही निर्गुण ब्रह्म होने के नाम से धार्मिक सामंजस्य स्थापित करना। गुरुवाणी के माध्यम से आत्मनिरीक्षण के साथ ही प्रभु का नाम जपने एवं ध्यान को महत्त्व दिया। उसके लिए उन्होंने घर-परिवार छोड़ने और उपासना के लिए पारिवारिक दायित्वों से कटकर निठल्ले बैठने की प्रकृति को अनुचित माना। उन्होंने साफतौर पर कहा, 'ईश्वर हमारे हृदय में ही है···पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है, मुकर माहि जसछाई। तैसे ही हरि बसे निरंतर, घट ही खोजो भाई।'

गुरु नानकदेवजी ने सहज और सरल भाषा में मानव धर्म की गूढ़ शिक्षाओं को बताया। एकेश्वरवाद उनकी वाणियों में सर्वत्र मिलता है। राम-नाम को उन्होंने महत्त्व दिया, परंतु मूर्तिपूजा का कभी समर्थन नहीं किया। निर्गुण ब्रह्म में उनकी सघन आस्था थी। उन्होंने कहा था–'गुरुवाणी ब्रह्मज्ञान से उपजी आत्मिक शांति के लिए उपयोगी है। यह लोककल्याण के लिए भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

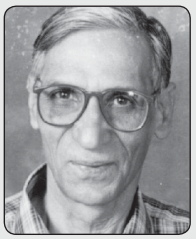

सुप्रसिद्ध लेखक-पत्रकार-संपादक। 'दैनिक भास्कर' एवं 'द हितवाद' (अंग्रेजी) दैनिक के संपादक। 'ऑब्जर्वर' के कार्यकारी संपादक रहे। लगभग एक दर्जन पुस्तकों का लेखन तथा सैकड़ों लेख प्रकाशित। अनेक पुस्तकों का संपादन व अनुवाद। अनेक सम्मान-पुरस्कारों से पुरस्कृत तथा विभिन्न देशों में भ्रमण।

गुरु नानकदेवजी ने सहज और सरल भाषा में मानव धर्म की गूढ़ शिक्षाओं को बताया। एकेश्वरवाद उनकी वाणियों में सर्वत्र मिलता है। राम-नाम को उन्होंने महत्त्व दिया, परंतु मूर्तिपूजा का कभी समर्थन नहीं किया। निर्गुण ब्रह्म में उनकी सघन आस्था थी। उन्होंने कहा था—'गुरुवाणी ब्रह्मज्ञान से उपजी आत्मिक शांति के लिए उपयोगी है। यह लोककल्याण के लिए भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। मधुर व्यवहार और विनम्रता को जीवन में उतारना मन की शांति तथा ब्रह्म की प्राप्ति में समान रूप से उपयोगी है। तब किसी प्रकार के कर्मकांड की जरूरत नहीं रह जाती।' उनके उपदेशों को संकलित करने के लिए गुरु ग्रंथ साहेब का सृजन उनके जीवनकाल में शुरू हो गया, जिसे पाँचवें गुरु अर्जुनदेव ने पूर्ण करके गुरुमुखी में लिपिबद्ध किया। इसमें हिंदी, ब्रजभाषा, लाहिंदी-पंजाबी लोकभाषा, खड़ी बोली संस्कृत और फारसी के शब्द प्रचुरता में हैं। गुरुग्रंथसाहेब को सिख संगत आदिग्रंथ की मान्यता देती है।

सिख पंथ के अनुयायियों की बड़ी संख्या आरंभ में अविभक्त भारत के पंजाब में थी। इसके साथ ही नानक-नामलेवा सिंघ एवं अन्य प्रदेशों में इसका प्रचलन बढ़ता गया। हिंदू तथा सिख में कभी कोई भेद नहीं रहा। सिख पंथ को माननेवाले पंजाबी अध्यवसायी और परिश्रमी रहे हैं। हिंदू समाज में प्रचलित अनेक कुरीतियों और वर्जनाओं को फलाँगकर उन्होंने भारत के विभिन्न भागों सहित अनेक विदेशी राष्ट्रों में आजीविका तलाशने में कभी कोई गुरेज नहीं किया। पश्चिमी देशों में भी उनकी प्रभावी उपस्थिति है। कनाडा के रक्षामंत्री सहित तीन अन्य विभागों के मंत्री सिख हैं। वहाँ पंजाबी भाषा को तीसरी राष्ट्रभाषा की संवैधानिक मान्यता दी गई है। युनाइटेड किंगडम और संयुक्त राज्य अमेरिका की राजनीति तथा प्रशासन में भी उनकी उल्लेखनीय भागीदारी है।

१५२-ए, समता कॉलोनी
रायपुर-४९२००१ (छ.ग.)
दूरभाष : ९४२५२०२३३६

मेरी बेटियाँ

● नरेंद्र कोहली

रात कब की उतर आई थी। सारा मोहल्ला जैसे सुनसान पड़ गया था। लोग खाना खा, रसोई समेट, अपने-अपने घरों की खिड़कियाँ-दरवाजे बंद कर, सोने के लिए लेट गए थे।

रीना भी लेट गई तो शीना ने पूछा, ''खिड़की खोल दूँ या...''

''कितनी गरमी और घुटन है। खोल दे खिड़की।'' रीना ने कहा, ''यहाँ कौन सा खजाना धरा है कि चोर लूटकर ले जाएँगे।''

''सोच ले।'' शीना ने कहा, ''बापू ने मना कर रखा है।''

''हाँ, बापू ने मना तो कर रखा है। वे मुसलमानों के हमले से डरते हैं। वे कितनी ही हिंदू लड़कियों को उठाकर ले गए हैं। जब पाकिस्तान बना था तो पता नहीं क्यों हमारे दादा अन्य लोगों के समान भारत चले नहीं गए थे।...इस गरमी का क्या करें।''

''खोल दे खिड़की।'' रीना ने कहा, ''अब बापू कभी-कभी पछताते हैं कि हम मुसलमानों के इस देश में क्यों रह गए!''

''उनको क्या पता था कि सिंध में भी ये हालात हो जाएँगे। पंजाब और बलोचिस्तान की बात और थी।''

''उस बात को तो अब सत्तर-पचहत्तर साल होने को आए।'' रीना बोली, ''क्या हालात कभी नहीं सुधरेंगे? यह आँधी कभी नहीं थमेगी? तब तो बापू पैदा भी नहीं हुए थे। यहाँ ही बसे रहने का निर्णय तो दादा का रहा होगा।''

''दादा भी तब आठ-दस साल के रहे होंगे। यहाँ रहने का निर्णय तो उनके बापू ने किया होगा। हमारे पड़दादा ने।''

''तो अब हम लोग ही क्यों नहीं चले जाते? हमें कौन रोक रहा है?''

''हमारा दुर्भाग्य।'' शीना बोली, ''सुना है कि तब तो ऐसी आँधी चली थी कि काफिले के काफिले इधर-से-उधर और उधर-से-इधर खून-गारत में भी बेरोक-टोक चले आए थे। अब तो पाकिस्तान छोड़ने के लिए पासपोर्ट चाहिए। भारत में घुसने के लिए वीजा चाहिए। और फिर अपना घर-बार छोड़कर वहाँ कहाँ जाकर रहेंगे—सड़कों-फुटपाथों पर? हजारों बातें सोचने की हैं।''

शीना ने खिड़की खोल दी और आकर बिस्तर पर लेट गई।

''तुम ठीक कहती हो; पर यह भी कोई जीना है। न होली-दीवाली

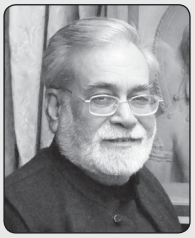

उपन्यास, कहानी, व्यंग्य, नाटक, निबंध, आलोचना, संस्मरण इत्यादि गद्य की सभी प्रमुख एवं गौण विधाओं में इन्होंने अपनी विदग्धता का परिचय दिया है। उपन्यास श्रृंखला में 'महासमर', 'तोड़ो कारा तोड़ो' तथा रामकथा पर उपन्यास चर्चित। इन्होंने प्रायः सौ से भी अधिक उच्च कोटि के ग्रंथों का सृजन किया है। 'शलाका सम्मान' सहित अनेक सम्मानों से अलंकृत।

मना सको। न मंदिर जा सको। न पूजा-पाठ कर सको। न कोई तीर्थ, न तीज न त्योहार।''

''अच्छा, अब सो जा। सपने में जहाँ चाहे घूम आ।''

रीना सोचती रही।...क्या करना चाहिए उन्हें। वे पाकिस्तानी बन सकते हैं, किंतु मुसलमान तो नहीं बन सकते। किसी दिन यदि कोई उसे भी उठा ले गया तो?...उसके साथ किसी ने जबरदस्ती की तो वह तो उसकी जान ले लेगी। पर कैसे लेगी? उसके पास कहाँ कोई बंदूक-तलवार है। सब्जी काटने के चाकू से कहीं किसी के प्राण लिये जा सकते हैं।...प्राण तो ईंट-पत्थर से भी लिये जा सकते हैं, पर फिर अपने प्राण बचाए नहीं जा सकते...वे उसके हाथ-पैर बाँधकर उसकी धुलाई करेंगे...कभी नादिरशाह के विषय में एक कहानी पढ़ी थी। वह दिल्ली के लालकिले में मुगलों के हरम में आकर बिस्तर पर लेट गया था। बाहर उसके सिपाही थे और भीतर मुगलों की बहू-बेटियाँ। उसने अपनी तलवार एक ओर रख दी थी। कमर से बँधी कटार भी खोलकर बिस्तर पर टिका दी थी। करवट बदली और सो गया।

जब जागा तो सबकुछ वैसा का वैसा ही था। न किसी मुगल ने भीतर आकर उससे मुक्ति पाने का कोई प्रयत्न किया था, न मुगल शहजादियों ने भाग जाने की कोशिश की थी। न उसके हथियार हटाए गए थे। न उसके हाथ-पैर बाँधे गए थे।...

वह उठा। अपने हथियार उठाए। कटार को कमर से बाँधते हुए बोला, ''तुममें से किसी ने भी साहस किया होता तो मेरी कटार मेरी छाती में उतार दी होती। पर तुमने वह नहीं किया। तभी तो तुममें से कोई भी वीर मुगल शहजादा पैदा नहीं कर पाई। सब कायर के कायर ही रहे।'' वह बाहर चला गया।

रीना सोचती रही। उन सबकी अवस्था भी उन मुगल शहजादियों के समान थी। आज तक किसी हिंदू लड़की ने अपने साथ जबर्दस्ती करनेवाले के प्राण लेने का प्रयत्न नहीं किया। न प्राण दिए, न प्राण लिये। जिन्होंने कभी रक्त देखा ही नहीं, वे किसी के प्राण कैसे लेंगी···उसे नींद आ रही थी।

बाहर कुछ खटपट हुई। बापू का स्वर सुनाई दिया, ''दरवाजा खोलो, बेटी रीना!''

दरवाजे पर किसी ने भारी चीज से चोट की।

नहीं यह उसका स्वप्न नहीं था। यह नादिरशाह वाली कहानी भी नहीं थी।

रीना ने शीना की ओर देखा। वह भी उठकर बैठी हुई थी।

''कुछ गड़बड़ है।''

''गड़बड़ है तो बापू दरवाजा खोलने को क्यों कह रहे हैं?''

''उनकी आवाज का भय नहीं सुना तूने?''

दरवाजे पर दूसरी चोट पड़ी और किसी ने भारी स्वर में कहा, ''तुम्हारे बाप को गोली मार देंगे हम। दरवाजा खोलो।''

उन्हें लगा, बापू रो रहे हैं, ''हमें बख्श दो। हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?''

''तुम इसलाम पर ईमान क्यों नहीं लाते? कलमा पढ़ो, काफिर कहीं के।''

''कलमा तो हम पढ़ लेंगे; किंतु न तो उससे हम मुसलमान बनेंगे, न तुम्हारा ईमान हमारे मन में उतरेगा।'' यह उनके भाई का स्वर था।

''तो कैसे बनेगा मुसलमान?'' उस भारी स्वर ने पूछा, ''गोली खाकर?''

''ईमान तो मन की बात है। जबर्दस्ती कोई किसी का धर्म नहीं बदल सकता।'' भाई ने पुनः कहा।

''जब मुँह में गाय का गोश्त जाएगा तो पेट में ईमान भी पैदा हो जाएगा। तुम्हारी बहनों का निकाह मुसलमान लड़कों से हो जाएगा और वे मुसलमान बच्चे पैदा करेंगी, तो उनके अंदर भी ईमान पैदा हो जाएगा।''

भाई ने कुछ नहीं कहा। बापू भी रोते ही रहे, ''हाय मेरे रब्बा!''

''हम पुलिस में शिकायत करेंगे।'' भाई ने कहा।

''पुलिस में कर, फौज में कर।'' वह व्यक्ति बोला, ''उससे क्या तुझे तेरी बहनें वापस मिल जाएँगी। फिर वे एक की न होकर भीड़ में बँटेंगी।''

बापू जमीन पर बैठकर बच्चों के समान एड़ियाँ रगड़ते हुए छाती पीट रहे थे, ''हम पर रहम करो। अरे कोई तो बचाओ।''

इस बीच कुछ हुआ था और बापू का स्वर भी बंद हो गया था।

शीना ने उत्सुकता में दरवाजा खोल दिया। उनका भाई लहूलुहान होकर जमीन पर पड़ा था। बापू अपने बाल नोच रहे थे।

दरवाजा खुलते ही भीड़ उन पर टूट पड़ी।

अगली सुबह बापू थाने के सामने बैठे अपने बाल नोच रहे थे। अपनी छाती पीट रहे थे, ''मेरी बेटियाँ मुझे वापस दिलाओ।''

किसी ने नहीं सुनी तो उन्होंने अपने पास रखी मिट्टी के तेल की बोतल अपने ऊपर उँडेल ली। मैं आग लगा लूँगा···थाने में से एक सिपाही बाहर आया, ''क्यों तकलीफ करता है। आग तो तुझे हम लगा देंगे।''

''मेरी बेटियाँ···'' बापू ने रोते हुए कहा।

''उन्होंने इसलाम कबूल कर लिया है और उनके निकाह हो चुके हैं। अब तुझे मिल भी जाएँ तो क्या करेगा?''

वह उसे घसीटता हुआ थाने के भीतर ले गया और उसे हवालात में पटक दिया, ''यहाँ आग लगा या फाँसी लगा। हम खुदकुशी का एफ.आई.आर. भी लिख लेंगे।''

१७५ वैशाली, पीतमपुरा
दिल्ली-११००३४

इस अंक के चित्रकार

संदीप राशिनकर

जाने-माने लेखक एवं चित्रकार। कई अखिल भारतीय कला प्रदर्शनियों में चित्रों का चयन व प्रदर्शन। राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में हजारों चित्रों/रेखांकनों का प्रकाशन, अनेक प्रतिष्ठित प्रकाशनों की पुस्तकों के आवरण।

भित्ति चित्रों (म्यूरल्स) के क्षेत्र में अनेक स्थानों/प्रतिष्ठानों पर भव्य म्यूरल्स का सृजन एवं अभिनव प्रयोगों से इस शैली में प्रतिष्ठित कार्य।

कविताओं के अलावा कला एवं साहित्य-संस्कृति पर समीक्षात्मक लेखन/प्रकाशन।

संपर्क : ११-बी, राजेंद्र नगर, इंदौर-४५२०१२
दूरभाष : ९४२५३१४४२२

प्रेमचंद : आधी शताब्दी की शोध-यात्रा

● कमल किशोर गोयनका

मैं अस्सी वर्ष का हो गया हूँ। यह सही वक्त है, जब मुझे अपने अतीत का अवलोकन करना चाहिए कि प्रेमचंद के साथ मेरे आधी शताब्दी के रिश्ते की यह यात्रा कैसी व्यतीत हुई। प्रेमचंद की मेरी यह यात्रा अभी खत्म नहीं हुई है। यह तो मेरे जीवन के बाद ही समाप्त होगी, लेकिन मुझे यकीन है कि फिर कोई व्यक्ति आएगा और इस यात्रा को आगे बढ़ाएगा। मेरी कहानी का आरंभ मेरे जन्म से होता है। मेरा जन्म ११ अक्तूबर, १९३८ को दिल्ली से लगभग ७० किलोमीटर दूर एक छोटे से शहर बुलंदशहर में एक मारवाड़ी परिवार में हुआ था। परिवार में जमींदारी थी और व्यापार ही प्रमुख था, परंतु इस परंपरा को त्यागकर मैं दिल्ली में प्रोफेसर बनने का स्वप्न लेकर आया और उसमें सफल हुआ, लेकिन परिवार ने मेरे इस पथ-परिवर्तन को स्वीकार नहीं किया। मैं दिल्ली में प्रोफेसर बना और शोध के लिए प्रेमचंद पर विषय दिया गया। मैं जयशंकर प्रसाद पर काम करना चाहता था, क्योंकि वही मेरे प्रिय साहित्यकार थे, परंतु प्रेमचंद पर कार्य करने का आदेश हुआ। इसे विडंबना कहूँ या संयोग अथवा नियति का आदेश, अनिच्छा से शोध-कर्म शुरू करनेवाला विषय ही मेरे जीवन की नियति बन गया। आप किस रास्ते पर चलना चाहते हैं और नियति आपको कहाँ ले जाना चाहती है, इसका भान आपको तब होता है, जब आप ऐसे विषय पर कार्य करते हुए कुछ उपलब्धियाँ करते हैं और प्रसिद्धि एवं स्वीकृति आपके जीवन में आने लगती है। आज मैं महसूस करता हूँ कि प्रेमचंद पर कार्य करके मेरा जीवन सार्थक हो गया। जीवन में ज्ञान की प्राप्ति और ज्ञान की गवेषणा तथा ज्ञान के विकास से बड़ी सार्थकता और क्या हो सकती है?

मैंने जब प्रेमचंद पर शोध एवं आलोचना-कर्म शुरू किया, तब तक काफी शोध-ग्रंथ लिखे जा चुके थे और प्राय: उनमें एक ही सामग्री तथा अवधारणाओं की बराबर आवृत्ति की गई थी। हिंदी में शोध की दुर्दशा इस तथ्य से समझी जा सकती है कि अब तक लगभग तीस हजार शोध-ग्रंथ लिखे जा चुके हैं, परंतु मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि इनमें से दस-बीस शोध-प्रबंध ऐसे नहीं होंगे, जिन्होंने परंपरागत अवधारणाओं को चुनौती दी हो और वे हमारे ज्ञान के विस्तार में सहायक बने हों तथा हम उन्हें आज याद करते हों। हिंदी में आज स्थिति यह है कि कोई भी दस ग्रंथों को पढ़कर अपना शोध-ग्रंथ लिखकर डॉक्टर बन सकता है और सारी जिंदगी इस अभिमान में जी सकता है कि मैंने अपने शोध-कार्य से ज्ञान की नई दिशाएँ खोली हैं। मेरे समय में प्रेमचंद के मूल्यांकन की दो प्रमुख धाराएँ थीं—एक मार्क्सवादी और दूसरी गांधीवादी। इनमें मार्क्सवादी आलोचना ही प्रेमचंद के मूल्यांकन की एकमात्र धारा बनती चली गई, क्योंकि इसके पीछे मार्क्सवादी पार्टी और उसके बुद्धिजीवी तथा उनकी साहित्यिक संस्था 'प्रगतिशील लेखक संघ' का देशव्यापी नेटवर्क काम कर रहा था और विश्वविद्यालय स्तर की पढ़ाई तक प्रेमचंद की पहचान मार्क्सवादी लेखक, खूनी क्रांति के समर्थक लेखक तथा रूसी समाजवाद के लेखक के रूप में स्थापित कर दी गई थी। केंद्र की कांग्रेसी सरकारों का समर्थन भी उनके साथ था। स्थिति यह थी कि इस विचारधारा के विरुद्ध कोई सोचने तक का दुस्साहस नहीं कर सकता था, क्योंकि मार्क्सवादी आलोचना का सत्य ही सार्वकालिक, सार्वदेशिक तथा समस्त साहित्य-समाज का सत्य बना दिया गया था। देश में होनेवाली गोष्ठियों, पाठ्यक्रम में प्रेमचंद को पढ़ाते समय तथा पत्र-पत्रिकाओं के विशेषांकों में सर्वत्र प्रेमचंद के मार्क्सवादी होने का डंका पीटा जाता था और पूरा साहित्य-समाज ताली पीटकर इसका समर्थन करता था, लेकिन मैंने प्रेमचंद को समग्रत: पढ़ने के बाद अपने शोध-कार्य के दौरान महसूस किया कि यह तो प्रेमचंद का सत्य नहीं है और प्रेमचंद को एक कठघरे में बंद करके उसे अपने राजनीतिक उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल करने की साजिश है। मार्क्सवादियों की साजिश तो इससे ही स्पष्ट थी कि प्रेमचंद की तीन सौ कहानियों में केवल पाँच-छह तथा चौदह उपन्यासों में केवल एक उपन्यास 'गोदान' ही प्रेमचंद को मार्क्सवादी कथाकार बनाने की स्थापना के लिए इस्तेमाल किए जा रहे थे। इस आलोचना में प्रेमचंद का लगभग ९५ प्रतिशत साहित्य गायब था, इसे लुप्त कर दिया गया था और यहाँ तक कि इसे भावनापूर्ण, कपोल-कल्पनापूर्ण तथा जीवन के यथार्थ से दूर साहित्य की कोठी में रख दिया गया था। इस प्रकार प्रेमचंद के दो टुकड़े कर दिए गए—एक यथार्थवादी, जिसके आधार पर वे मार्क्सवादी बनाए जाते हैं, और दूसरा आदर्शवादी, जो उन्हें कल्पनालोक

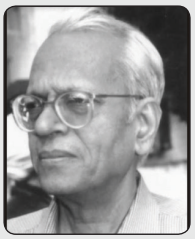

जाने-माने साहित्यकार। इकतालीस वर्षों से दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन। अब तक प्रेमचंद पर बाईस तथा अन्य साहित्यकारों पर बीस पुस्तकें प्रकाशित। एक नवीनतम विषय 'गांधी की पत्रकारिता' पर एक पुस्तक। प्रेमचंद साहित्य के विशेषज्ञ के रूप में ख्यात। विभिन्न संस्थाओं, एकेडमियों द्वारा सात पुरस्कार तथा मॉरीशस से एक पुरस्कार से सम्मानित। संप्रति केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के उपाध्यक्ष।

का कथाकार बनाता है तथा साहित्यिक परिधि से गायब कर देता है। प्रेमचंद को प्रेमचंद के विरुद्ध खड़ा करने की यह साजिश हिंदी साहित्य में अनोखी थी, जिसके पीछे साहित्य को राजनीति का अनुयायी बनाने का कुचक्र था।

प्रेमचंद की इन मार्क्सवादी स्थापनाओं के मूल में जो मंतव्य और तथ्य हैं, उन्हें आपके सामने रखना मेरे लिए आवश्यक है। यह प्रेमचंद के पाठक नहीं जानते हैं कि डॉ. रामविलास शर्मा ने प्रेमचंद पर लिखने से पहले कम्युनिस्ट पार्टी से अनुमति ली थी और जिसके कारण उन्होंने प्रेमचंद को रूसी क्रांति एवं रूसी समाजवाद का समर्थक लेखक बना दिया। डॉ. शर्मा के बाद जितने भी मार्क्सवादी आलोचकों ने प्रेमचंद पर लिखा, वे इसी स्थापना का अनुकरण करते चले गए, बिना यह सोचे कि किसी भी लेखक का मूल्यांकन समग्रता में ही हो सकता है और किसी भी लेखक को समझने/जानने के लिए यह आवश्यक है कि हम उसकी रचना-दृष्टि को भी उसके मूल्यांकन के समय प्रमुखता से ध्यान में रखें। मार्क्सवादी आलोचकों ने, जिनमें डॉ. रामविलास शर्मा, नामवर सिंह, शिव कुमार मिश्र आदि उल्लेखनीय हैं, प्रेमचंद के साहित्य-दर्शन की पूर्ण उपेक्षा ही नहीं की बल्कि उसके संबंध में गलत अवधारणाओं को प्रचलित किया और वे सत्य मान ली गईं। मैं यहाँ कुछ उदाहरण आपके सामने रखना चाहता हूँ—

१. प्रेमचंद ने अपने साहित्य-उद्देश्य के बारे में लिखा कि मैं अपने साहित्य से स्वराज्य की प्राप्ति और भारतीय आत्मा की रक्षा करना चाहता हूँ। उन्होंने यह भी लिखा कि मैं साहित्य में भारतीयता की छाप लगाना चाहता हूँ, परंतु मार्क्सवादी आलोचना में इसकी कोई चर्चा नहीं मिलेगी, क्योंकि भारतीय आत्मा और भारतीयता वामपंथियों द्वारा बहिष्कृत शब्द हैं।

२. प्रेमचंद ने सन् १९१९ में एक पत्र में लिखा था कि मैं करीब-करीब बोल्शेविक उसूलों का कायल हो गया हूँ, परंतु उन्होंने शीघ्र ही मान लिया कि ''साम्यवाद से लंबी-चौड़ी आशाएँ बाँधना व्यर्थ है, क्योंकि साम्यवाद से पूँजीपतियों पर मजूरों की विजय का आंदोलन है। न्याय से अन्याय पर, सत्य के मिथ्या पर विजय पाने का नाम नहीं है। वह सारी विषमता, सारा अन्याय, सारी स्वार्थपरता, जो पूँजीवाद के नाम से प्रसिद्ध है, साम्यवाद के रूप में आकर अणु मात्र भी कम नहीं होती, बल्कि उससे भी भयंकर हो जाने की संभावना है।'' यहाँ तक कि 'गो-दान' तक में साम्यवाद की आलोचना है, लेकिन मार्क्सवादी आलोचना में वह मार्क्सवाद को स्थापित करनेवाली महान् कृति है।

३. प्रेमचंद ने साहित्य के प्रयोजन में भारत के प्राचीन मूल्यों, सत्यं-शिवं-सुन्दरम्, परिष्कार और मन को संस्कारित करने का बार-बार उल्लेख किया किंतु मार्क्सवादी आलोचकों ने इन्हें कभी महत्त्व नहीं दिया। प्रेमचंद ने 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' की स्थापना की, और इसमें भी मार्क्सवादियों ने आदर्श को प्रेमचंद साहित्य के मूल्यांकन से बहिष्कृत कर दिया।

४. प्रेमचंद के 'प्रगतिशील लेखक संघ' के भाषण का मार्क्सवादी बार-बार उल्लेख करते हैं और उसे वे मार्क्सवादी प्रगतिशीलता का संस्थापक दस्तावेज मानते हैं, पर खेद है कि किसी प्रगतिशील लेखक ने इसे पढ़ा ही नहीं है। इसमें एक भी शब्द मार्क्सवाद और मार्क्सवादी आलोचना का नहीं है और न रूस, मार्क्स, खूनी क्रांति का। यदि उल्लेख है तो साहित्य के द्वारा मन के संस्कार का और आध्यात्मिक आनंद, आध्यात्मिक संतोष, आध्यात्मिक सुख आदि का। यहाँ तक कि प्रेमचंद कहते हैं कि 'प्रगतिशील' शब्द ही निरर्थक है, क्योंकि लेखक स्वभाव से ही प्रगतिशील होता है। इस प्रकार प्रेमचंद 'प्रगतिशील' शब्द को मार्क्सवादी अर्थ में अस्वीकार करते हैं, परंतु हमारे मार्क्सवादी आज तक 'प्रगतिशील' शब्द का ढोल पीटते हुए प्रेमचंद को मार्क्सवादी सिद्ध करते रहे हैं।

५. 'प्रगतिशील लेखक संघ' के भाषण में प्रेमचंद ने एक और महत्त्वपूर्ण बात कही थी कि साहित्य राजनीति के आगे चलनेवाली मशाल है, लेकिन इसमें भी मार्क्सवादियों ने प्रेमचंद के इस मत को एकदम उलट दिया और राजनीति को साहित्य के आगे बैठा दिया तथा प्रगतिशीलों का साहित्य कम्युनिस्ट पार्टी का साहित्य बन गया।

६. मार्क्सवादी आलोचना में जीवन का कटु यथार्थ ही एकमात्र ऐसी कसौटी है, जो प्रेमचंद को महान् बनाती है और क्रांतिकारी यथार्थवाद एवं मार्क्सवादी समाजवाद तक ले जाती है। वामपंथियों का यह मापदंड भी प्रेमचंद के साहित्य-सिद्धांत के विपरीत है। प्रेमचंद ने एकमात्र यथार्थ को साहित्य की कसौटी एवं श्रेष्ठता का आधार नहीं माना, बल्कि शुद्ध यथार्थवाद के तो वे विरोधी थे। प्रेमचंद की दृष्टि यह थी कि यथार्थ साहित्य का आदर्श नहीं हो सकता। उनके अनुसार यथार्थवाद हमारी आँखें खोलता है और आदर्शवाद हमें मनोरम स्थान पर पहुँचाता है। लेखक को जीवन के यथार्थ को देखकर उसकी मानवीय अनुभूतियों को आघात लगता है, तो वह आदर्शवादी होने पर विवश होता है। उसकी नजर में जब समाज का कोई अधिक सुंदर रूप होगा, तभी वह समाज के वैषम्य से उद्विग्न होगा। अत: यह असंतोष ही उसके मन में किसी ऊँचे आदर्श को जन्म देता है। इसलिए प्रेमचंद मानते हैं कि कुरूपता और सुंदरता का संग्राम ही साहित्य है और यथार्थ एवं आदर्श का समन्वय ही उच्चकोटि के साहित्य की पहचान है। स्पष्ट कहते हैं कि यथार्थ का उपयोग आदर्श की स्थापना के लिए है, जैसे सुंदर की कल्पना बिना असुंदर के नहीं हो सकती और प्रकाश भी अंधकार के संबंध से ही व्यक्त होता है। साहित्य को अधम एवं पतित पात्रों तक सीमित करना उचित नहीं, क्योंकि मनुष्य में जो सुंदर है, विशाल है, आदरणीय है, आनंदप्रद है, साहित्य उसी की मूर्ति है। साहित्य यदि दर्पण है तो दीपक भी है। प्रेमचंद तो यथार्थ में भी आदर्श की स्थितियाँ तलाश करने के पक्ष में थे, परंतु वामपंथी आलोचना में ये विचार निरर्थक और उपेक्षणीय हैं, क्योंकि ये मार्क्सवाद की स्थापना में सहायक नहीं बन सकते।

मैंने प्रेमचंद के इस साहित्य-दर्शन और उसकी मार्क्सवादियों द्वारा आलोचना तथा उसे बहिष्कृत करने की राजनीतिक साजिश का पर्दाफाश किया है। आप समझ सकते हैं कि जो लोग प्रेमचंद के साहित्य-दर्शन

की उपेक्षा करते हैं, उसकी आलोचना करते हैं, वे प्रेमचंद-साहित्य को प्रेमचंद की दृष्टि से देखने-समझने के लिए कैसे तैयार हो सकते हैं? वे कैसे प्रेमचंद की वास्तविक मूर्ति से आपका परिचय करा सकते हैं और इस कारण हम उनकी व्याख्याओं तथा स्थापनाओं पर कैसे विश्वास कर सकते हैं? प्रेमचंद के साथ इन प्रगतिशील आलोचकों ने जैसा धोखा किया है तथा उनका अवमूल्यन किया है, वैसा कोई दूसरा उदाहरण हिंदी साहित्य के इतिहास में नहीं मिलेगा।

प्रेमचंद पर वामपंथी आलोचकों ने जो भी मिथक गढ़े, वे अधिकांशतः तथ्य एवं तर्कों पर आधारित नहीं थे, जबकि वे यह दावा करते हैं कि दुनिया की सबसे बड़ी वैज्ञानिक बुद्धि उनके ही पास है। वामपंथियों ने प्रेमचंद को आधुनिक अभिमन्यु की तरह चारों ओर से घेर लिया, क्योंकि वे जानते थे कि प्रेमचंद प्रतिवाद करने के लिए नहीं आ सकते। इस तरह वामपंथियों ने स्वयं को प्रेमचंद का वारिस घोषित कर दिया, वे अब प्रेमचंद के मालिक थे और उनकी विरासत के हकदार।

प्रेमचंद पर वामपंथी आलोचकों ने जो भी मिथक गढ़े, वे अधिकांशतः तथ्य एवं तर्कों पर आधारित नहीं थे, जबकि वे यह दावा करते हैं कि दुनिया की सबसे बड़ी वैज्ञानिक बुद्धि उनके ही पास है। वामपंथियों ने प्रेमचंद को आधुनिक अभिमन्यु की तरह चारों ओर से घेर लिया, क्योंकि वे जानते थे कि प्रेमचंद प्रतिवाद करने के लिए नहीं आ सकते। इस तरह वामपंथियों ने स्वयं को प्रेमचंद का वारिस घोषित कर दिया, वे अब प्रेमचंद के मालिक थे और उनकी विरासत के हकदार। प्रेमचंद पर वामपंथियों के इस मालिकाना माहौल के बीच मैंने प्रेमचंद को समझने तथा उन पर कुछ नए प्रकार का काम करने का निर्णय किया और शोध-कर्म के साथ प्रेमचंद संबंधी दस्तावेजों, पत्रों, पांडुलिपियों, अज्ञात साहित्य आदि को एकत्र करने का निर्णय लिया। इस कार्य में मुझे विशेषतः अमृतराय, रायकृष्ण दास, मुरारीलाल केडिया, रघुबीर सिंह, उदय शंकर शास्त्री आदि के साथ अनेक पुस्तकालयों का सहयोग मिला। इस संग्रह से प्रेमचंद के मूल्यांकन तथा मार्क्सवाद तक सीमित करने के रहस्य खुलने लगे और मैंने पाया कि प्रेमचंद के जीवन, साहित्य तथा विचार के संबंध में अनेक ऐसे झूठे मिथक गढ़े गए हैं, जिसके कारण प्रेमचंद की असल मूर्ति कहीं गायब हो गई है। इस नई अज्ञात-अप्राप्य तथा गुमशुदा सामग्री से पहले मेरे मन में प्रेमचंद की मार्क्सवादी व्याख्या-स्थापनाओं आदि के प्रति कोई गहरा अविश्वास नहीं था, क्योंकि उसी माहौल में मैं अपनी साहित्य की समझ विकसित कर रहा था, परंतु इस सामग्री ने मुझे यह स्पष्ट कर दिया कि प्रेमचंद के साथ वामपंथियों ने बड़ा अत्याचार किया है और उन पर अपना राजनीतिक दर्शन आरोपित कर अनेक झूठे मिथकों में उन्हें बाँधकर रख दिया है। इस निष्कर्ष के बाद मैंने प्रेमचंद के जीवन, साहित्य और विचार के संबंध में, नई सामग्री के आधार पर, लिखना शुरू किया, जो आज तक निरंतर चल रहा है। मैं यहाँ इन तीनों विषयों पर प्रेमचंद के संबंध में कुछ रोशनी डालना चाहता हूँ, परंतु कृपया यह ध्यान में रहे कि मैं प्रेमचंद का रिसर्चर हूँ, शोधकर्ता हूँ, प्रेमचंद का अंध-भक्त नहीं और न उन्हें वामपंथियों की तरह किसी पार्टी के जाल में फँसाना चाहता हूँ।

मैं सबसे पहले प्रेमचंद के जीवन को लेता हूँ। आपने अमृतराय द्वारा अपने पिता की लिखी जीवनी 'प्रेमचंद : कलम के सिपाही' पढ़ी होगी या उसके बारे में सुना होगा तथा आपने अपने जीवन में उनके बारे में अनेक लोक-विश्वास भी सुने होंगे, लेकिन कुछ ऐसे हैं, जो तथ्यों पर आधारित नहीं हैं। प्रेमचंद पर मैं जब उनकी कालक्रमानुसार अर्थात् तारीखवार जीवनी ('प्रेमचंद विश्वकोश', खंड : एक 'जीवनी') लिख रहा था, तब मेरे सामने अनेक ऐसे तथ्य आए, जो प्रचारित तथ्यों के विपरीत थे और इस प्रकार नए तथ्य सामने आते गए। आप पढ़ते रहे हैं, सुनते रहे हैं कि प्रेमचंद गरीबी में पैदा हुए, गरीबी में जिंदा रहे और गरीबी में ही मर गए। यह डॉ. रामविलास शर्मा का कथन है। यहाँ तक कि उनके पास कफन तक के पैसे नहीं थे, पर खेदजनक है कि उपलब्ध दस्तावेजों से यह सिद्ध नहीं होता। प्रमाण अनेक हैं, पर दो-चार उदाहरण ही दूँगा। सन् १९२० में उनका वेतन सौ रुपए मासिक था, सन् १९२५ में 'रंगभूमि' उपन्यास के प्रकाशन पर उन्हें अठारह सौ रुपए अग्रिम रॉयल्टी मिली, सन् १९३४ में फिल्म कंपनी में काम करने बंबई गए तो वेतन था आठ सौ रुपए महीना, दिल्ली में रेडियो से दो कहानी का पाठ करने पर मिले अस्सी रुपए तथा जब उनका देहांत हुआ तो बैंक के दो खातों में थे लगभग पाँच हजार रुपए। इसके साथ उनके पास दो बीमा पॉलिसी थीं। यदि आप आज की मुद्रा में उस समय के रुपए को परिवर्तित करेंगे तो सहज रूप से इस मत पर पहुँचेंगे कि प्रेमचंद की गरीबी का तथा कफन तक के पैसे न होने का मिथक झूठा है। इसके बाद उनके जीवन के दो-तीन प्रसंगों की और चर्चा करूँगा। प्रेमचंद ने अपनी बेटी कमलादेवी के अस्वस्थ होने पर पं. रामदास गौड़ से भूत-प्रेत को शांत करने का यज्ञ कराया था, बेटी की शादी में दहेज दिया था और हिंदू विधवा के पुनर्विवाह का अपना विचार वापस ले लिया था। अमृतराय ने ऐसे तथ्यों का कोई उपयोग नहीं किया, जबकि उनके पास इनके प्रमाणित दस्तावेज थे। यहाँ तक कि उन्होंने प्रेमचंद के देहांत और उनकी शव-यात्रा का विवरण भी गलत दिया और ऐसा विवरण दिया कि उनकी शव-यात्रा में कोई लेखक शामिल नहीं था। मेरी खोज के बाद यह तथ्य सामने आया कि जैनेंद्र कुमार, जयशंकर प्रसाद, नंददुलारे वाजपेयी, परिपूर्णानंद वर्मा, पं. वाचस्पति पाठक आदि उनकी शव-यात्रा में थे और प्रसाद का तो प्रेमचंद की पत्नी शिवरानी देवी से बहुत ही भावुक संवाद हुआ था। यहाँ तक कि देहांत के आठ-दस दिन पहले निराला तथा अज्ञेय मिलने आए थे। मेरे विचार में जब कोई पुत्र अपने पिता की जीवनी लिख रहा हो तो तथ्यों का विलोपन तथा कुछ को गौरवान्वित करना स्वाभाविक सा हो जाता है। मेरा सोचना है, एक कालजयी लेखक भी मनुष्य होता है, वह भी गुणावगुणों का पुंज होता है और वह निश्चय ही देवता नहीं, मनुष्य होकर ही बड़ा हो सकता है। गांधी बड़े इसलिए हैं कि उन्होंने

अपनी आत्मकथा में जीवन की दुर्बलताओं का भी उद्‌घाटन किया है।

अब आपको मैं प्रेमचंद के साहित्य की ओर ले चलता हूँ। प्रेमचंद की अज्ञात-अप्राप्य साहित्य की खोज में अमृतराय का काम मील का पत्थर है। उन्होंने सन् १९६२ में प्रेमचंद के ऐसे साहित्य की नौ पुस्तकें प्रकाशित की थीं, जिनमें सैकड़ों पृष्ठों का अज्ञात-अप्राप्य साहित्य था। उस समय मैंने प्रेमचंद पर कार्य शुरू किया था और इस विपुल साहित्य की खोज से पूरा हिंदी-संसार हतप्रभ था। अमृतराय के कार्य की भरपूर सराहना हुई और वे साहित्य अकादमी द्वारा सम्मानित हुए। उस समय तथा कुछ वर्षों तक यह मान लिया गया कि प्रेमचंद का संपूर्ण ज्ञात-अज्ञात साहित्य सामने आ गया है, परंतु मुझे क्रमशः यह स्पष्ट होता गया कि अभी काफी कुछ शेष बचा है जिसे ढूँढ़ना चाहिए और उसे साहित्य-संसार के सामने लाना चाहिए। मैंने खोज का सिलसिला जारी रखा और सन् १९८८ में भारतीय ज्ञानपीठ ने मेरे द्वारा खोजी सामग्री को 'प्रेमचंद का अप्राप्य साहित्य' (दो खंड) के नाम से प्रकाशित किया। इसमें लगभग १४०० पृष्ठों की प्रेमचंद के साहित्य की वह सामग्री थी, जो हिंदी-संसार क्या, उनके पुत्रों तक को ज्ञात नहीं थी। इसमें ३० तो कहानियाँ ही हैं, सैकड़ों पत्र, लेख, समीक्षा, संस्मरण और दस्तावेज थे। भारत के आधुनिक साहित्य के इतिहास में और संभवतः विश्व साहित्य में इतने विपुल अज्ञात साहित्य की खोज की यह एकमात्र घटना थी। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि प्रेमचंद की अनेक ज्ञात-अज्ञात कहानियाँ पाठकों के सामने से ओझल कर दी गईं और प्रेमचंद की चिंताओं तथा संवेदनाओं का एक महत्त्वपूर्ण संसार लुप्त सा हो गया। आपको मालूम है क्या कि प्रेमचंद ने एक कहानी परिवार-नियोजन पर लिखी थी, एक लेनिन के कामरेडों पर, जिसमें एक रूसी प्रेमिका प्रेमी से धोखा करके जार के गवर्नर से शादी कर लेती है। एक कहानी 'जिहाद', जो आज के जिहाद पर लिखी गई थी, एक कहानी जिसमें वे अवैध संतान की स्वीकृति में एक नया मानवीय तर्क देते हैं तथा एक अन्य कहानी जो 'लिव-इन-रिलेशनशिप' के दुष्परिणाम को दिखाती है तथा 'शूद्रा' कहानी भोले-भाले भारतीयों को छल-कपट से मॉरिशस आदि देशो में ले जाने की दुखद कथा कहती है।

उनके साहित्य में अनेक ऐसे कथा-प्रसंग हैं, जो देश के प्रति उनकी चिंताओं तथा सरोकारों को प्रकट करते हैं, पर वे कभी चर्चा के विषय नहीं बनते, क्योंकि आलोचक न तो इतनी खोज करता है और न इनसे उनका उद्‌देश्य ही सिद्ध होता है। इसके प्रकाशन ने हिंदी-संसार में बड़ी हलचल की और राजेंद्र यादव, सुधीश पचौरी जैसे वामपंथी लेखक भी इसकी प्रशंसा से स्वयं को नहीं रोक पाए। राजेंद्र यादव ने 'हंस' में लिखा कि यह खोज योरोपीय विश्वविद्यालयों में होने वाले शोध-कार्यों के समान उच्चकोटि की है। इसके बाद भी यह क्रम चलता रहा और इस पुस्तक के दूसरे संस्करण में, जो वाणी प्रकाशन ने अभी किया है, लगभग १०० पृष्ठों की नई सामग्री जोड़ी गई। इस खोज के दौरान प्रेमचंद की मूल पांडुलिपियों को खोजा गया, यहाँ तक 'शतरंज के खिलाड़ी' और 'गो-दान' की पांडुलिपि भी मिलीं तथा उनकी कुछ रचनाओं की आरंभिक रूपरेखाएँ भी मिलीं, जो अंग्रेजी में लिखी गई थीं। 'गो-दान' की रूपरेखा अंग्रेजी में है, जो मैंने प्रकाशित करा दी है। इन खोजों ने प्रेमचंद की वर्तमान अवधारणाओं को ही नहीं बदला, उनके अध्ययन की दिशाओं के नए द्वार भी खुले और यह स्पष्ट हुआ कि प्रेमचंद को समझने के लिए किसी विदेशी विचारधारा के स्थान पर भारतीय चिंतन परंपरा और स्वाधीनता के भारतीय संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में रखकर ही उनका मूल्यांकन करना होगा। स्वाभाविक था, इसके लिए प्रेमचंद के मूल पाठ तथा समग्र पाठ की अति आवश्यक थी। आपके सामने जब तक लेखक का समग्र साहित्य नहीं है और वह भी कालक्रम में नहीं है तो आपके सारे निष्कर्ष निरर्थक तथा अप्रामाणिक हो जाते हैं।

खेदजनक है, साहित्य के इस मूलभूत सिद्धांत को न तो वामपंथी आलोचकों ने समझा और न कभी इस प्रश्न को ही उठाया गया कि यदि लेखक के साहित्य को उसके प्रकाशन-क्रम में रखकर नहीं देखा जाएगा तो उसकी साहित्य-यात्रा के विकासात्मक स्वरूप को कैसे समझा जा सकता है? प्रेमचंद के साहित्य को, विशेषतः उपन्यासों एवं कहानियों को लेकर बड़ी अराजकता रही है। आप देखें कि 'मानसरोवर' के आठ खंडों में २०३ कहानियाँ हैं और उनका कोई प्रकाशन-क्रम नहीं है। जब प्रकाशक श्रीपतराय ने कुछ कहानियाँ एकत्र कर लीं तो 'मानसरोवर' के खंड छपते रहे। यहाँ तक कि इसके आरंभिक दो खंड प्रेमचंद ने ही प्रकाशित किए थे, परंतु उनमें भी ऐसी ही अराजकता विद्यमान है। अब स्थिति यह है कि 'मानसरोवर' अब 'नया मानसरोवर' के नाम से प्रकाशित कराया है और उसमें २०३ नहीं २९९ कहानियाँ हैं; वे सभी प्रकाशन-क्रम से लगाई गई हैं और कहानियों के संबंध में पूरा विवरण दिया गया है। जो लोग प्रेमचंद की विरासत के दावेदार हैं, यह कार्य उन्हें करना चाहिए था। हिंदी के मार्क्सवादी आलोचक डॉ. शिवकुमार मिश्र ने अमृतसर की संगोष्ठी में सन् १९८० में कहा था कि हमारी पीड़ा है कि गोयनका ने प्रेमचंद पर काम किया, हमने क्यों नहीं किया? डॉ. मिश्र ने इसका उत्तर नहीं दिया, क्योंकि वे जानते थे कि कम्युनिस्ट पार्टी के उद्‌देश्यों के अनुरूप प्रेमचंद की व्याख्या करते आ रहे थे और उनका लक्ष्य साहित्यिक नहीं राजनीतिक था। डॉ. मिश्र तथा उनके साथी लेखक तब भी यह जानते थे कि प्रेमचंद को 'प्रगतिशील लेखक संघ' का संस्थापक बनाकर वे वास्तव में हिंदी साहित्य की मुख्य धारा सांस्कृतिक राष्ट्रीय धारा को हाशिए पर डालकर प्रगतिशील साहित्य-धारा को प्रमुख धारा के रूप में स्थापित करके कम्युनिस्ट विचारधारा को देशभर में फैलाना चाहते हैं।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि प्रेमचंद 'प्रगतिशील लेखक संघ' के संस्थापक नहीं थे, वे तो इसके प्रथम अधिवेशन के अध्यक्ष भी नहीं होना चाहते थे और जिन पाँच-छह हिंदुस्तानी युवकों ने लंदन में 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना की थी, वे सब जमींदार-नवाबों के परिवार के युवक थे और उसका जो मेनिफेस्टो प्रेमचंद ने 'हंस' के जनवरी, १९३६ के अंक में प्रकाशित किया था, उसमें कम्युनिस्ट-दर्शन तथा उसकी कोई शब्दावली का इस्तेमाल नहीं किया गया था। उनमें केवल

सज्जाद जहीर ही प्रेमचंद को एक उर्दू लेखक के रूप में जानते थे और उन्होंने ही प्रेमचंद पर दबाव डाला कि वे 'प्रगतिशील लेखक संघ' के प्रथम अधिवेशन के सभापति हो जाएँ। सज्जाद जहीर समझ रहे थे और बाद में डॉ. रामविलास शर्मा भी कि प्रेमचंद की लोकप्रियता तथा समाज में उनकी स्वीकृति उनके राजनीतिक दर्शन को हिंदी क्षेत्रों में फैलाने में सहायक बनेगी। इसी कारण प्रेमचंद द्वारा जवाहरलाल नेहरू, जाकिर हुसैन आदि को सभापति बनाने के आग्रह पर भी सज्जाद जहीर ने उन्हें सभापति बनने के लिए तैयार कर लिया, लेकिन यह प्रेमचंद का भारत-प्रेम ही था कि उन्होंने अपने व्याख्यान में भारतीय जीवन-मूल्यों को ही स्थापित करने पर बल दिया। यह वामपंथियों की खूबी है कि उन्होंने प्रेमचंद द्वारा 'प्रगतिशील लेखक संघ' के उद्घाटन की घटना को इतनी बार घोषित किया कि वे प्रगतिशील साहित्य-धारा के संस्थापक और वामपंथी साहित्य के मसीहा मान लिये गए तथा वामपंथी उनकी विरासत के असली हकदार बन गए।

प्रेमचंद ने अपने अंतिम समय में लिखा था कि लोगों का चरित्र ही निर्णायक तत्त्व है, क्योंकि कोई समाज-व्यवस्था नहीं पनप सकती, जब तक कि हम व्यक्तिशः उन्नत न हों। इसीलिए वे खूनी क्रांति अथवा रक्तिम समाजवाद की बात नहीं करते, वे सारा जीवन आत्म-परिष्कार, आत्मोत्सर्ग, वृत्तियों का परिष्कार, मन का संस्कार तथा देवत्व की जागृति की चर्चा करते हैं और उन्हें अपने साहित्य का प्रयोजन बनाते हैं।

अभी मेरे सामने प्रेमचंद के विचार-पक्ष के नए उद्घाटनों का परिचय देना बाकी है। प्रेमचंद विचारधारा के कई पक्ष हैं—स्वयं प्रेमचंद अपने विचार एवं सरोकारों के बारे में क्या कहते हैं, उनके समकालीन आलोचक तथा बाद के आलोचक किस प्रकार उनकी व्याख्या करते हैं तथा किस प्रकार उनकी विचारधारा को मुख्यतः वामपंथी लेखक उन्हें वामपंथी लेखक होने की स्थापना का आंदोलन चलाते रहे हैं। प्रेमचंद के विचारों की कुछ जानकारी मैं आरंभ में दे चुका हूँ, अतः उसकी आवृति की आवश्यकता नहीं है। बस इतना ध्यान रहे कि प्रेमचंद वाल्मीकि, वेदव्यास, तुलसी, कबीर आदि की परंपरा के संवाहक साहित्यकार हैं। उनके सामने अपने समय का भारत है, भारत-दुर्दशा है और भारत के स्वत्व-बोध एवं अस्मिता की रक्षा के साथ औपनिवेशिक शासन से मुक्त होने की चुनौती है। भारत की आत्मा की रक्षा के लिए स्वराज्य आवश्यक है और स्वराज्य से ही भारत की आत्मा से साक्षात्कार हो सकता है तथा उसे संजीवनी मिल सकती है। प्रेमचंद के पास भारतीयता का एक स्वप्न है, जैसा कि स्वामी विवेकानंद एवं महात्मा गांधी के पास भी भारत की मुक्ति का एक स्वप्न था। स्वामी विवेकानंद अपने विचार-दर्शन, गांधी आचरण से और प्रेमचंद अपने लेखकीय धर्म से स्वप्न को आकार दे रहे थे।

प्रेमचंद के मन-मानस की रचना में उर्दू में पढ़ी रामायण, महाभारत, पुराण आदि संस्कृत साहित्य, हिंदी में अनूदित बांग्ला, मराठी आदि साहित्य तथा अंग्रेजी में इंग्लिश, फ्रेंच, रूसी साहित्य का योगदान है। उन्होंने आरंभ में रवींद्रनाथ टैगोर की कहानियों का उर्दू में अनुवाद किया था और स्वामी विवेकानंद, रामायण और महाभारत, हिंदू सभ्यता और लोकहित, कालिदास आदि पर लेख लिखे तथा वाल्मीकि एवं व्यास की प्रशंसा की कि उन्होंने अपने पात्रों को 'पूर्ण मनुष्य' बनाकर प्रस्तुत किया। वे अपने इन आरंभिक लेखों में भारतीय सभ्यता के गुणों की प्रशंसा, ईसाई धर्म और पश्चिमी सभ्यता के दुष्प्रभावों तथा हिंदुस्तानियों द्वारा अंग्रेजों से तुलना में स्वयं को धिक्कारना तथा हीन समझने की आलोचना करते हैं। बंग-भंग की घटना उनके देश-प्रेम को इतना सशक्त एवं सक्रिय बना देती है कि उसके प्रभाव में सन् १९०८ में देशप्रेम की पाँच कहानियाँ लिखते हैं और 'सोजेवतन' कहानी-संग्रह में प्रकाशित कराते हैं। इसकी एक कहानी 'दुनिया का सबसे अनमोल रत्न' में देश-रक्षा के लिए बहनेवाला खून दुनिया का सबसे अनमोल रत्न है और एक हिंदू सैनिक युद्ध के मैदान में 'भारत माता की जय' कहकर प्राण त्यागता है। इस प्रकार वे अपना आरंभिक साहित्यिक जीवन देशभक्ति तथा एक नई राष्ट्रीय चेतना से शुरू करते हैं, जिसकी प्रेरणा उन्हें बंगीय साहित्य और बंगीय राजनीतिक उथल-पुथल से मिलती है। यद्यपि वे इससे पूर्व ही सांस्कृतिक-राष्ट्रीय जागरण के अंग बन चुके थे।

उस समय का नवजागरण सर्वव्यापी था और समाज के विभिन्न अंगों में कायाकल्प की नई चेतना आंदोलन का रूप ले रही थी। इसका परिणाम हुआ कि प्रेमचंद का कथा साहित्य एक प्रकार से राष्ट्र एवं स्वराज्य के कथात्मक महासमर का आख्यान बन गया और यह भी कहा गया कि प्रेमचंद स्वाधीनता संग्राम और गांधीवाद के साहित्यिक संस्करण थे। प्रेमचंद की इस साहित्यिक जागृति में समाज, संस्कृति, संप्रदाय, भाषा आदि सभी में एक नई जागृति, एक नए परिवर्तन तथा एक प्रकार से कायाकल्प का आह्वान था। उन्होंने भारतीय समाज में जागृति, मुक्ति और आमूलचूल परिवर्तन की चेतना उत्पन्न की, कृषि संस्कृति की रक्षा की ओर ध्यान आकर्षित किया, लघुतम समाज के शोषण एवं दमन से मुक्ति की लड़ाई लड़ी तथा सांप्रदायिक सद्भाव तथा सामरस्य की अनिवार्यता सिद्ध की। प्रेमचंद ने लगभग तीन हजार पात्रों की सृष्टि करके भारतीय जीवन की विराटता के साथ सभी प्रमुख धर्मों, वर्णों, वर्गों, जातियों के पात्रों की कहानियाँ लिखीं, जिसमें सभी प्रकार के पात्रों के साथ विदेशी पात्र, पशु-पक्षी, धर्म-प्रवर्तक, इतिहास-पुरुष, देवी-देवता तथा बाल-पात्रों तक को स्थान मिला। वे एक ऐसी युवा पीढ़ी को भी जन्म देते हैं, जो व्यक्ति, समाज और देश के लिए अराष्ट्रीय तथा अमानवीय परिस्थितियों, रूढ़ियों तथा शासकीय अन्यायों से टकराती है और समाज को बेहतर जीवन देना चाहती है। वे अपने समय के ही नहीं, बाद के कथा-साहित्य में भी एकमात्र ऐसे कथाकार हैं, जो युवा पीढ़ी को राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, सामाजिक आदि जड़ता, दासता एवं हीनता के विरुद्ध खड़ा करते हैं, यह युवा पीढ़ी प्रश्न और विद्रोह करती है और एक आधुनिक भारतीय समाज की रचना का स्वप्न देखती है। आप देखेंगे कि प्रेमचंद के पात्र पुरातनता, मध्ययुगीनता और आधुनिकता को एक साथ जीते हैं,

परंतु उनके स्वप्न में ऐसा भारत है, जो एकता, समता, स्वाधीनता, स्वत्व एवं अस्मिता-बोध के साथ व्यक्तिश: उन्नति का आदर्श सामने रखता है।

प्रेमचंद ने अपने अंतिम समय में लिखा था कि लोगों का चरित्र ही निर्णायक तत्त्व है, क्योंकि कोई समाज-व्यवस्था नहीं पनप सकती, जब तक कि हम व्यक्तिश: उन्नत न हों। इसीलिए वे खूनी क्रांति अथवा रक्तिम समाजवाद की बात नहीं करते, वे सारा जीवन आत्म-परिष्कार, आत्मोत्सर्ग, वृत्तियों का परिष्कार, मन का संस्कार तथा देवत्व की जागृति की चर्चा करते हैं और उन्हें अपने साहित्य का प्रयोजन बनाते हैं। उनकी मृत्यु से एक महीने पहले 'हंस' का सितंबर, १९३६ का अंक छपा था और इसमें उनका प्रसिद्ध लेख 'महाजनी सभ्यता' प्रकाशित हुआ था। वामपंथी आलोचना में इस लेख की बार-बार चर्चा होती है कि प्रेमचंद ने अंतिम समय में रक्तिम क्रांति का दर्शन स्वीकार कर लिया था, परंतु यह खेदजनक है कि यह आलोचक यह नहीं बताते कि इसी अंक में उनकी कहानी 'रहस्य' भी छपी थी, जिसका प्रतिपाद्य है कि मानवीय सेवा से ही देवत्व की उपलब्धि होती है, अर्थात् वे अपनी अंतिम प्रकाशित रचना में 'देवत्व' के भारतीय मूल्य की ही स्थापना करते हैं। अत: प्रेमचंद की वसीयत का निर्णय खूनी क्रांति से नहीं 'देवत्व' की उपलब्धि से ही होगा, जो मनुष्य को मनुष्यता के सर्वोच्च शिखर की प्राप्ति कराती है।

प्रेमचंद के इस विराट् एवं भव्य भारतीय जीवन के चित्रण में पूरी दृढ़ता के साथ आत्मा का अस्तित्व बना हुआ है। वे अपने पात्रों को आत्म-परीक्षाओं से गुजारते हैं और उन्हें श्रेष्ठ मनुष्य के रूप में पेश करते हैं। इस प्रकार वे अपने पात्रों की आत्मा के शिल्पी हैं और पाठक के भी। वामपंथी मुक्तिबोध तक ने माना कि प्रेमचंद हमारी आत्मा के शिल्पी हैं तथा वे अपने पात्रों की उदारता, उदात्तता, नैतिकता और मानवीय गुणों से हमें अपने आत्म एवं समाज के प्रति उन्मुख करके एक अच्छा मानव बनाने लगते हैं। यहाँ मैं 'महाभारत' के यक्ष-युधिष्ठिर के प्रसंग का उल्लेख करना चाहूँगा, जिसमें युधिष्ठिर यक्ष के कहने पर भी अपने सहोदर भाई के स्थान पर सौतेले भाई नकुल की प्राणरक्षा करने का आग्रह करता है। यक्ष द्वारा कारण पूछने पर युधिष्ठिर कहता है कि यदि मैं ऐसा नहीं करता तो मेरे भीतर का मनुष्य भाव मर जाएगा, यदि मैं पहले सौतेली माता के प्रति अपने दायित्व को भूल जाऊँगा। युधिष्ठिर का यह मानुष-भाव भारतीय साहित्य का प्राणतत्त्व है, यह प्रेमचंद साहित्य में आपको पूरे सौंदर्य के साथ मिलेगा। आपने 'मंत्र' कहानी पढ़ी होगी। एक बूढ़ा भगत ऐसे डॉक्टर के बेटे को विषदंश से बचाता है, जिसने उसके एकमात्र बीमार बचे बेटे को देखने से मना कर दिया था और जो इसके कारण मर गया था। आपने 'गो-दान' भी पढ़ा होगा, इसमें होरी राम अपने ऐसे भाई के परिवार का भरण-पोषण करता है, जिसने उसकी गाय को जहर दे दिया था और जो अपनी मृत्यु के समय उससे मिलकर स्वर्गीय आनंद की अनुभूति करता है। यहाँ तक कि 'कफन' कहानी में प्रेमचंद मानुष-भाव की रक्षा करते हैं। घीसू और माधव मधुशाला में कुछ खाते-पीते हैं, परंतु वे भी दूर खड़े भिखारी को बचा हुआ भोजन देकर सुख की अनुभूति करते हैं।

प्रेमचंद साहित्य में तो मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी भी मानवीय संवेदनाओं तथा मानवीय उत्कर्ष से परिपूर्ण दिखाई देते हैं। प्रेमचंद की मानुषता, मानवीय संवेदना को भारतीय आत्मा कहें, भारतीयता कहें, भारतीय संस्कृति कहें, इन सभी के मूल में मनुष्य होना ही सबसे बड़ा सत्य है। भारतीयता के जितने भी गुण हैं, उसका जो भी स्वरूप है, वह किसी ग्रंथ या पैगंबर के धर्म के अनुरूप नहीं है, उसे किसी बंधन में नहीं बाँधा जा सकता है। यह भारतीयता हम भारतीयों का स्वभाव है, जो हजारों वर्षों से हमारे मन में विद्यमान है। हम जानते हैं कि मनुष्य से श्रेष्ठ कोई नहीं है इस धरती पर और यह भी कि मनुष्यता का आचरण ही सबसे बड़ा धर्म और संस्कृति है। इस कारण प्रेमचंद को केवल साम्राज्यवाद एवं सामंतवाद के विरोध तक सीमित करना अथवा उन्हें ग्रामीण जीवन का अथवा गांधीवाद का कथाकार बनाकर संकुचित करना उनके विराट् मानवीयता के संसार को सीमित करना है और अज्ञेय के अनुसार जो उनकी 'महाकरुणा' है, उसकी गहरी संवेदना को खंडित करना है। प्रेमचंद को वामपंथी बनाने के मूल में प्रेमचंद ओझल हो जाते हैं और पार्टी का विचार प्रमुख बन जाता है और जो इसका खंडन करता है तथा तर्क के साथ देता है, उसका खंडन करने में असमर्थ होने पर उसकी नीयत पर आक्रमण होता है कि वह हिंदूवादी है, प्रतिक्रांतिवादी है, सेठाश्रयी है। आपको विवेक का ऐसा पतन केवल प्रगतिशील आलोचना में मिलेगा, जहाँ शिविरबंदी और पक्षधरता मानसिक रुग्णता बन जाती है। प्रेमचंद ने अपनी मृत्यु के आठ-दस दिन पहले अज्ञेय से कहा था कि कुछ लोग उनके विचारों का सम्मान नहीं करते, बल्कि उनके विचारों के इस्तेमाल की कोशिश करते हैं। अज्ञेय कहते हैं कि प्रेमचंद स्वयं इस इस्तेमाल से बचते रहे, परंतु उनके बाद दशकों तक प्रेमचंद का इस्तेमाल राजनीतिक उद्देश्यों से होता गया और उनकी भारतीय विवेक चेतना, जो उनकी राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक चेतना का ही समन्वित रूप था, उसकी उपेक्षा ही नहीं अपमानित भी किया जाता रहा। प्रेमचंद इस भारतीय विवेक चेतना से देश की मुक्ति का महासमर लड़ रहे थे और औपनिवेशक दूषण से अपनी संस्कृति की रक्षा भी कर रहे थे और वे अपने इतिहास का भी समुचित उपयोग भी कर रहे थे।

वामपंथी लेखक प्रेमचंद को इतिहास-विरोधी दिखाते हैं, परंतु सत्य यह है कि प्रेमचंद हिंदू संस्कृति, राम, कृष्ण, विक्रमादित्य, वाल्मीकि, कालिदास, तुलसी, प्रताप, शिवाजी आदि अनेक राष्ट्रपुरुषों की प्रशंसा करते हैं। उनकी लगभग १५ कहानियाँ इतिहास-पुरुषों पर हैं तथा राम के जीवन पर लिखी जीवनी है। उनका इतिहास-दर्शन इन पंक्तियों से समझा जा सकता है, जो उन्होंने अपने 'कर्बला' लेख में लिखा है, ''हिंदू जाति यदि अपने पुरखाओं को किसी धर्म-संग्राम में आत्मोत्सर्ग करते हुए देखकर प्रसन्न न हो, तो सिवाय इसके और क्या कहा जा सकता है कि हममें वीर-पूजा की भावना ही नहीं रही, जो किसी जाति के अध:पतन का अंतिम लक्षण है। जब तक हम अर्जुन, प्रताप, शिवाजी आदि वीरों की पूजा और उनकी कीर्ति पर गर्व करते हैं, तब तक हमारे पुनरुद्धार की कुछ आशा हो सकती है। जिस दिन हम इतने जाति-गौरव शून्य हो जाएँगे

कि अपने पूर्वजों की अमर-कीर्ति पर आपत्ति करने लगें, उस दिन हमारे लिए कोई आशा न रहेगी। हम तो इस चित्त-वृत्ति की कल्पना करने में भी असमर्थ हैं, जो हमारे अतीत-गौरव की ओर इतना उदासीन हो।'' प्रेमचंद की इस टिप्पणी पर कोई टिप्पणी नहीं करूँगा। आप स्वयं इसका निष्कर्ष निकालें और देखें कि क्या इस प्रेमचंद को आप जानते हैं। इस पर भी वामपंथी आलोचक प्रेमचंद में वस्तुनिष्ठता और यथार्थवादी क्रांतिकारी समाजवाद की बात करते हैं, परंतु ऐसा यथार्थ नहीं हो सकता, जो आदर्श से शून्य हो और आदर्श ठोस जीवन-दृष्टि के अभाव में अर्थहीन एवं निरर्थक होगा। इसीलिए प्रेमचंद का एक पक्ष मंगल का है और दूसरा अमंगल से मुक्ति का। यही प्रेमचंद का 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' है, यही उनका 'मंगल भवन अमंगल हारी है', यही उनकी भारतीयता है, यही उनकी विरासत और यही उनका मंगलसूत्र है।

और अंत में, वाराणसी महादेव की नगरी है, परंतु यह उस नगरी का प्रताप है कि हिंदी साहित्य के तीन सम्राटों की वह कर्म-क्षेत्र रही। ये तीन सम्राट् हैं—काव्य-नाटक सम्राट् जयशंकर प्रसाद, आलोचना-सम्राट् आचार्य रामचंद्र शुक्ल और कथा-सम्राट् प्रेमचंद। आरंभिक दो सम्राट् संस्कृत साहित्य एवं भाषा में पारंगत थे, परंतु प्रेमचंद उर्दू-फारसी के संस्कार में दीक्षित होकर आए थे, लेकिन उन्होंने हिंदी भाषा का मानक रूप दिया और रचनात्मकता में भी इन दो सम्राटों की तुलना में अपना नया मार्ग चुना तथा भारतीय जनता को कथा में स्थान देकर अपने कथा साहित्य को विराटता, भारतीयता और उच्चतम मानवीयता एवं सर्वोन्मुखी कायाकल्प से समृद्ध किया तथा इस महान् राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जागरण एवं भारतीयता के उन्मेष ने हिंदी कथा-साहित्य में 'प्रेमचंद युग' की स्थापना की। आज तक 'प्रेमचंद युग' का कोई विकल्प सामने नहीं आया और जैनेंद्र, अज्ञेय, यशपाल, नागर, धर्मवीर भारती जैसे बड़े लेखक भी अपनी ऐसी पहचान नहीं छोड़ सके। यहाँ तक कि प्रसाद और रामचंद्र शुक्ल भी भारत की सीमा तक ही सीमित रहे, परंतु प्रेमचंद ही वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, तुलसीदास और टैगोर के समान दिग्विजय में सफल हुए। इस देश का वही साहित्यकार अमरत्व प्राप्त कर सकता है, जो भारतीयता, भारतीय विवेक और अस्मिता का रक्षक हो, मानवीयता का संस्थापक तथा लोक-मंगल का गायक हो। प्रेमचंद ने इसी साहित्य-धर्म को अपनाया और इसी कारण वे आज भी कथा-सम्राट् के सिंहासन पर विराजमान हैं। भविष्य में भी इस देश में वही साहित्यकार अमरत्व प्राप्त कर सकेगा, जो भारतीयता की इस विरासत का वारिस बनने को तैयार होगा। आशा है, हमें और अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी होगी।

ए-९८, अशोक विहार,
फेज प्रथम, दिल्ली-११००५२
दूरभाष : ९८११०५२४६९

बाल-कहानी

बीज की आत्मकथा

• प्रेम किशोर 'पटाखा'

दो बीज धरती की गोद में आ पड़े। मिट्टी ने उन्हें ढँक दिया। दोंनो रातभर सुख की नींद सोए। प्रात:काल दोनों की आँख खुली। एक बीज मिट्टी से बाहर निकलने की कोशिश करने लगा। जबकि दूसरा बीज आलस में आँखें बंद किए वहीं पड़ा रहा। उसने सोचा, बाहर के कोलाहल से तो मैं यहीं सुरक्षित हूँ।

दूसरा बीज हिम्मत करके धरती से मिट्टी फोड़कर बाहर निकल आया। बाहर की सुगंध ने उसे मोहित कर दिया। हवाओं ने उसे स्पर्श किया। जीवन जीने में उसे आनंद आने लगा।

प्रकृति के प्रेम में वह झूमने लगा। सोचने लगा, संसार का सबसे बड़ा सुख यहीं प्रकृति की गोद में है। देखते-ही-देखते वह आगे बढ़ने लगा। झूमता-लहलहाता, मौसम के रथ पर सवार अपनी जीवन-यात्रा से जुड़ गया। बीज से वह वृक्ष बना और फिर वृक्ष भी फल देने लगा। एक समय ऐसा आया कि वह संसार से विदा हो गया।

मिट्टी के नीचे दबा दूसरा बीज यह देखकर पछताने लगा। भय और संकीर्णता के साथ जहाँ था, वहीं रहा। उसमें कीड़े लग गए। वह खोखला हो गया और वहीं मिट्टी में दबे-दबे ही मर गया।

एक दिन समय ने उन्हें फिर एक साथ मिला दिया। पहला बीज जो आगे बढ़कर सुगंध बिखेरता हुआ फूल बनकर मुसकरा रहा था। दूसरा उसके साथ काँटा बनकर चिपका था।

दोनों ने अपनी आत्मकथा एक-दूसरे को बताई। फूल बने बीज ने फिर उसका उत्साह बढ़ाया। 'मेरे साथ में माली तुझे भी अपने साथ ले जाएगा। आलस में पड़े मत रह जाना। हौसला रखना। जिनके साथ में हिम्मत-हौसला होता है, प्रकृति भी उनका ही साथ देती है।'

उसे बात पसंद आ गई। अब उसमें भी गजब का हौसला था। फिर दोनों बीज बने, एक साथ धरती से बाहर निकले।

दोनों प्रकृति की गोद में आकर झूमने लगे। सूरज की नन्हीं किरणों ने उन्हें दुलराया, घटाओं ने नहलाया, हवाओं ने मीठा संगीत सुनाया। सुगंध के स्पर्श से दोनों नई उमंग के साथ आगे बढ़ने लगे।

अब दोनों साथ-साथ झूमते-गाते गुनगुनाते।

एक दिन वृक्ष बने। फल देकर संसार से विदा हुए। वे जानते थे कि सृष्टि का यही चक्र है, जो हमें एक-दूसरे से बाँधे हुए है।

४३, लक्ष्मीपुरी, सराय हकीम
अलीगढ़ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९८९७०६७२७६

यादों में बचपन, जो मुझमें अब भी साँस लेता है···!

● प्रकाश मनु

मेरी कहानियों में नंदू भैया अकसर आते हैं। खूब गोल-मटोल से नटखट और शरारती नंदू भैया। जिंदगी से लबालब। खाने-पीने, खूब बढ़िया पहनने-ओढ़ने और हर नई चीज के शौकीन। थोड़ा सा रोब, मगर खासी मस्ती भी। ये नंदू भैया मेरे बड़े भाई हैं, श्याम भैया। मुझसे ढाई-तीन बरस बड़े श्याम भैया बचपन में मेरे हीरो थे, जिनसे चुपके-चुपके बहुत कुछ सीखा। श्याम भैया पास हों तो मुझे लगता था, सारी दुनिया मिलकर भी मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। अकेले श्याम भैया ही सब पर भारी पड़ेंगे। उनके होते दुनिया का कोई दु:ख-परेशानी मेरे अंदर झाँक भी नहीं सकती।

और यही नहीं, मुझे आसपास की जिंदगी से मजबूत डोर से जोड़नेवाले भी श्याम भाईसाहब ही थे, जिन्होंने मुझ घरघुसरे और एकांतवासी के लिए बाहरी दुनिया की खिड़कियाँ और गवाक्ष खोले तथा मुझे जाने-अनजाने यह सीख दी कि दुनिया बड़ी सुंदर और खूबसूरत शै है और इसका आनंद लेने के लिए थोड़ी सी आवारगी तो जरूरी है। और उसका सबसे बढ़िया ढंग है कि घर से निकल पड़ो। घर से निकलोगे तो तमाम दोस्त मिलेंगे, उनके साथ मस्ती, बतकही और घुमक्कड़ी करते जिंदगी अपने तमाम छिपे हुए पन्ने खोलती जाएगी।···उनका आनंद लोगे तो दुनिया तुम्हारे लिए इकसार नहीं, बल्कि भाँति-भाँति के चेहरोंवाली एक खूबसूरत और बहुरंगी दुनिया होगी, जिसका आकर्षण हर पल बढ़ता ही जाएगा। और यही सच मानी में, जिंदगी जीना भी है। जिंदगी जीना है तो अपने आसपास की हर छोटी-बड़ी चीज में रस लेना चाहिए और हर लम्हे को डूबकर जीना चाहिए।

खूब बड़ा परिवार था हमारा। सात भाई, दो बहनें। यों हम नौ भाई-बहन थे, जिनमें मेरा नंबर ऊपर से आठवाँ। बस, एक छोटा भाई सत मुझसे छोटा था, बाकी सब भाई-बहन बड़े। माता-पिता ने तो कभी पीटा नहीं, पर पाँच भाई जो बड़े थे, उनका शासन तो सिर पर था ही। इनमें बाकी भाई तो बड़े थे और उनसे थोड़ी दूरी भी रही, पर श्याम भैया तो मुझसे तीन-साढ़े तीन बरस बड़े थे। हर वक्त मेरी चुटिया उनके हाथ में रहती थी, और वे जब चाहें उसे खींच सकते थे। मैं आ-आ, ऊ-ऊ के सिवा भला और क्या कर सकता था? पर वे रोबीले इतने थे कि पीटकर रोने भी नहीं देते थे। अगर वे कहते, 'खबरदार जो जरा भी आवाज निकाली···!' तो मजाल है कि मुँह से जरा भी टसक बाहर निकल जाए।

यों बड़े भाइयों में श्याम भैया के साथ मैं सबसे ज्यादा रहा और उनकी बहुत मार खाई है। मगर श्याम भैया प्यार भी बहुत करते थे। वैसा प्यार भी शायद ही कोई और कर सके। श्याम के बारे में लिखने बैठूँ तो शायद दो-ढाई सौ पन्ने का ग्रंथ बड़े आराम से तैयार हो जाए। मैंने 'नंदू भैया की कहानी' में श्याम भैया के बारे में कुछ लिखा है या कहूँ कि लिखने की कोशिश की है। पर यह वैसा जीवंत और पेचीदा कहाँ है, जैसा खुद श्याम भैया का चरित्र था। मेरी बाल कहानियों की पुस्तक 'नंदू भैया की पतंगें' एक तरह से श्याम भाईसाहब को ही ट्रिब्यूट है। फिर भी यह चीज बराबर मन में आती है कि श्याम भैया को अभी भी मैं वैसा कहाँ दिखा पाया, जैसे असल में वे थे।

□

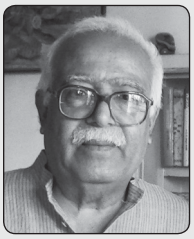

वरिष्ठ कवि-कथाकार। 'यह जो दिल्ली है', 'कथा सर्कस' और 'पापा के जाने के बाद' उपन्यास चर्चित हुए। 'एक और प्रार्थना', 'छूटता हुआ घर' कविता-संग्रह तथा 'अंकल को विश नहीं करोगे', 'अरुंधती उदास है' समेत ग्यारह कहानी-संग्रह। शिखर साहित्यकारों से मुलाकात, संस्मरणों और आलोचना की कई पुस्तकें। साहित्य अकादमी के पहले बाल-साहित्य पुरस्कार, उ.प्र. हिंदी संस्थान के 'बाल-साहित्य भारती' पुरस्कार तथा हिंदी अकादमी के 'साहित्यकार सम्मान' से सम्मानित।

कुक्कू, पग्गल है क्या···!

श्याम भैया मेरे लिए दुनिया से जुड़ने की अनिवार्य कड़ी तो थे ही। मगर सवाल यह है कि श्याम भैया क्या न थे। श्याम भैया न होते तो मैं क्या होता, कहाँ होता? उन्होंने ही मुझे उस समय और उस दुनिया से परिचित कराया, जिसके बगैर मेरा कुछ वजूद न था। मगर मैं उन सब चीजों से दूर, डरा-डरा सा रहता था। सिनेमा मैंने सबसे पहले श्याम भैया के साथ ही देखा और उन्होंने इतनी पिक्चरें दिखाईं कि उनका एक पूरा इतिहास ही है। इनमें 'भाभी' और 'छोटी बहन' की तो मुझे बड़ी अच्छी तरह याद है। मेला, नुमाइश और रामलीला जाना भी उन्हीं के साथ होता था। इसी तरह साइकिल पर मुझे आगे बैठाकर श्याम भैया ने न जाने कहाँ-कहाँ की और कितनी लंबी-लंबी सैर कराईं। मुझे लगता था, मैं श्याम भैया के साथ दुनिया की अनवरत परिक्रमा पर निकल पड़ा हूँ···और पहली बार दुनिया की ये खूबसूरत चीजें और सूरतें देख रहा हूँ। इसी तरह पतंगों की दुनिया के न जाने कितने रोमांच श्याम भैया से जुड़े हुए हैं।

श्याम भैया की साइकिल तो खुद में एक महाकाव्य है। महागाथा। उन्होंने मुझे साइकिल पर बैठाकर इतनी सैर कराई कि लगता था, उनकी साइकिल पर बैठकर ही मैं बड़ा हुआ और वहीं बैठे-बैठे जैसे मैंने छुटपन में ही सारी दुनिया की परिक्रमा कर ली हो। उनकी साइकिल के डंडे पर बैठकर शान से इधर-उधर देखते हुए चलने में इतना मजा आता कि लगता, जैसे मैं कोई नन्हा-मुन्ना सा राजा हूँ और सारी दुनिया का नजारा लेने के लिए निकला हूँ। वे सचमुच बड़े ही आनंद की घड़ियाँ होती थीं। गर्व और आनंद से छलछलाती उल्लसित घड़ियाँ।

पर चूँकि मैं राजा खुद को भले ही समझ रहा होऊँ, पर असल में तो डिर्रू था और यह खटका मन में बराबर लगा रहता था कि साइकिल इधर-उधर मोड़ते समय कहीं मैं टप्प से टपके की तरह नीचे न गिर जाऊँ। इसलिए आत्मरक्षा के लिए मैं साइकिल के हैंडिल को खूब कसकर पकड़ लेता था। कुछ ज्यादा ही जोर से। इससे श्याम भैया के लिए भारी मुसीबत हो जाती थी। इसलिए कि रास्ते में ट्रैफिक के हिसाब से या फिर सड़क में गड्ढे वगैरह होने पर जैसे-जैसे उन्हें साइकिल मोड़नी होती थी, उस तरह आसानी से मोड़ नहीं पाते थे। इससे उलटा साइकिल के डगमगाने या गिरने का खतरा पैदा हो जाता। तो उन्हें बार-बार आगाह करना पड़ता, 'कुक्कू, पग्गल है क्या!...हैंडिल को इतना कसकर क्यों पकड़ लिया है? आराम से पकड़ो, खूब ढीला सा, नहीं तो मैं साइकिल कैसे चला पाऊँगा?'

उस समय मैं हाथ की पकड़ कुछ ढीली कर देता, बस थोड़ी देर के लिए, पर आगे जैसे ही कोई धचका या मोड़ आता, मैं फिर से हैंडल कसकर पकड़ लेता। इससे उलटा साइकिल के गिरने का खतरा बढ़ जाता, क्योंकि श्याम भैया अपने ढंग से सहजता से साइकिल नहीं चला पाते थे, तो उन्हें डाँटना पड़ता, 'कुक्कू तेरे को अकल भी है? कितनी बार कह चुका हूँ, हैंडल को आराम से पकड़ना चाहिए। पर तेरे भेजे में ही नहीं घुसता। तू जरूर मुझे गिरवाकर मानेगा!'

इस समय उनकी बात मैं मान लेता, पर फिर मेरा डिर्रूपन हावी हो जाता तो मैं फिर वही गलती करता। इस चक्कर में उनसे एकाध थप्पड़ भी मैंने जरूर खाया होगा। तब थोड़ी सी अक्ल आई।

शुरू में तो श्याम भैया आगे डंडे पर बैठाकर चलाते, फिर पीछे कैरियर पर बैठाना शुरू किया। और मैं भी जैसे-जैसे बड़ा हुआ, कुछ आत्मविश्वास आया, भय खुद-ब-खुद कम होने लगा और मुझे समझ में आया कि साइकिल तो बड़ी मजेदार सवारी है। उससे डरने का क्या काम? साइकिल की सवारी तो आनंद लेने की चीज है। तो वे साइकिल चलाते और मैं पीछे बैठा हवा के साथ फर्राटे का आनंद लेता। कभी हवा ठंडी और बढ़िया होती, फिर तो कहना ही क्या!

□

चली-चली रे, मेरी साइकिल चली!

छठी कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते मेरे मन में साइकिल चलाने की लालसा बलवती होने लगी। मेरे पड़ोस में ही रहनेवाला दोस्त सत्ते साइकिल खूब अच्छी चलाता था। मुझसे वह एकाध बरस ही बड़ा था, पर पढ़ता मेरी ही क्लास में था। उसे मजे से हवा में फर्राटे भरते देख मन में अरमान पैदा होता, ''काश, मैं भी साइकिल चला पाता!'' मुझे लगता था, साइकिल चलाने से बड़ी कला इस दुनिया में कुछ और हो नहीं सकती। क्या ही मजे की बात है। झट साइकिल घर के अंदर से बाहर निकालो, पैडल पर पैर रखो और मिनटों में उड़न-छू हो जाओ।...यानी हवा में फर्राटे, वाह! साइकिल मेरे लिए धरती नहीं, परीलोक की कोई चीज थी। एकदम जादुई शै...!

मैंने सत्ते से कहा, ''सत्ते यार, मुझे भी सिखा दो साइकिल चलाना।'' तो उसने कहा, ''देख कुक्कू, यह कोई मजाक नहीं है। इसमें दो-चार बार गिरना पड़ता है। कभी-कभी तो दस-बीस बार भी। तू गिरेगा, चोट लगेगी तो रोएगा कि सत्ते ने गिरा दिया। क्या फायदा?''

मैंने कहा, ''नहीं रोऊँगा, तुम सिखाओ तो!''

सत्ते ने भरपूर कोशिश की, पर कामयाब नहीं हो पाया। मुझसे वह कोई साल भर बड़ा होगा। उसमें इतनी ताकत और फुरती भी थी कि गिरने-डगमगाने पर मुझे सँभाल ले। पर वही मेरा डिर्रूपन बीच में आ जाता। फिर उसने दिमाग लगाया और मुझे गद्दी पर बैठकर चलाने के बजाय कैंची सिखाने की कोशिश की। बोला, ''कुक्कू, तू पहले कैंची सीख ले। कैंची साइकिल चला लेगा तो साइकिल साधना आ जाएगा। फिर तू सीधा गद्दी पर बैठकर भी चला लेगा।''

सत्ते ने गरमी की छुट्टियों में दो-चार दिन लगातार साइकिल सिखाई और अभ्यास कराया तो मैंने बमुश्किल थोड़ी सी कैंची सीख ली। अब कैंची साइकिल चलाना क्या होता है, शायद आज के बच्चे न समझ पाएँ। पर उन दिनों साइकिल चलाने और साधने की यही एक मध्यमा प्रणाली थी कि पहले कैंची साधना सीख लो, फिर तुम्हें सीधा गद्दी पर बैठकर चलाना भी आ जाएगा। कैंची चलाने के लिए चालक को एक पैर पैडल पर रखकर दूसरा डंडे के ऊपर से दूसरी ओर ले जाने के बजाय, डंडे के नीचे से ही निकालना पड़ता था। इस तरह छोटे बच्चों को आसानी हो जाती थी। जिनके पैर सीधा चलाने में पैडल तक नहीं पहुँचते थे, वे इस तरह दोनों पैर पैडल पर रखकर चला सकते थे।

पर कैंची सीखने के बाद सीधा गद्दी पर बैठकर साइकिल चलाना भी कोई आसान बात नहीं थी। सत्ते ने दो-चार बार मेरे गिरने पर हाथ खड़े कर दिए। कारण यह था कि मेरे पैर पैडल तक पहुँचते ही नहीं थे। उसके लिए आगे पंजे को झुकाकर विशेष प्रयत्न करना होता था। मैं उस कोशिश में लगता तो हैंडल डगमगाने लगता। मैं खुद को सँभालने की कोशिश करता, पर इतने में ही अचकचाकर गिर जाता था।

जब श्याम भैया ने देखा तो उन्होंने मुझे साइकिल सिखाने का जिम्मा ले लिया। कहा, ''हट सत्ते, मैं सिखाता हूँ।'' और वाकई उन्होंने तीन-चार दिन में ही मुझे साइकिल चलाना सिखा दिया। हालाँकि मुझ सरीखे बुद्धू को सिखाने में उन्हें भी खूब पसीने आए। पर वे धुनी थे, जिस चीज पर आ जाते थे, उसे करके ही मानते थे। फिर वे मुझे डाँट भी सकते थे। जैसा-जैसा वह कहते थे, वैसा करना मेरी बाध्यता थी। और यों डरते-डरते भी मैं सीख गया।

हमारे घर के सामने काफी बड़ा सा मैदान है, वहीं मेरी अभ्यास स्थली थी। मैं खूब डरपोक, पर श्याम भैया भी बड़े विकट गुरु थे। कई बार मैं गिरा भी, खूब चोटें खाईं। खासकर घुटने जल्दी फूटते थे। कारण यह कि उस समय जिस तरह की रंग-बिरंगी बेबी साइकिलें आजकल नजर आती हैं, उनकी तो कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। न वे कहीं आसपास दिखाई पड़ती थीं। और अगर कहीं थीं भी, तो हम तो सपने में भी कल्पना नहीं कर सकते थे कि वैसी साइकिल हमारे लिए खास तौर से ले ली जाएगी। लिहाजा पूरे आकार की जो बड़ों की साइकिल थी, उसी पर बैठकर सीखना होता। उन दिनों साइकिलें दिनभर के लिए किराए पर भी मिल जाती थीं। तो कई बार किराए की साइकिल लाकर काम चलाते। मेरे पैर आराम से पैडल को छू नहीं पाते थे, तो पंजे का सहारा लेकर किसी तरह साइकिल को चलाने की कोशिश करता। चूँकि कैंची थोड़ी-थोड़ी सीख चुका था, इसलिए साइकिल साधने का थोड़ा अभ्यास हो गया था, वह बहुत काम आया। उसके बाद भय कम हो गया। मेरे पैर पैडल पर पूरे नहीं आते थे। तो कैसे पंजे से पहले पैडल को ऊपर की ओर लाकर फिर पैर से पैडल चलाना चाहिए, यह मैंने सीखा। फिर धीरे-धीरे अभ्यास हो गया।

श्याम भैया का साइकिल सिखाने का तरीका यह था कि वे मुझे गद्दी पर बैठा देते। पीछे कैरियर के पास से साइकिल पकड़कर साथ-साथ दौड़ते और कहते, ''कुक्कू, हैंडल खूब अच्छी तरह साधकर चलाओ।...तुम बस हैंडल साधने की प्रैक्टिस करो। मैंने पीछे से पकड़ा हुआ है, डरो मत...!'' मैं हैंडल साधने की कोशिश करता। कभी वह डगमगाता तो श्याम भैया सँभाल लेते और मैं गिरने से बच जाता। पूरा एक दिन पैडल चलाते हुए हैंडिल साधने का अभ्यास।

श्याम भैया का साइकिल सिखाने का तरीका यह था कि वे मुझे गद्दी पर बैठा देते। पीछे कैरियर के पास से साइकिल पकड़कर साथ-साथ दौड़ते और कहते, ''कुक्कू, हैंडल खूब अच्छी तरह साधकर चलाओ।...तुम बस हैंडल साधने की प्रैक्टिस करो। मैंने पीछे से पकड़ा हुआ है, डरो मत...!'' मैं हैंडल साधने की कोशिश करता। कभी वह डगमगाता तो श्याम भैया सँभाल लेते और मैं गिरने से बच जाता। पूरा एक दिन पैडल चलाते हुए हैंडिल साधने का अभ्यास। अगले दिन उन्होंने पीछे से पकड़ा और मैं साइकिल दौड़ाता। कहते, ''कुक्कू डरियो मत। चला, मैंने पीछे से पकड़ा हुआ है...!'' पर बीच-बीच में वे छोड़ देते। मेरे साथ-साथ तो चलते, पर पकड़ते न थे। और कई बार तो वे अपनी जगह पर ही खड़े रहते, पर हिम्मत बँधाने के लिए पीछे से लगातार आवाज देते, ''कुक्कू, कुक्कू, डर नहीं। मैंने पकड़ा हुआ है पीछे से, तू चला...!'' बाद में पता चला कि अरे, वे तो अपनी जगह खड़े हैं, साइकिल तो मैं ही खुद-ब-खुद चला रहा हूँ।

यों झिझक खत्म हुई, हिम्मत आई और आखिर मैं साइकिल चलाना सीख गया। उसके पीछे श्याम भैया और सत्ते, दोनों की बड़ी तपस्या थी। दोनों का ही मैं बेहद शुक्रगुजार हूँ। अफसोस, आज दोनों ही इस दुनिया में नहीं हैं, मैं कैसे उन्हें धन्यवाद दूँ, और किस-किस चीज के लिए धन्यवाद दूँ?

अलबत्ता साइकिल चलाना सीखा तो दिल में इतनी खुशी थी, जैसे मैंने दुनिया जीत ली हो। अब तो सारा-सारा दिन गलियों में पागलों और दीवानों की तरह साइकिल चलाता फिरता। यहाँ तक कि सपने भी साइकिल चलाने और सामनेवाली साइकिल से टक्कर खा के गिरने के आते। गिरता भी खूब था। उन दिनों निक्कर पहनता था, तो गिरने पर खूब घुटने फूटते थे। कितनी बार गिरा, इसका कोई हिसाब ही नहीं।... पर साइकिल चलाने की खुशी इस सब पर भारी थी। घर का कोई काम होता तो मैं झट साइकिल बाहर निकलता और दौड़ा देता। साइकिल पर बैठकर निकलता तो लगता, जैसे विश्व विजय पर निकला हूँ। कई बार खाली सड़कों पर यों ही हवा और फर्राटे खाने निकल पड़ता। सचमुच, साइकिल ने मेरे जीवन में रोमांच भर दिया था। और इसके साथ ही अब थोड़ा हिम्मत से जीना आ गया था।

□

उड़ी-उड़ी रे पतंग...बादलों के पार!

श्याम भैया पतंगें उड़ाने के भी शौकीन। वे अकसर शाम को छत पर पतंग उड़ाते तो हुचका सँभालने का जिम्मा मेरा। कभी वे खूब सारी ढील देने के लिए कहते तो हुचका ढीला पकड़ना पड़ता और जब वे डोर खींचने पर आते तो जमीन पर मंजे का ढेर लगना शुरू हो जाता और मुझे बिजली की सी तेजी से लपेटना होता, ताकि मंजा उलझ न जाए। मेरे इस शिष्यत्व में कभी उन्होंने कोई कमी नहीं निकाली। मैं एक आदर्श सहायक की भूमिका बड़ी अच्छी तरह निभाता, जिससे वे खुश रहते। यों समझिए कि मैं उनके इशारे पर काम करना सीख गया था।

हालाँकि कभी-कभी मेरी इच्छा होती कि काश, मैं भी पतंग उड़ा पाऊँ! इसकी कोशिश भी की। बाजार से कई बार पतंगें, डोर और हुचका लाया। पतंग के कन्ने बाँधना सीखा। श्याम भैया का कहना था, ''तुम अकेले उड़ाकर प्रैक्टिस करो, तभी सीख पाओगे।''

मैंने सत्ते की मदद ली। वह दूर खड़ा होकर पतंग की छुड़ैया देता और चिल्लाकर कहता, ''कुक्कू, साध...! अच्छी तरह साध ले!'' पर बड़ी कोशिश करने पर भी मैं सीख नहीं पाया। यह मेरी स्थायी असफलता है, जो आज भी भीतर-ही-भीतर करकती है और जिसका मलाल आज भी मेरे मन में है। जैसे मुझमें कोई अधूरापन है, जो सिर्फ पतंग उड़ा पाने से ही पूरा हो सकता था। और किसी बड़ी-से-बड़ी चीज से नहीं। बार-बार मन में हुड़क होती है, ''काश, मैं भी पतंग उड़ा पाता!''

हाँ, श्याम भैया ने एक काम जरूर किया। जब उनकी पतंग ऊपर गर्व से आसमान में जाकर बादलों से बात कर रही ही तो कभी-कभी थोड़ी देर के लिए डोर मेरे हाथ में पकड़ा देते। और मुझे लगता, ''ओह,

यह कितने सुख, कितने आनंद की बात है कि आकाश से बात करनेवाली पतंग मेरे हाथ में है!'' मैं डरते-डरते एकाध ठुमका भी लगाता। फिर अगर पतंग कुछ डगमगाती तो श्याम भैया आगे बढ़कर सँभाल लेते। जो भी हो, ये बड़े रोमांचक पल थे, जिनका थ्रिल अब भी महसूस होता है।

एक बार की बात, श्याम भैया ने 'भाभी' या न जाने कौन सी फिल्म देखकर सात पतंगें एक साथ उड़ाईं। हुआ यह कि फिल्म का नायक सात पतंगें एक साथ बाँधकर उड़ाता है। श्याम भैया ने देखा तो ठान लिया, ''मैं भी सात पतंगें उड़ाऊँगा एक साथ!''

उसके लिए बड़े जोर-शोर से तैयारियाँ शुरू हुईं। कोई महीने भर तक युद्ध स्तर पर काम चलता रहा। कभी बड़ा पक्का वाला मंजा तैयार हो रहा है, जिस पर लेई, पिसा हुआ काँच और न जाने क्या-क्या लपेटकर उसे मजबूत किया जा रहा है, ताकि कोई दुश्मन उसे काट न पाए। फिर पतंगें कैसी हों, इस पर खूब दिमाग लगाया गया। सोचा गया, छह पतंगें छोटी हों और बीच में एक बड़ी तो काम चल सकता है।

इस सारी तैयारी में आदर्श सहायक की भूमिका मेरी थी। श्याम भैया की पूरी मित्र-मंडली जी-जान से लगी हुई थी। हर किसी की सलाह और नुक्ते का सही-सही इस्तेमाल''! पहले सात नहीं, केवल तीन-चार पतंगें एक साथ उड़ाई गईं। फिर संख्या बढ़ाने का तरीका।''और अंत में वह रोमांचक घड़ी भी आ गई, जब सात पतंगें एक साथ उड़ाई जानी थीं। उस दिन हमारी पूरी छत श्याम भैया के दोस्तों से भर गई थी। मन में अजीब सी धुक-धुक''धुकर-पुकर''! बड़े ही रोमांचक पल थे।

और जब छुड़ैया देने के बाद उड़ीं सात पतंगें तो हम सबके लिए वह ऐसा खूबसरत नजारा था, जैसे कोई सपना पूरा हो गया हो। हालाँकि दुर्भाग्य से यह रोमांच अधिक देर तक टिका नहीं।''सात पतंगें कटी तो नहीं, पर उनका वजन तो अधिक था ही। इस वजह से डोर टूट गई। टूटकर हवा के झोंके के साथ उड़ती हुई वे जिस घर की छत पर जा गिरीं, उस घर में एक जरा जिद्दी और अड़ियल स्त्री थी, जिसे बच्चों के खेल के आनंद से कोई मतलब न था। श्याम भैया अपने मित्रों के साथ दौड़ते और हाँफते हुए वहाँ पहुँचे। पर उस कठोर-हृदय स्त्री ने पतंगें देने से साफ इनकार कर दिया।

श्याम भैया ने पतंगों से जुड़ी नैतिकता का तर्क दिया कि ''चाचीजी, पतंगें कटी थोड़े ही हैं, वह तो डोर टूट हई है। इसलिए कृपया पतंगें लौटा दीजिए।''

पर उस स्त्री की जिद, ''ना जी, ना! हम कुछ नहीं जानते। पतंगें हमारी छत पर आई हैं, हम नहीं देंगे।''

यों एक सपने का अंत थोड़े दुखांत रूप में हुआ। मैं उसका गवाह हूँ और उन क्षणों में श्याम भैया की उस उदास मुद्रा का भी। हालाँकि 'नंदू भैया की पतंगें' कहानी में मैंने पूरे प्रसंग को कहानी में ढालते हुए उसका अंत बदलकर कहानी को सुखांत कर दिया है।

□

जादूगरी क्राफ्ट की'''!

पतंगें ही नहीं, श्याम भैया क्राफ्ट के भी उस्ताद थे। दफ्ती, कैंची, लेई और अबरी कागज उनके हाथ में हों, तो कला खुद-ब-खुद साकार होने लगती थी। बड़ी तबीयत से लेई बनाते। उसमें नीला तूता डालकर अच्छी तरह पकाते। फिर पेंसिल से निशान लगाकर सफाई से दफ्ती काटते और जैसा चाहते, वैसा बढ़िया सा आकार बना लेते। फिर आता अबरी कागज का नंबर। उसे इतनी खूबसूरती से चिपकाते कि मजाल है कहीं झोल रह जाए। फिर उस पर चमकीले कागज से काट-काटकर बनाई गई फूल-पत्तियाँ चिपकाते। इन सारे कामों में वे ऐसे डूब जाते, कि उनकी तन्मयता और मस्ती देखकर मैं निहाल हो जाता।

मुझे उनके असिस्टेंट का रोल निभाना होता था और मैं बडे उत्साह से दौड़-दौड़कर ये सारे काम करता। यों मुझे पहले ही बहुत कुछ अंदाजा होता था कि कब, किस चीज की जरूरत पड़नेवाली है और मैं कोशिश करता था कि उनका आदेश मिलते ही चीज सामने हाजिर हो जाए, ताकि उनकी आँखों में अपने लिए प्रशंसा का भाव देख सकूँ। बाकी पूरे समय जब वे कोई सुंदर आकार या कलाकृति बना रहे होते तो मैं रामचंद्रजी के छोटे भाई लक्ष्मण की तरह मंत्रमुग्ध सा उनको देखता रहता। और मन-ही-मन सराहता रहता। ऐसी सुंदर कलाकृति कभी मैं भी बना सकूँगा, यह तो सोचना भी मुश्किल था। हाँ, काम चलाने के लिए थोड़ा-थोड़ा सीख जाऊँ, यह कोशिश जरूर करता था।

स्कूल में उन दिनों घर से मॉडल बनवा लाने के लिए बहुत-सा काम मिलता था। कभी मिट्टी का गमला और उस पर कागज के सुंदर फूल। कभी घर, कभी झोंपड़ी। कभी फूल माला। श्याम भाईसाहब इस सब में मेरे हीरो थे, उद्धारकर्ता भी। वे मेरी हर समस्या चुटकियों में हल कर देते। बस, जब वे बनाते, मुझे आज्ञाकारी सेवक की तरह हर क्षण दौड़ने को तैयार रहकर, उनके पास हर घड़ी उपस्थित रहना पड़ता था, और इसमें मैं कभी कोताही नहीं करता था।

उन दिनों ड्राइंग में पुस्तक-कला भी शामिल थी। पुस्तक कला में डाक विभाग का पोस्टकार्ड, लिफाफा वगैरह बनाने का भी गृहकार्य मिलता और श्याम भैया सफेद दस्ता कागज काटकर, उसे ठीक से मोड़कर इतनी सफाई से चिपकाते कि उनका बनाया लिफाफा दर्शनीय बन जाता। पोस्टकार्ड के लिए मोटा शीट पेपर इस्तेमाल किया जाता। मैं इन सुंदर कलाकृतियों को स्कूल लेकर जाता तो देखकर अध्यापक ही नहीं, साथी छात्रों का भी जी खुश हो जाता।

इसी तरह जिल्दसाजी के वे बादशाह थे। हर साल जुलाई में नई कक्षा में जब नई-नकोर किताबें आतीं तो उन पर गत्ते की जिल्द चढ़ाने की ताईद की जाती। यहाँ भी श्याम भाईसाहब मेरे संकटमोचक बन जाते। बड़ी सफाई से किताब के आकार के गत्ते काटकर, पहले उन्हें कपड़े के अस्तर से जोड़ना, फिर उस पर अबरी चिपकाना। यह सारा काम पूरी सावधानी रखते हुए करना होता था कि किताब खुलने में कोई परेशानी न हो। मैंने यह कला उनसे सीखी और कुछ आगे चलकर मैं भी किताबों पर अच्छी, मजबूत जिल्द चढ़ाने लगा। यह सावधानी भी रखता कि गत्ते की जिल्द चढ़ने पर किताब एकदम सुभीते से खुलनी चाहिए।

अलबत्ता इन सारी कलाओं में श्याम भैया मेरे गुरु थे। वे कलाएँ

जो जिंदगी की कलाएँ थीं, उन्हें श्याम भैया ने किसी से सीखा नहीं था, पर वे हर काम और-और बेहतर ढंग से करने की कोशिश करते थे। और यों ही काम करते-करते सीखते जाते थे और परफैक्शन तक पहुँच जाते थे। 'काम करते-करते सीखना···!' बहुत बाद में जब मैं दिल्ली आया और सत्यार्थीजी से मिला, तो उन्होंने बड़े पुरलुत्फ अंदाज में इस बात को फिर से रेखांकित किया। उन्होंने बताया कि जब वे 'आजकल' के संपादक बने, तब तक संपादन-कला का उन्हें कुछ खास ज्ञान न था। वे तो खानाबदोश थे, हरफनमौला लेखक। भला संपादन-कला की बारीकियाँ क्या जानें? पर वे 'आजकल' के संपादक बने तो इतने सफल संपादक माने गए कि 'आजकल' को उन्होंने देखते-ही-देखते अपने समय की सबसे शीर्ष पत्रिका बना दिया।

अलबत्ता इन सारी कलाओं में श्याम भैया मेरे गुरु थे। वे कलाएँ जो जिंदगी की कलाएँ थीं, उन्हें श्याम भैया ने किसी से सीखा नहीं था, पर वे हर काम और-और बेहतर ढंग से करने की कोशिश करते थे। और यों ही काम करते-करते सीखते जाते थे और परफैक्शन तक पहुँच जाते थे। 'काम करते-करते सीखना···!' बहुत बाद में जब मैं दिल्ली आया और सत्यार्थीजी से मिला, तो उन्होंने बड़े पुरलुत्फ अंदाज में इस बात को फिर से रेखांकित किया।

कई बार उनके निदेशक शशधर सिन्हा जो कि प्रशासकीय चाल-ढाल के व्यक्ति थे, कुछ परेशान होकर पूछते थे, ''सत्यार्थीजी, आपने तो इतने सारे विशेषांकों की योजना बना ली। तो क्या आपने सोचा है कि कैसे उन्हें पूरा करेंगे?'' इस पर सत्यार्थीजी एक पल की चुप्पी के बाद एक छोटा सा वाक्य कहते थे, ''काम ही सिखाता है कि काम कैसे करना है!''···यानी काम करते जाओ। जैसा भी आता है, मन और लगन से करते जाओ। काम करते-करते आप खुद सीख जाएँगे कि काम किस तरह से बेहतर हो सकता है। और सीखेंगे ही नहीं, एक दिन उस्तादी भी हासिल कर लेंगे।

श्याम भैया का भी यही गुर था। उन्हें हर चीज आती थी, हर चीज के वे उस्ताद थे, पर उन्होंने कहीं से सीखा नहीं था। बस, काम करते-करते ही सीखा और फिर करते-करते ही उस्ताद हो गए। मन और आँखें खुली हों और बुद्धि सतर्क हो तो फिर क्या मुश्किल है?

घर में कोई शुभ उत्सव होता तो विभिन्न रंगों के पतंगी कागजों को काट-काटकर रंग-बिरंगी झंडियाँ बनाकर टाँगना श्याम भैया का ही जिम्मा था। इसी तरह घर में हर शुभ पर्व की शुरुआत होती थी 'घड़ोली' से, जिसमें घर-परिवार की स्त्रियाँ कुएँ से जल भरकर लातीं। घड़ोली के लिए मंगल घट की सज्जा का जिम्मा हमेशा श्याम भैया का ही रहता। रंग-रंग की चमकीली पन्नियों से वे मंगल घट की ऐसी सजावट करते कि देखकर आँखें थकती न थीं। आखिर इसी मंगल घट को लेकर तो घर की बहुओं को घर-परिवार और मोहल्ले की स्त्रियों के साथ कुएँ से पानी भरकर लाना होता और मंगल गीत गाते हुए, हवा में उत्सव की एक प्रफुल्ल लय उत्पन्न करनी होती थी। उस समय श्याम भैया का बहुत मेहनत से सजाया गया मंगल घट दूर से आनंद और प्रसन्नता की विजय घोषणा सा करता।

दीवाली पर श्याम भैया का बनाया हुआ कंदील दूर से मन आलोकित कर देता था। रंग-रंग के पन्नी-कागज से बनाए कंदील में वे अपना पूरा मन उँड़ेल देते। इसके लिए पहले बाँस को काटकर छोटी-छोटी खपचियाँ बनाई जातीं। फिर धागे से उन्हें सुंदरता और मजबूती से बाँधा जाता। और फिर रंग-बिरंगे पन्नी-कागज को जब वे सफाई से चिपकाते तो कंदील किसी सुंदर कलाकृति की तरह दूर से मोहता। उसमें दीया रखने का भी स्थान होता था। फिर जब छत पर एक लंबे बाँस पर बाँधकर उसे टाँगा जाता तो दूर से वह किसी सपने जैसा झिलमिलाता लगता था। हर बार श्याम भैया अपने बनाए कंदील में कुछ-न-कुछ नयापन लाते। कभी नए ढंग की सजावट करके तो कभी उसके आकार में कुछ बदलाव करके। पन्नियाँ चिपकाने और उस पर फूल-पत्तियाँ लगाने में तो हर साल कुछ-न-कुछ निखार आता ही जाता।

एक बार मुझे याद है, श्याम भैया ने हवाई जहाज के आकार का कंदील बनाया था और उस पर इतना खूबसूरत और चमकीला पन्नी-कागज लगाया कि वह पूरा हुआ तो मुझे लगा, यह कंदील नहीं कोई अद्‌भुत सपना है, जो पूरा हो गया है। वह कंदील आज भी जैसे मेरी आँखों में झिलमिल-झिलमिल कर रहा है।

□

त्योहार जो नई जिंदगी लेकर आते थे!

याद आता है, उन दिनों त्योहारों का कैसा आनंद था। हर त्योहार का जमकर आनंद लेना मैंने श्याम भैया से सीखा और फिर वह मेरे जीवन का भी हिस्सा बन गया। पर आज त्योहारों, खासकर दीवाली का रंग-ढंग कितना बदल गया, सोचकर दुःख होता है। उसकी मूल भावना और उत्साह तो गायब हो गया, बस तड़क-भड़क और पटाखों की धाँय-धाँय ही बची है। कभी-कभी मैं सोचता हूँ, ''काश, आज बच्चे पटाखे फूँककर पर्यावरण का सत्यानाश करने के बजाय, दीवाली की मूल भावना को अपना लें तो देश और समाज का कितना भला हो सकता है।''

इसी तरह मुझे याद है, उन दिनों जन्माष्टमी पर घर-घर मंदिर सजाने की प्रथा थी। श्याम भैया इसमें भी बड़ी तन्मयता से जुटते थे। मंदिर की सजावट के लिए घर की चादरों और साड़ियों का इस्तेमाल होता। सुंदर ढंग से झालरें बनाई जातीं। फिर खिलौने सजाने की बारी आती। श्याम भैया की कोशिश होती कि मंदिर की सज्जा ऐसी हो कि उसमें कोई थीम उभरनी चाहिए। किसी दिलचस्प कहानी सरीखी। तो देखते-ही-देखते तरह-तरह के खिलौनों की बस्तियाँ सज जातीं। कहीं बैंड-बाजा लिये मटरूमल की बारात नजर आती तो कहीं ब्रज के

पहलवानों के मल्लयुद्ध की बानगी नजर आती। कहीं राज-दरबार और सैनिकों का रोब-दाब तो कहीं हिरन, भालू, शेर-बघेरे वाला घना जंगल। कहीं टिल्लू-मिल्लू के नन्हे-मुन्ने खिलौने तो कहीं गुड्डे-गुड़ियों का सजीला संसार। कहीं पानी में रेल का खेल दिखाने की कला तो कहीं समंदर में झंडे लहराता पानी का जहाज···!

पीछे एक तरफ कैलाश पर्वत पर तपस्यारत शिवजी तो हमेशा ही होते। उनके माथे पर छेद करके पीछे लाल बल्ब जलाकर तीसरा नेत्र बनाया जाता। फिर उनके सिर पर गंगा दिखाने के लिए एक बिल्कुल बारीक सी रबर की नलकी छिपाकर लगाई जाती। इस तरह कि पानी की एक पतली सी धार शिवजी के मस्तक पर निरंतर गिरती रहे। पर शिवजी के साथ उनका आभामंडल भी तो होना चाहिए। तो उनके पीछे एक टेबल फैन का कवर उतारकर, उसकी पँखुड़ियों पर गोंद लगाकर सफेद अबरक छिड़का जाता। फिर सूखने पर जब पंखा चलाया जाता तो अबरक की चमक से सचमुच ऐसा लगता कि शिवजी के मुख के चारों ओर ऐसा आभामंडल है, जो उन्हें इस धरती से ऊँचा और देवत्व की महिमा से पूर्ण बनाता है।

दीवाली पर श्याम भैया का बनाया हुआ कंदील दूर से मन आलोकित कर देता था। रंग-रंग के पन्नी-कागज से बनाए कंदील में वे अपना पूरा मन उँड़ेल देते। इसके लिए पहले बाँस को काटकर छोटी-छोटी खपचियाँ बनाई जातीं। फिर धागे से उन्हें सुंदरता और मजबूती से बाँधा जाता। और फिर रंग-बिरंगे पन्नी-कागज को जब वे सफाई से चिपकाते तो कंदील किसी सुंदर कलाकृति की तरह दूर से मोहता। उसमें दीया रखने का भी स्थान होता था। फिर जब छत पर एक लंबे बाँस पर बाँधकर उसे टाँगा जाता तो दूर से वह किसी सपने जैसा झिलमिलाता लगता था। हर बार श्याम भैया अपने बनाए कंदील में कुछ-न-कुछ नयापन लाते।

पर ये सारे खिलौने सीधे कमरे के फर्श पर रख दिए जाएँ, ऐसा नहीं था। पहले लकड़ी का बुरादा लाकर तरह-तरह के रंग से रँगकर फर्श पर बिछाया जाता और फिर ऊपर सजता खिलौनों का रंग और राग भरा संसार। सच ही श्याम भैया ऐसा सुंदर जन्माष्टमी का मंदिर सजाते कि देखनेवाले मुग्ध हो जाते। यहाँ भी हर काम में सहायक के रूप में मुझे हर पल उपस्थित रहना पड़ता। हालाँकि मेरे लिए तो ये रोमांचक पल थे। बाद में श्याम भैया ने जन्माष्टमी पर मंदिर सजाने का काम मुझ पर ही छोड़ दिया और उनकी सिखाई कला का इस्तेमाल करके मैं भी घर की बाहरवाली बैठक में काफी सुंदर जन्माष्टमी का मंदिर सजाने लगा। मैं कोशिश करता कि उसमें वैसी ही थीम उभरे, जैसे श्याम भाया साकार कर देते थे। मैं उतनी पूर्णता से तो यह सज्जा नहीं कर पाता था, पर मेरे बनाए जन्माष्टमी के मंदिर औरों से अलग और कलात्मक जरूर होते थे। और यह सब श्याम भैया की ही देन था।

वाकई उनका सहायक बनकर मैंने बहुत कुछ सीखा। साथ ही यह जाना कि अगर हम हर काम सफाई और सुंदरता से करें, पूरी तन्मयता से करें, तो सच में यह जिंदगी कितनी सुंदर है। और जीवन की सच्ची कला भी यही है।

□

बाल दिवस यानी बच्चों का मेला

उन दिनों छठी कक्षा से ही हम स्कूल नहीं, कॉलेज में जाते थे। इंटर कॉलेज। तो हमारे कॉलेज पालीवाल इंटर कॉलेज में १४ नवंबर को बाल दिवस पर हर साल बाल मेला लगता था। खूब उत्साह और धूमधाम से। श्याम भैया दोस्तों के साथ मिलकर उस मेले में बड़ी सुंदर चाय-नाश्ते की दुकान लगाने। दुकान की खूब सज्जा तो होती ही, बड़ी सफाई से कुरसी-मेजें जमाई जातीं। और फिर चाय और पकौड़े बना-बनाकर दूसरों को खिलाने का आनंद। बाल मेले में श्याम भैया की इस दुकान पर दिनभर छात्रों की चहल-पहल रहती, बल्कि अध्यापक भी ललककर आते और खूब तारीफ करके जाते थे। अच्छी-खासी बिक्री होती। पर फायदा शायद कभी नहीं हुआ। घाटा ही होता था। और फायदे के लिए लगाता भी कौन था? यों भी श्याम भैया फायदे और घाटे से ऊपर की किसी दुनिया के थे। इस दुनिया का गणित वे कभी नहीं समझ पाए। अंत तक नहीं।

इसी तरह नुमाइश देखने का हमारा कार्यक्रम भी उन्हीं के साथ बनता। हमारे शहर शिकोहाबाद में हर साल गरमी के दिनों में जब हमारी छुट्टियाँ होती थीं, नुमाइश लगती थी। इसमें खाने-पीने की चीजों के अलावा सर्कस, मौत का खेल, आइने का तमाशा, जादू वाली औरत, पाँच टाँगोंवाली गाय, हँसी का गोलगप्पा समेत तरह-तरह के अजूबे और खेल होते थे। श्याम भैया प्यार से हमें नुमाइश में घुमाते और जी भरकर खिलाते-पिलाते।

श्याम भैया में जिंदगी थी, जिंदादिली भी। वे निस्संदेह उन 'किशोरों' में से थे, जिन्हें उनकी आवारागर्दी के लिए लगातार बुरा-भला कहा जाता है। पर उनमें जितनी ऊर्जा थी, उसका उपयोग हो पाता, उसकी ढंग से तारीफ होती तो न जाने वे कहाँ पहुँचते? श्याम भैया में सचमुच एक दीवानगी थी और यही उन्हें श्याम बनाती थी।

हाँ, यह जरूर है कि श्याम भैया अपनी इसी तथाकथित आवारागर्दी के कारण पढ़ाई में पिछड़ गए थे और निरंतर पिछड़ते जा रहे थे। वे पढ़ाई के नित नए-नए नियम बनाते और उन्हें अपने साथ-साथ मुझ पर भी लागू करते। पर आश्चर्य, पढ़ाई में नंबर मेरे ज्यादा आते और श्याम भैया मुश्किल से पास होते। श्याम भैया कटकर रह जाते, पर उनका रोब जरा भी मुझ पर कम न होता।

५४५ सेक्टर-२९, फरीदाबाद-१४१००८ (हरियाणा)
दूरभाष : ९८१०६०२३२७

पानी की तलाश

• प्रमोद कुमार अग्रवाल

भारत का चंद्रयान-२ पानी की तलाश में चंद्रमा पर गया, क्योंकि जहाँ जल है, वहीं जीवन होगा। जहाँ पानी मनुष्य के जीने के लिए अपरिहार्य है, वहाँ यदि समाज में किसी का पानी उतर गया, तो उसके पास कुछ नहीं बचता। बिन पानी सब सून। इसलिए पानी और पानी की ही तलाश।

कल्यानी के माता-पिता गरीब खेतिहर मजदूर हैं। उनके पास जमीन नहीं है। वे गाँव के एक भूमि-मालिक की दो एकड़ जमीन पर चासबास का बटाई पर काम करते हैं, पर पानी के अभाव में उस दो एकड़ जमीन में खास पैदावार नहीं होती। कल्यानी के परिवार में सब समय पानी की चर्चा होती है। वे आकाश की ओर ताकते रहते हैं। कब वर्षा हो और वे दौड़कर खेत में काम करें। पर वरुण देवता शायद कलियुगी लोगों से नाराज हो गए हैं। अब तो कल्यानी की माँ को घर-गृहस्थी के काम के लिए भी पास से पानी लाना पड़ता, क्योंकि उसके पड़ोस के नलके का जलस्तर कभी नीचे चला जाता है तो कभी वह खराब हो जाता है।

इसी बीच कल्यानी के विवाह का रिश्ता आया। कल्यानी की माँ खुश थी कि लड़केवाले ने स्वयं कल्यानी का हाथ माँगा। ''कैसा जमाना आ गया है! हमारे समय में तो लड़की के माँ-बाप लड़की के रिश्ते के लिये दर-दर फिरते। फिर दहेज की माँग होती। हम दैनिक मजदूरी करनेवालों के पास दूसरे दिन खाने के लिए ही नहीं होता था, फिर दहेज कहाँ से लाकर दें?''

कल्यानी के माता-पिता तुरंत राजी हो गए। उन्होंने नहीं देखा कि लड़का लँगड़ा-लूला है, कमाता है या नहीं, उसके घर में कल्यानी के रहने की जगह है या नहीं, लड़का कोई काम करता है या नहीं। क्या परिवार खाता-पीता है?

जैसे-जैसे कल्यानी के विवाह का समय पास आया, कल्यानी को पता चला कि उस गाँव में औरतों को पानी एक कि.मी. दूर से लाना पड़ता है। कल्यानी सोच में पड़ गई। उसकी सहेलियों ने भी उसे बहका दिया। तू शादी करके क्या करेगी? वहाँ तो रोज पानी भरने की दिन-मजूरी करती रहेगी, बिना मजूरी पाए। क्या अयोध्या में कोई अपनी लड़की ब्याहता है? दूसरी ओर कल्यानी का होनेवाला पति जिलेराम

डॉ. प्रमोद कुमार अग्रवाल आई.ए.एस. (रिटा.), हिंदी साहित्य के लब्ध-प्रतिष्ठित कहानीकार हैं। वे अपने प्रशासनिक अनुभवों को साहित्य के स्वरूप में परोसने में दक्ष हैं। संप्रति डॉ. अग्रवाल पूर्णकालिक साहित्य सेवा के माध्यम से समाज-सेवा में संलग्न हैं।

कल्यानी से बात करने के लिए व्यग्र हो रहा था, पर कल्यानी के पास मोबाइल ही नहीं था। उसने अपने मित्र से पैसा उधार लेकर एक सस्ता मोबाइल कल्यानी के पास भेज दिया। अब दोनों में प्रत्येक दिन बातें होने लगीं। कल्यानी को जब पता लगा कि उसकी होनेवाले ससुराल में शौचालय नहीं है तो उसने स्पष्ट कहा, 'मैं ऐसे घर में शादी नहीं करूँगी।'

माँ-बाप ने बहुत समझाया पर कल्यानी टस-से-मस न हुई। उसने चट्टान की भाँति दृढ़ निश्चय किया और यह बात उसके ससुराल तक गई। कल्यानी की ससुरालवालों ने जब यह सुना तो उन्होंने माथा पकड़ लिया। टेलीविजन और मोबाइल ने सबकुछ नष्ट कर दिया है। आजकल लड़के-लड़कियाँ ऐसी बातें करते हैं जो हमने कभी नहीं सुनीं। जिलेराम को जब यह पता चला तो उसने तुरंत कल्यानी से मोबाइल पर बात की, 'पंचायत द्वारा हमारे घर में शौचालय बनाने का काम जल्दी शुरू होगा। यह मैंने ही करवाया है। माता-पिता को पता नहीं था।'

'शौचालय बनने के बाद ही मैं तुम्हारी चौखट पर पैर रखूँगी। औरत की भी कोई इज्जत-आबरू है।'

'जैसी तुम्हारी खुशी है।' जिलेराम ने स्वीकृति दी।

जिलेराम ने ग्राम पंचायत प्रधान के चक्कर लगाना शुरू कर दिया। प्रधान ने पंचायत सचिव को आदेश दिया, 'भई, इस लड़के की शादी का मामला है। तुम सबसे पहले इसी के घर में काम लगवा दो। मुझे तो सभी कुछ देखना है।' सचिव के ऊपर ब्लॉक और जिला से प्रतिदिन दबाव आ रहा था कि प्रधानमंत्री के चुनाव के पहले सभी शौचालयों का निर्माण-कार्य पूर्ण करें। उसने पास के एक ठेकेदार को इस काम में लगाया। ठेकेदार जिलेराम के घर पर शौचालय बनाने आया। शौचालय

में खराब ईंट लगाने पर जिलेराम ने विरोध किया तो ठेकेदार ने कहा, 'तुम चुप होकर काम करवा लो, नहीं तो शादी रुक जाएगी। मैं क्या करूँ? ये प्रधान और सचिव बिना पैसे लिये काम ही नहीं देते और प्रत्येक बिल पर उन्हें दस प्रतिशत रिश्वत चाहिए। मैंने कहा, वह बीस प्रतिशत घूस ले ले, पर शौचालय की लागत बढ़ा दे, पर कुल लागत सरकार द्वारा निर्धारित है।

'उसे बढ़ाया नहीं जा सकता। इस कीमत में सीमेंट नहीं लगाया जा सकता, केवल मिट्टी से छाप होगी। मैं तो फिर भी महीन सीमेंट लगा रहा हूँ।' पिता ने सलाह दी—'बेटा, हम जिंदगीभर इस रिश्वत का खेल ही देखते आ रहे हैं। शायद हमारे जीवन के बाद इस घोड़े पर कुछ लगाम कसेगी।' 'पिताजी, आप देखना, मैं इस रिश्वत के खेल को बंद करके रहूँगा।'

'पर शौचालय के काम को पूरा होने तक चुप रहो। हमने तुम्हारी शादी के लिए पांवड़ा पसारे हैं।' जिलेराम ने शौचालय निर्माण में धाँधली को अनदेखा कर दिया। सचिव और प्रधान के काम देखकर चले जाने के बाद वह कहता, 'ये लोग यह तमाशा क्यों कर रहे हैं? जब जेबें गरम कर ही ली हैं तो काम कैसे अच्छा होगा? शायद स्वयं को बचाने के लिए ऐसा कर रहे हैं, ताकि ब्लॉक या जिले के अधिकारी इन्हें न पकड़ सकें। वे भी अपना भाग लेकर चुप हो जाएँगे। दिल्ली में बैठा प्रधानमंत्री करे तो क्या करे? यह रिश्वत तो देश को साँपों की माता सुरसा की तरह निगल रही है।' कल्यानी को उसकी सहेलियों ने और चिढ़ा दिया, 'पर तारत अकेले से क्या होगा? तारत की सफाई करने के लिए तुम्हारी ससुराल में पानी ही नहीं है।'

कल्यानी ने जिलेराम से मोबाइल पर कहा, 'पर शौचालय के लिए पानी कहाँ से आएगा?' इस पर जिलेराम को क्रोध आ गया, पर उसने अपने आवेश को रोककर कहा, 'तुम तो जानती ही हो कि प्रधानमंत्री ने प्रत्येक घर में पानी पहुँचाने का वायदा किया है। पर पेड़ एक दिन में नहीं जमता। बहुत कुछ व्यक्ति को स्वयं करना पड़ता है। सरकार से सभी कुछ नहीं मिलता। हमारे पास बारह बीघा जमीन है। हम दोनों मेहनत करके लखपति हो जाएँगे। हम स्वयं बहुत कुछ कर सकते हैं। हम दोनों मिलकर अपने घर को स्वर्ग बनाएँगे।'

कल्यानी को लगा कि जिलेराम ही वह व्यक्ति है, जिसके साथ वह अपना वैवाहिक जीवन निभाना चाहती है। कल्यानी ने जिलेराम की हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा, 'चलो, मैं आपके कहे के ऊपर ही विश्वास करके शादी के लिए तैयार हो जाती हूँ। हम और आप मिलकर अपने परिवार को आगे ले जाएँगे।'

पंडित द्वारा विवाह की तिथि निकाली गई। नियत तिथि पर दोनों का सादगी से विवाह हो गया। कल्यानी ने जिम्मेदारियों का बोझ कंधों पर लेकर पति जिलेराम का हाथ पकड़कर अपने नए घर में प्रवेश किया।

ढोल-ताशे तथा तुरई से नई-नवेली बहू का स्वागत किया। आनन-फानन में प्रथम रात्रि में ही घर की बड़ी-बूढ़ी चतुर महिलाओं ने दोनों की मधुचंद्रिका संपन्न करा दी, ऐसा न हो कि लड़की बाद में अपना मन बदले। प्रात: उठने पर कल्यानी को आश्चर्य हुआ कि राजस्थान के गाँव चिल्हा के बारह बीघा के मालिक के घर में भी कुछ नहीं है। यदि उनका जीवनयापन हो सके, तो इसमें ही वे इतिश्री मानते हैं। पर अब पीछे मुड़कर देखने का मौका हाथ से निकल चुका था। कल्यानी अब जिलेराम की हो चुकी थी। उसका अपना अलग अस्तित्व न रहा। वह इस जीवन के लिए जिलेराम से जुड़ चुकी थी। उसके पास सिर्फ वे वायदे हैं, जो जिलेराम ने उससे मोबाइल पर बार-बार किए थे तथा वे मोबाइल के स्मृति-पटल पर अंकित हैं। लाल घाघरे-चोली-चुनरी में लिपटी कल्यानी के पास यह एक मोबाइल ही उसका आभूषण है, शायद बेशकीमती आभूषण, जिसका दुकानदार बाजार मोल नहीं लगा सकते।

एक सप्ताह तक नई बहू के स्वागत में बधाई गीत तथा महिलाओं द्वारा ढोलक पर नृत्य और हँसी-ठट्टा चलता रहा। कल्यानी को अपना नए घर का परिवेश प्रेममय प्रतीत हुआ, पर यह भी निश्चित हो गया कि उसकी जीवन-यात्रा चुनौतियों से भरी होगी। एक सप्ताह के बाद ही उसे एक कि.मी. दूर चापाकल से पानी लाने के लिए परिवार की ही दस वर्ष की लड़की ने रास्ता दिखा दिया। कल्यानी खुश थी कि कम-से-कम उसे खुले में तो शौच नहीं जाना पड़ेगा। इसके लिए वह कुछ भी करने को तैयार है। पानी का अभाव चुरु जिले के चिल्हा गाँव की क्या राजस्थान की ही चिरकालीन समस्या है। उसमें जिलेराम और उसके परिवार का क्या दोष?

वह जिलेराम के प्रेम और एकनिष्ठ समर्पण से लबालब है तथा विश्वस्त है कि पतिप्रेम के सहारे वह अपने जीवन की नैया पार लगा सकेगी। पर उसने निश्चय किया कि वह पहले चिल्हा में पानी के अभाव की समस्या का समाधान करेगी। कल्यानी इसी उधेड़बुन में लग गई। जिलेराम ने एक दिन पूछ ही लिया, 'तुम किस चिंता में लगी रहती हो? हमारा यह समय तो खाने-पीने और मस्ती करने का है।'

'मुझे तुम्हारे घर में तथा गाँव में पानी की कमी खाए जा रही है। क्या हम इसके लिए कुछ नहीं कर सकते हैं?' 'हम करेंगे। तुम देखो मोबाइल में। सरकारी योजनाएँ चमक जाएँगी। हम स्वयं ही परिश्रम करेंगे। अपनी जमीन को सरसब्ज करेंगे, ताकि दूसरे गाँववाले भी हमसे सीखकर कुछ करें।'

दोनों ने निश्चय किया कि वे वर्षा आने पर अपने एक बीघा ऊँचे खेत में खुदाई करके पानी इकट्ठा करेंगे तथा वर्षभर उस पानी से सिंचाई करेंगे, जैसा मोबाइल में देखने पर कई लोग कर रहे हैं।

दोनों के दृढ़ निश्चय को देखकर उनके माता-पिता ने विरोध नहीं

किया। वे एक बीघा खेत की खुदाई करने लगे। शनैः-शनैः, आहिस्ते-आहिस्ते, जब भी मौका मिलता, उनके नए दांपत्य जीवन का यही आनंदोत्सव है। आनेवाले मौसम में वर्षा अच्छी हुई। उनका तीन फीट गहरा तालाब पानी से ऊपर तक भर गया। उन्होंने पानी न झिरने के लिए चारों ओर प्लास्टिक भी बिछा दी। फलस्वरूप खरीफ फसल के बाद रबी फसल भी अच्छी हुई, साथ-साथ शाक-सब्जी भी पैदा होती रही। गाँव में यह नया प्रयोग, अभिनव प्रयास तथा अप्रत्याशित सफलता।

कल्यानी गाँव की चहेती बहू हो गई। अब उसे गाँव में ही महिलाओं के दुर्गा स्वयं-सहायता समूह ने सर्वसम्मति से अपना अध्यक्ष चुना तथा सभी ने जिलेराम की खेती में सफलता का प्रयोग संपूर्ण गाँव की सैकड़ों बीघा खेती पर अपनाने के लिए एकमत होकर निश्चय किया। कल्यानी के इस प्रयोग को और आगे बढ़ाने के लिए अनेक सलाहकार, कृषि वैज्ञानिक तथा खंड विकास कार्यालय से खंड विकास अधिकारी पधारे। उनकी सलाह पर दुर्गा स्वयं-सहायता समूह ने गाँव में ऐसे दस तालाब खोदने का निर्णय लिया तथा गाँव में उत्पादन के विपणन को भी अपने हाथों में लिया। अब चिल्हा गाँव में बड़ी-बड़ी कंपनियाँ सीधे गाँव के उत्पाद को खरीदने आने लगीं। बीच के दलाल, खुदरा तथा थोक व्यापारी अदृश्य हो गए। कल्यानी की अपील पर यह निश्चय किया गया कि गाँव के लोग गाँव के बाहर निकलते हुए पानी को रोकने के लिए अपने श्रमदान से एक अवरोध बाँध बनाएँगे, जिससे संपूर्ण गाँव में पानी की कमी दूर होगी और गाँव हरा-भरा होगा। गाँव में सरकारी और पंचायत के चारागाह तथा सर्वसामान्य उपयोग के लिए चिह्नित जमीनों पर सभी मिलकर पेड़ लगाएँगे तथा सूखे के समय उन्हीं पेड़ों को बेचकर लोगों को अभाव और भूख से बचाया जाएगा। जो इन पेड़ों की सुरक्षा करेंगे, उन्हें इन पेड़ों से लाभ में अग्राधिकार दिया जाएगा। फिर क्या था। सभी गाँववाले गाँव की सीमा पर पानी की रोक के लिए बाँध बनाने के लिए श्रमदान करने लगे। जब जिसको समय मिलता, फुरसत होती, वे जमीन की कटाई करते अथवा खुदी हुई मिट्टी को बाँध पर रख जाते।

गाँव के जमींदार, प्रधान तथा पटवारी कल्यानी के बढ़ते हुए प्रभाव से परेशान थे, क्योंकि वे ही इन पड़ी हुई जमीनों का उपयोग अपने निहित स्वार्थ के लिए कर रहे थे। पर अभी भी गाँव में पानी की कमी की समस्या का पूरा हल नहीं निकला। वर्षा ही नहीं तो इन योजनाओं का क्या हश्र होगा? कल्यानी के दुर्गा स्वयं-सहायता समूह ने गाँववालों के घर-घर जाकर भरोसा दिलाया कि वे प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के अंतर्गत गाँव में फुहारा सिंचाई का प्रबंध करेगी। यदि उससे भी नहीं हुआ तो सिंचाई की लाइन खेतों की मेंड़ों के ऊपर से ले जाकर सभी के खेतों में पानी की सिंचाई की जाएगी। कहीं-कहीं जमीन के अंदर पतली नलिकाओं से जड़ों में पानी दिया जाएगा। इससे हमारे गाँव का बरबाद होनेवाला पानी बिल्कुल बंद हो जाएगा। पेड़ बड़े होकर खुद बादलों को आकर्षित करेंगे। तब चाहे कहीं वर्षा हो या न हो, इस गाँव में अवश्य बरसात होगी। वर्षा के लिए गाँव की औरतों को बादलों को प्रसन्न करने के लिए खेतों में और हल नहीं चलाना होगा। गाँव में पानी की क्रांति हो रही है। किसी को इसका विरोध करने का साहस नहीं हो रहा है।

प्रदूषित जल पीने से कई नवजात शिशुओं की आँखें खराब हो गईं, शरीर में विकृति आ गई, गाँव के बुजुर्गों में हैजा तथा श्वास की बीमारी फैलने लगी। पर अभी भी गाँव में पीने के पानी की समस्या बनी रही। सभी कुओं तथा चापाकलों में जल का स्तर उठ आया था, पर कुओं से निकलनेवाला पानी अभी भी प्रदूषित था। उसमें कुल कोलीफार्म की मात्रा निर्धारित मात्रा से काफी अधिक थी। यद्यपि वर्षों की समस्या दिनों में हल नहीं हो सकती, फिर भी सभी ने निश्चय किया कि चापाकलों के पास कोई भी बरतन साफ नहीं करेगा।

दुर्गा स्वयं-सहायता समूह ने सम्मिलित रूप से गाँव के उत्पाद बेचकर गाँववालों के घरों में, बैंक खातों में पूर्व की अपेक्षा अधिक धनराशि जमा हो गई। अब वे उत्तम किस्म के बीज भी सामूहिक रूप से खरीद रहे थे तथा उन्होंने एक हाथ चालित ट्रैक्टर भी खरीद लिया, ताकि छोटे-छोटे, ऊबड़-खाबड़, ऊँचे-नीचे खेतों में भी चास हो सके। गाँव में अभी भी रासायनिक खाद का उपयोग हो रहा था। गाँव में खाद की उपलब्धता कम थी। कल्यानी ने सुझाव दिया, 'हमें गाँव में पशुपालन करना चाहिए, दुग्ध उत्पादन करके आय बढ़ानी चाहिए, ताकि हमें उत्तम अन्नोत्पादन के लिए गोबर की खाद प्राप्त हो सके। सभी इस प्रस्ताव पर सहमत हो गए, क्योंकि अब पशुओं के लिए गाँव में काफी हरियाली थी, घास भी थी तथा उनके पीने के लिए पानी भी।'

कुछ लोगों ने सरकारी योजनाओं में सरकारी अनुदान से तथा कुछ ने अपने जोड़े रुपए से गायें खरीद लीं तथा कुछ ने भैंसें। अब चिल्हा पानी के बाद दूसरी सफेद क्रांति की ओर था। दुर्गा स्वयं-सहायता समूह ने गाँव के दुग्ध उत्पादन की बिक्री की व्यवस्था की।

राज्य के दुग्ध प्रबंधन संघ ने गाँव का सभी दूध खरीदने का अनुबंध कर लिया। गाँव में खुशी की लहर जाग उठी। सभी दुग्ध उत्पादन में लग गए। 'जय गोवंश' के उद्घोष से घर-घर में गाय की पूजा होने लगी। मुसलमान किसान इस मामले में हिंदुओं से आगे हो गए, आय का मामला जो था।

प्रदूषित जल पीने से कई नवजात शिशुओं की आँखें खराब हो गईं, शरीर में विकृति आ गई, गाँव के बुजुर्गों में हैजा तथा श्वास की बीमारी फैलने लगी। पर अभी भी गाँव में पीने के पानी की समस्या बनी रही। सभी कुओं तथा चापाकलों में जल का स्तर उठ आया था, पर कुओं से निकलनेवाला पानी अभी भी प्रदूषित था। उसमें कुल कोलीफार्म की

मात्रा निर्धारित मात्रा से काफी अधिक थी। यद्यपि वर्षों की समस्या दिनों में हल नहीं हो सकती, फिर भी सभी ने निश्चय किया कि चापाकलों के पास कोई भी बरतन साफ नहीं करेगा। कपड़े नहीं धोएगा, न ही साबुन लगाकर स्नान करेगा, मवेशियों को भी नहीं नहलाएगा, क्योंकि यही गंदगी चापाकल के पानी में कभी-न-कभी ऊपर आती ही है। गाँव के बुजुर्गों को एक युक्ति सूझी। उन्होंने कहा कि गाँव की एक गहरी बावड़ी एबेरी है, जो गाँव के मलबे, कूड़े-कर्कट, खर-पतवार आदि से पुर गई है, उसको साफ करके उसका पुनरुद्धार किया जा सकता है। बावड़ी किसी गाँव की औरत के उसमें कूदकर आत्महत्या करने के बाद गाँववालों द्वारा पूर दी गई थी। लोगों का विश्वास था कि वह औरत ही वहाँ भूतनी बनकर रहती थी। पर वर्षों से वह किसी को नहीं दिखी। सभी गाँववाले इस बाबड़ी का परिष्कार करने में लग गए। गाँव में पीने के पानी का सूर्योदय होनेवाला है। इस काम को करने में महीनों लग गए। ग्राम पंचायत ने सहायता की, ब्लॉक से भी धन और तकनीकी सहायता आई, तब इस बावड़ी में जल दिखने लगा। अब इसके बंद रंध्रों, झिरों को खोलने की समस्या सामने आई। उस पर काम होने लगा। कुछ महीनों के बाद बावड़ी में पानी भर आया। गाँव का समाज खुशी से नाच उठा। सभी ने कहा, 'जल देवता की जय, धरती माता की जय।' पानी अच्छा था और पीने के लिए उपयुक्त था। पर एक बावड़ी से गाँव की बढ़ी हुई आबादी से गुजारा नहीं हो सकता। अब इसके लिए चौका पद्धति अपनाई गई। गाँव के कुछ खेतों को मिलाकर चार छोटे-छोटे तालाब बनाए गए। पहले गड्ढे में पानी भरकर ढलान साइड से ओवरफ्लो कराकर पानी बाहर निकाला गया तो पहले तालाब से सिंचाई हुई, दूसरे तालाब से पीने के पानी की आपूर्ति हुई और तीसरे तालाब में पशुओं को पीने के लिए पानी छोड़ा गया। इन तालाबों के किनारे पेड़-पौधे उगाए गए, जो तेजी से बढ़कर फल-फूल तथा लकड़ी देते हैं।

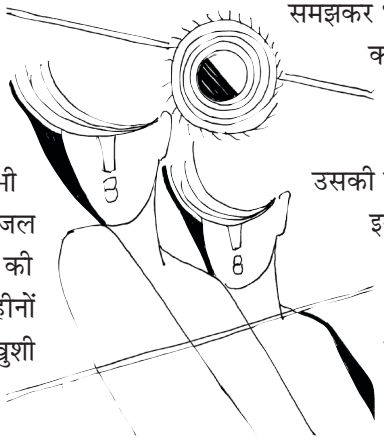

इस प्रकार गाँव की महिलाओं को अब पीने के पानी के लिए एक कि.मी. से पानी सिर पर ढोकर नहीं लाना पड़ता, न ही गहरे कुओं से रस्सी के सहारे मेहनत करके पानी निकालना पड़ता और न ही चापाकल को चलाने के लिए अपना पसीना बहाना पड़ता। अभूतपूर्व जल संरक्षण की जनजागृति के फलस्वरूप पास के पाँच गाँवों के लोगों ने मिलकर अनशन कर दिया कि जब तक उनके गाँवों में पीने के पानी की व्यवस्था नहीं होती, वे अपना अनशन नहीं तोड़ेंगे। मुख्यमंत्री ने अपने जल-संरक्षण विभाग के मंत्री को भेजा। गाँवों की औरतों ने उनका घेराव कर लिया और मंत्री से गाँव तक पीने के पानी की लाईन बिछाने या गाँव में पाइप-वाटर सप्लाई बनवाने का वायदा करवा लिया। लोगों ने पाइप-वाटर सप्लाई पसंद की, क्योंकि वह गाँव में ही गहरे नलकूप से चलेगी, जबकि पानी की दूर से लंबी लाइन कब और कहाँ बीच में खराब हो जाए, कोई कह नहीं सकता। फिर रिश्वत खाते-खाते इंजीनियर अपनी इंजीनियरिंग भूल चुके हैं। अब प्रत्येक काम ठेके पर चल रहा है तथा गाँव के मिस्त्री ही ऐसी लाइनों को ठीक करने के लिए रखे जाते हैं। फिलहाल पास के पाँच गाँवों के अनशन का लाभ चिल्हा को भी मिला तथा चिल्हा में भी पानी के लिए ट्यूबवेल खोदने तथा लाइन बिछाने का काम आरंभ हो गया। गाँव के युवा, जो अपने बूढ़े माता-पिता को गाँव में छोड़कर काम की तलाश में बाहर चले गए थे, वापस गाँव लौटने लगे। कल्यानी ने गाँव में अपना लक्ष्य पूरा होने पर संतोष की साँस ली। उसने दुर्गा स्व-सहायता समूह में अपनी ही उपसभापति को सभापति नियुक्त करवाया, ताकि सभी सदस्य प्रशासन की बारीकियाँ समझकर भविष्य में स्थानीय पंचायत एवं स्वयं-सहायता समूहों का संचालन सुचारु रूप से कर सकें। पर गाँववालों ने कल्यानी के पति जिलेराम को नहीं छोड़ा और उसे ग्राम पंचायत का प्रधान चुना। कल्यानी सब समय उसकी सहायक रही।

इसी बीच गाँव में बाढ़ आ गई। किसी को इसकी कल्पना ही नहीं थी। राजस्थान और बाढ··! चिल्हा में तो लोग बाढ़ का सैलाब क्या, पानी की बूँदें देखने को तरस जाते थे। बाढ़ के सैलाब में कल्यानी का वह मोबाइल भी बह गया, जो उसकी भूलवश अपनी कोठी के फर्श पर ही पड़ा रह गया था, जिसकी स्मृति में जिलेराम और कल्यानी के विवाह के लिए किए गए वायदे थे। उस दिन कल्यानी खूब रोई। जिलेराम ने उसे बहुत समझाया, 'मेरी प्यारी घरवाली! क्या तुम्हें मुझ पर कुछ शक है? मोबाइल के वे सब वायदे तो अब हमारे हृदयों में अंकित हो चुके हैं। तुम बिल्कुल चिंता न करो। हम एक-दूसरे के लिए हैं, रहेंगे और दूसरे जन्म तक रहेंगे।'

पति का प्रेम और सुरक्षा का वायदा पत्नी को सभी दुःख और चिंता से दूर रखता है। दोनों ने निश्चय किया कि अब हमारा लक्ष्य पूरा हो चुका है। अब हम संतान प्राप्त करके अपने परलोक को भी सुधारें। जिलेराम और कल्यानी अब परिवार-वृद्धि में लग गए। कल्यानी की उम्र पैंतीस वर्ष पार हो चुकी थी। उन्होंने जयपुर जाकर अपना इलाज करवाया तथा डॉक्टर की सलाह पर उनको संतान प्राप्ति हुई।

ईश्वर की कृपा से तथा जनता-जनार्दन के आशीर्वाद से दोनों को संतान प्राप्ति हुई और वे सुखपूर्वक दांपत्य जीवन व्यतीत करते रहे। उनका आदर्श आसपास के गाँवों में ही नहीं, राज्य के सभी गाँवों में विद्युत् की भाँति प्रसारित हो गया।

एडवोकेट, १७ सेंट्रल लेन,
बंगाली मार्केट, नई दिल्ली-११०००१
दूरभाष : ९६५०००२५६५

इलाहाबाद के माधव शुक्ल

• हेरंब चतुर्वेदी

महामना मदनमोहन मालवीय के शिष्य, बालकृष्ण भट्ट के प्रिय तथा राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन एवं कृष्णकांत मालवीय के अभिन्न मित्र माधव शुक्ल का जन्म १० जुलाई, १८८९ में इलाहाबाद के चौक में कूचा श्यामदास मोहल्ले में हुआ था। उनके पिता प्रसिद्ध वैद्य थे तथा उनका दवाखाना बहुत मशहूर था। वे भी ब्रह्मचारी हरदेव गुरु की पाठशाला में पढ़े थे, जहाँ महामना भी पढ़े थे। यहीं राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन एवं कृष्णकांत मालवीय उनके सहपाठी थे, जो आजीवन मित्र बने रहे।

उन्हें सर्वप्रथम पुलिस में सरकारी नौकरी मिल गई, किंतु महामना के कहने पर उन्होंने वह सरकारी नौकरी छोड़ दी। फिर वे एटा जिले के पटियाली कस्बे की पाठशाला में अध्यापक हो गए और स्वामी सत्यदेव परिव्राजकजी की प्रेरणा से उर्दू भाषी पंजाब में हिंदी प्रचार-कार्य भी किया। इसी दौरान वे पूरी तरह से क्रांतिकारी गतिविधियों में सक्रिय हो गए। इसी के परिणामस्वरूप औपनिवेशिक खुफिया पुलिस उनके पीछे लगी रहने लगी। इस बीच खुफिया पुलिस से बचने और स्थायित्व की तलाश में उन्होंने 'इलाहाबाद बैंक' में लिपिक की नौकरी कर ली। फिर गांधीजी के अह्वान पर अंतत: यह नौकरी भी छोड़ दी। वे क्रांतिकारी रचनाएँ करते थे, अत: उस समय इलाहाबाद, जो १८५७ की क्रांति के पश्चात् संयुक्त प्रांत की राजधानी था, वहाँ के समाचारपत्रों-पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ लगातार छपने लगीं। वे इलाहाबाद में ही वापस आ गए। अत: उन्हें अपने गृहनगर इलाहाबाद में वही माहौल मिला, जैसे मछली को जल में रहने से मिलता है। 'हिंदी प्रदीप', 'मर्यादा', 'अभ्युदय', 'कर्मयोगी', 'भविष्य' एवं 'प्रताप' आदि में उनकी क्रांतिकारी रचनाएँ प्रकाशित होने लगीं।

उन्हें शीघ्र ही समझ आ गया कि जनमानस की चेतना को झकझोरने के लिए समाचार-पत्र सिर्फ एक माध्यम हैं और वह भी सीमित साक्षर लोगों तक उनकी पहुँच है, फिर 'प्रेस एक्ट' के चलते जिस तरह १९१० में 'हिंदी प्रदीप', 'स्वराज्य', 'कर्मयोगी', 'अभ्युदय' आदि पर प्रतिबंध लगे, उससे भी माधव शुक्ल को यह समझने में देर नहीं लगी कि 'दृश्य-श्रव्य' माध्यम से राष्ट्रीयता की भावना और स्वतंत्रता आंदोलन के विचारों का अधिक सफल और सशक्त, विस्तृत प्रचार-प्रसार हो सकता है। अत: वे दो विधाओं में एक साथ प्रयास करने लगे। एक तरफ उन्होंने नाटकों को अपना हथियार बनाया और उसमें भी 'धार्मिक-सांस्कृतिक', 'रामलीला' और 'महाभारत' को भी अपना माध्यम बना लिया और उसके अतिरिक्त जैसे ही गांधीजी का कांग्रेसी अभियान जोर

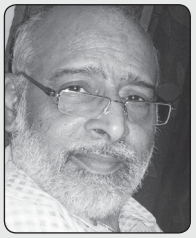

'मध्यकालीन इतिहास के स्रोत' व 'मध्यकालीन भारत में राज्य और राजनीति' पुस्तकों पर उ.प्र. हिंदी संस्थान का 'आचार्य नरेंद्र देव पुरस्कार', अन्य प्रकाशन 'दास्ताँ मुगल महिलाओं की', 'हिंदी के बहाने' एवं 'फ्रांस का इतिहास' व 'मध्यकलीन भारत के विदेशी यात्री' पुस्तकें चर्चित।

पकड़ने लगा, तब स्वतंत्रता-संग्राम के सेनानियों द्वारा 'प्रभात फेरियों' का आयोजन होने लगा। इन 'प्रभात फेरियों' के जरिए भी उन्होंने लोगों को जाग्रत् करने हेतु अपने क्रांतिकारी संदेश को कविताओं के माध्यम से पहुँचाने में सफल, सार्थक और सृजनशील प्रयास किया।

इस आलोक में माधव शुक्ल ने १८९८ में ही इलाहाबाद में 'रामलीला मंडली' गठित करके राष्ट्रीय आंदोलन की चेतना को प्रसारित करने का एक नया माध्यम बना लिया। किंतु 'मंडली' के अधिकांश सदस्य अंग्रेज सरकार और खुफिया पुलिस की निरंतर रखी जा रही नजर से घबड़ा गए और इन लीलाओं के माध्यम से जनसाधारण के दिल-दिमागों को झकझोरने वाले राष्ट्रीय संवादों को बदलने के लिए माधव शुक्ल से आग्रह करने लगे। चूँकि माधव शुक्ल रामलीला के पात्रों के मुँह से कहलवाए गए संवादों के माध्यम से ही विदेशी शासन के उत्पीड़न एवं शोषण के ऊपर करारा व्यंग्य करते थे, अत: खुफिया पुलिस का दबाव जगजाहिर था—जिसका सामना करने के लिए अन्य सदस्य तत्पर नहीं थे, अत: माधव शुक्ल ने देशभक्ति के मुद्दे पर इन मतभेदों के चलते १९०८ में एक अलग संस्था 'हिंदी नाट्य समिति' की स्थापना कर ली, किंतु अपने सिद्धांतों से समझौता नहीं किया।

'हिंदी नाट्य समिति' में अब वे अव्यावसायिक, कलात्मक, देशभक्तिपूर्ण एवं औपनिवेशिक साम्राज्यवाद के विरुद्ध लिखे गए नाटकों का मंचन शुरू कर दिया, जिससे भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के सिद्धांतों, विचारों के प्रचार-प्रसार का एक सशक्त और आसान माध्यम मिल गया। अब वे 'रामलीला' के अतिरिक्त 'महाभारत' से लेकर भारतीय इतिहास के पन्नों से वे चरितनायक खोजने लगे, जिनसे राष्ट्र-गौरव और राष्ट्रप्रेम से लोगों को अनुप्रेरित करके जाग्रत् किया जा सके। इस संस्था के माध्यम से माधव शुक्ल उग्र राष्ट्रीयता का संदेश गाँवों और शहरों में तेजी से फैलाने में सफल भी हुए।

उनके नाटकों की सफलता के दो आयाम दिखाई देते हैं। एक तो उनके पौराणिक कथाओं के समसामयिक इस्तेमाल और इसके नायकों

के संवादों के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना के प्रचार-प्रसार की चर्चा दूर-दूर तक फैलने लगी! दूसरे, वे इलाहाबाद के अतिरिक्त अन्य स्थानों/शहरों में भी लोकप्रिय होने लगे तथा बड़े राष्ट्रवादी नेताओं की भाँति अनेक स्थानों पर नाटकों के मंचन के लिए भी आमंत्रित होने लगे। इसीलिए वे अन्य अनेक स्थानों में भी हिंदी नाट्य संस्थाएँ स्थापित करने में कामयाब रहे।

यहाँ हम उनके नाटकों के स्वरूप एवं प्रभाव के एक उदाहरण स्वरूप उनके प्रसिद्ध नाटक 'महाभारत' की चर्चा कर लें तो सहज ही अपनी बात संप्रेषित करने में सफल हो जाएँगे। वस्तुत: यह नाटक विशेष 'महाभारत' हिंदी रंगमंच के विकास के साथ ही राष्ट्रीयता की भवना के प्रसार दोनों ही क्षेत्रों में एक मील का पत्थर साबित हुआ। इस नाटक की लोकप्रियता का अंदाज इसी से लगाया जा सकता है कि जब अधिनायकवादी 'प्रेस अधिनियम' का प्रभावी क्रियान्वयन हुआ, तब अकेले इस नाटक की ५००० प्रतियाँ सरकार ने प्रेस से ही जब्त करके इस नाटक के प्रकाशन और मंचन को प्रतिबंधित कर दिया था।

इस नाटक के माध्यम से शुक्लजी ने समकालीन उत्पीड़क शासन की समस्याओं और राजनीतिक शोषण की परिस्थितियों को उजागर करने में एक अभिनव प्रयोग किया। उन्होंने पितामह भीष्म के मुँह से कहलवाने के लिए यह संवाद लिखा था, 'धिक् वह नृप, धिक् वे राजपुरुष, धिक् राज/कपट, कुमति, दुष्कर्मों से जो पीड़ित करे समाज!' अब समझ आता है क्यों 'रामलीला मंडली' में मतभेद हुआ होगा? हर किसी का बूता नहीं था ऐसे संवाद लिखे और उसका गर्व के साथ मंचन-निर्देशन करे। यह बस माधव शुक्ल के ही बस की बात थी।

जब 'हिंदी साहित्य सम्मलेन' का ६वाँ राष्ट्रिय अधिवेशन इलाहाबाद में १९१५ में आयोजित हुआ, तब भी साहित्यकारों और आयोजन समिति के विशेष आग्रह पर इसी नाटक का विशेष मंचन किया गया था। बाबू श्यामसुंदर दास, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, बद्री नारायण चौधरी 'प्रेमघन' आदि ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा ही नहीं की थी अपितु इसको राष्ट्रीय अंदोलन और हिंदी अस्मिता का संपृक्त रूप घोषित किया। आचार्य शिवपूजन सहाय ने इसे 'अद्वितीय' और रामधारी सिंह दिनकर ने इसे 'अभूतपूर्व' बताया। इतना ही नहीं, जब 'गरम दल' के नेता बाल गंगाधर तिलकजी महाराज १९१६ में इलाहाबाद आए, तब उन्होंने भी इसी नाटक के मंचन का अनुरोध किया एवं देखकर ऐसे नाटकों को प्रोत्साहित करने का वचन ही ले लिया।

इतना ही नहीं, हिंदी नाट्य दृश्य को राष्ट्रिय परिदृश्य प्रदान करने का भी बीड़ा उठाते हुए उन्होंने इलाहाबाद के अतिरिक्त कई अन्य शहरों में हिंदी नाट्य संस्थाओं की स्थापना की, ताकि इनके माध्यम से राष्ट्रीयता का अधिक प्रचार-प्रसार संभव हो सके। अत: उन्होंने जौनपुर, लखनऊ एवं कलकत्ता में भी हिंदी नाट्य संस्थाओं की स्थापना करके अपने उद्देश्य को एक पवित्र राष्ट्रीय संकल्प यात्रा का रूप प्रदान किया।

इसी प्रकार, इलाहाबाद में १९१८ में उनके नाटक 'सीय स्वयंवर' का मंचन हो रहा था। इसमें राजा जनक के संवादों में अप्रत्यक्ष रूप से आंग्ल सरकार की खुलकर आलोचना हो रही थी। खुफिया पुलिस और मुखबिरों की संख्या भी पर्याप्त थी। जिसके कारण दर्शक दीर्घा में अच्छी खासी खलबली मच गई और जनविरोध के भय से येन-केन-प्रकारेण उनकी गिरफ्तारी बच गई। उनके नाटकों में अनेक प्रसिद्ध लोगों ने भूमिकाएँ अदा की थीं। नाटक 'राणा प्रताप' में तो वे स्वयं राणा प्रताप तथा राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन भामाशाह बने थे। इसी प्रकार उन्होंने 'राजपूती तलवार' और 'महाराणा हम्मीर' जैसे नाटक भी लिखे थे, ताकि लोगों में राष्ट्रीयता का भाव भर सकें और युवाओं को उत्साहित कर सकें। वे हिंदू-मुसलिम एकता के प्रबल समर्थक होने के साथ ही ऊँच-नीच की भावना से बहुत दूर थे, अत: एक एकीकृत राष्ट्र का संदेश उनके नाटकों से भी संप्रेषित होता था।

वे अच्छी बँगला भी बोल लेते थे और अनेक वर्ष कलकत्ता में रहकर 'हिंदी नाट्य संस्था' के स्थापना और संवर्धन का कार्य किया। उन्होंने अपने कलकत्ता के दीर्घ प्रवास के दौरान भी राष्ट्रभक्ति से ओत-प्रोत अनेक नाटकों का लेखन एवं मंचन किया। इसी कारण वे अपने पुत्र विजय के साथ कलकत्ता में आंग्ल सरकार द्वारा बंदी भी बनाए गए, जबकि उनकी पत्नी कृष्णा एवं पुत्री सावित्री को इलाहाबाद में गिरफ्तार किया गया। इन दोनों पर विदेशी वस्त्रों की दुकान के सामने उनके बहिष्कार का मुकदमा चला तथा दोनों पिता-पुत्र राष्ट्रद्रोही और ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने के षड्यंत्र में बंदी बनाए गए।

माधव शुक्ल के जेल के किस्से भी बहुत महत्त्वपूर्ण हैं, कलकत्ता के 'प्रेसीडेंसी जेल' में भी वे साथी कैदियों को देशभक्ति के गीत सुनाते और नाटक खेलते। इसी लिए उनको फिर 'प्रेसीडेंसी जेल' से 'अलीपुर जेल' में स्थानांतरित करना पड़ा। यहाँ उन्हें पद्मराज जैन, मूलचंद्र अग्रवाल, अंबिका प्रसाद वाजपेयी, लक्ष्मी नारायण गर्दे जैसे राष्ट्रवादी एवं रचनाधर्मी और सक्रिय रचनाकर्मी से मुलाकात का अवसर ही नहीं मिला अपितु वे विचारों के आदान-प्रदान के लिए भी लाभदायक सिद्ध हुआ।

जब जेल की बात हो और वहाँ पर गाई उनकी कविताओं की, तब हमें सबसे पहले ध्यान आता है उनकी इन पंक्तियों का, जो उनकी कविता 'मिट्टी मुबारक हो जेलखाने की'—

हमें प्राणों से है मुसीबत जेलखाने की।
खुदा बख्शे सबों के दिल में कूबत जेलखाने की॥'

इस कविता की अंतिम दो पंक्तियाँ भी गौर करने लायक हैं—

हमें तो कृष्ण के दर्शन यहाँ हर शब को होते हैं।
बताता है हमें जो कद्रो-कीमत जेलखाने की॥

इसी प्रकार एक अन्य लंबी कविता है 'बलिदान', जिसकी पंक्तियाँ भी भारतीयों को अभय का आह्वान करती हैं—

फाँसी चढ़ो जेल में जाओ, भयवश कभी न देश भुलाओ।
हथकड़ियों पर मिलकर गाओ, स्वतंत्रता का गान।
चाहती है माता बलिदान जवानो उठो हिंद संतान॥

एक अन्य गीत में वे जोश भरते हुए कहते हैं—

चलेंगे तीर सहेंगे वीर/खुशी से पहनेंगे जंजीर।
जाएँगे जेल समझकर खेल/परीक्षा में न होएँगे फेल॥

उनकी एक लोकप्रिय रचना मंचों पर बहुत सुनी-सुनाई जाती थी—

जय जय श्री तिलक देव भारत हितकारी/
स्वदेशी अरु बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा प्रसार/
हिंद में स्वराज, चारि पंथ के पुजारी!

वे भारत की आजादी की लड़ाई में जिस शिद्दत से शामिल थे, उसी का विश्वास उनकी इन पंक्तियों में झलकता है, जिसमें उन्हें इस विदेशी शासन से आजादी की संभावना स्पष्ट दिखाई दे रही थी—

अरु सूर्य होय पश्चिम उदोत/अरु बहै सोई विधि गंग स्रोत/
पै भारत समुदय होनहार/टर सकत न अब कोई प्रकार/
थक जाए शत्रु कर तंत्र मंत्र/भारत होइये निश्चय स्वतंत्र/
पद दलित धूल ज्यों चढ़े माथ/त्यों हमहूँ उठेंगे एक साथ!

माधव शुक्ल अंग्रेजों की फूट डालो, राज करो की नीति को स्पष्ट रूप से समझ रहे थे, अत: अन्य लोगों को भी उससे आगाह करते हुए अपनी एक अन्य कविता में लिखते हुए भारतीयों का आह्वान करते हैं—

सिख हिंदू मुसलमां एक रहें/भाई भाई सा रस्म-रिवाज रहे/
गुरु ग्रंथ कुरान पुराण रहें/पोरी हो फसल सुक साज रहे/
मेरे बच्चे वतन पे निसार रहें/मेरी माँ बहिनों की लाज रहे!

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की एक बड़ी विशेषता जन-जागरण की भी थी, जिसके अंतर्गत नित्य प्रात: 'प्रभात फेरी' निकलती थी। इन 'प्रभात फेरियों' में उनकी दो रचनाओं के बोल बच्चे-बच्चे की जुबां पर रहते थे—

मेरी जाँ न रहे, मेरा सर न रहे/सामाँ न रहे, न ये साज रहे।
फकत हिंद मेरा आजाद रहे,/माता के सिर पर ताज रहे॥

इस गीत की दो अन्य पंक्तियाँ भी मार्मिक थीं और प्राय: अधिक गाई जाती थीं—

गाढ़े का कफन हो मुझ पै पड़ा/वंदेमातरम् अल्फाज रहे॥

इसी प्रकार प्रात: के एक राग 'भैरवी राग' में बँधे और गाए जानेवाला गीत वस्तुत: 'प्रभात फेरी' का ही गीत है—

जागो जागो भारतवासी अब निस बीत गई।
सकल चराचर निज कारज रत आलस त्याग दई॥
तू अचेत तोहीं लाज न आवत क्या मति भूल गई।
हो भाई, अब निस बीत गई॥

या एक पूरी कविता ही 'चेत मन अब ह्वै नयो प्रभात' शीर्षक से लिखी थी, जो उस समय बहुत लोकप्रिय हुई थी। उनकी एक अन्य कविता भी प्रभात फेरियों के माध्यम से बहुत लोकप्रिय हुई थी—

हमें विश्वास है भारत का दिन भी फिरनेवाला है।
हमारे आज बच्चों ने भी होश सँभाला है।
हमें विश्वास है भारत का दिन भी फिरनेवाला है।
भँवर घबड़ाता है क्योंकर बस अब थोड़ा ही बाकी है।
निकल आया है सूरज अब कमल भी खिलनेवाला है।
हमें विश्वास है भारत का दिन भी फिरनेवाला है।

यहाँ स्पष्टत: ब्रिटिश सरकार को भँवरे की उपमा दी गई है। वे कविताओं में हमको सचेत करते हुए औपनिवेशिक शासन को पूरे साहस के साथ उसका असली चेहरा उभारने से नहीं डरते थे, इसीलिए उनके ऊपर गिरफ्तारी की तलवार सदा ही लटकती रहती थी, मगर यह उनके अंदर और भी अधिक विरोध की चिनगारी का काम ही करती। वे औपनिवेशिक शासन के चरित्र को 'चोर', 'लुटेरे', 'डाकू' आदि संबोधनों से अलंकृत करते रहते थे, जैसा 'भैरवी' पर आधारित ये पंक्तियाँ हैं—

आँख खोल उठ हिंद बावरे अब हो गया सवेरा।
भाई अब हो गया सवेरा॥
चोरों ने गफलत में पाकर लूट लिया घर तेरा।
भाई अब हो गया सवेरा॥ आँख खोल··
ऐसा बेसुध सोया भाई घर की सारी सुध बिसराई।
देख, पड़ा चौतरफा तेरे डाकू दल का डेरा॥
भाई अब हो गया सवेरा॥ आँख खोल··
छूँछी तेरी पड़ी कोठारी छूँछी बखरी छूँछी वारी।
'माधव' लुटी तिजोरी तेरे सर पर खड़ा लुटेरा॥
भाई अब हो गया सवेरा॥ आँख खोल··

वे प्राय: ललकारते हुए से दबे जख्म कुरेदकर भी लोगों को जाग्रत् करने का प्रयास करते थे—

छोड़ चले वंदे ये न तेरे काम का
दाग लग गया है इसमें दासता का
जग करे तेरी हाँसी माँ बनी पराई दासी
तुझ सा कौन पापी माधौ आज धरा धाम का!

वस्तुत: इन कविताओं में कितने ओजपूर्ण बोल हैं, सहज समझ आता है कि आमजन को सिर्फ प्रात:काल की नींद से नहीं अपितु परतंत्रता की बेड़ियों के लिए जगाने या जनजागरण और राष्ट्रीय चेतना के प्रसार के लिए लिखे गए हैं—

नहीं अब सहेंगे हम अन्याय/शीश यह रहे चाहें कट जाए।
करेंगे असहयोग सरकार/हिला देंगे लंदन का द्वार॥
करेंगे क्रोध न हम आवेश/किंतु अन्याय करेंगे शेष॥

सोचिए, जब इसे संवेत स्वर में पूरे उत्साह के साथ 'प्रभात फेरियों' की टोली के सदस्यों द्वारा गया जाता था, तब क्या समां बनता रहा होगा।

भारतीय साहित्य एवं पत्रकारिता के इतिहास का एक बहुत महत्त्वपूर्ण तथ्य इनकी एक अन्य विचारोत्तेजक कविता से जुड़ा है। इनकी एक कविता 'बम क्या है?' को ब्रिटिश शासन ने अपने लिए घातक और भारत में उनकी सत्ता को उखाड़ फेंकने का एक गहन तथा स्पष्ट षड्यंत्र का भाग माना; चूँकि यह कविता उग्रवादी विचारों से प्रेरित थी और उसी मत का प्रचार करती थी, अत: ब्रिटिश हुकूमत ने कठोर निर्णय लिया। इस कविता को छपने के कसूर में सरकार ने बालकृष्ण भट्ट और उनकी 'हिंदी प्रदीप' पर तीन हजार रुपए की जमानत देने का दंड लगाया। चूँकि न वे यह राशि दे सकते थे और न ही यह देना गँवारा था, अत: १९१० में 'हिंदी प्रदीप' बंद ही हो गई। आइए, इस कविता का एक अंश देखें—

कुछ डरो न केवल इसमें बुद्धि भरम है,
सोचो यह क्या है जो कहलाता बम है।

यह नहीं स्वदेशी आंदोलन का फल है,
नहीं बायकाट या स्वराज्य की कल है!

अत: वे अपनी साहित्यिक सक्रियता से भी राष्ट्रिय आंदोलन में निरंतर योगदान देते रहे और इस कारण से भी जेल-यात्राएँ करते रहे। वे एक राष्ट्रवादी कवि, नाटककार, नाट्य कलाकार, कुशल अभिनेता, निर्देशक, संवादलेखक, वक्ता, चित्रकार, गायक, हिंदी प्रचारक, हिंदी रंगमंच के संयोजक एवं संगठनकर्ता तथा सबसे अधिक स्वतंत्रता आंदोलन के जुझारू सेनानी थे। उन्हें पंडित बालकृष्ण भट्ट ने 'राष्ट्रकवि', देशबंधु चितरंजनदास ने 'जातीय कवि', जी.एस. पथिक ने 'विद्रोही कवि' कहा। उनके प्रकाशित रचना-संसार में 'भारत गीतांजलि', 'स्वराज्य-गायन', 'भीष्म पराक्रम', 'भीष्म प्रतिज्ञा', 'सीता स्वयंवर', 'महाभारत', 'नारी संकल्प', 'नारी जागरण', 'प्रायश्चित्त' आदि उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं। उन्होंने कलकत्ता के 'न्यू थिएटर' की दो फिल्मों, यथा 'कैदी' तथा 'रोटी' में अभिनय भी किया था। ६ अप्रैल, १९४३ में राँची में जुनून की तरह भारत की आजादी के लिए सतत संघर्षरत इस सपूत का निधन हो गया।

सा.अ.
८/५ ए, बैंक रोड, इलाहाबाद-२११००२ उ.प्र.
दूरभाष : ९४५२७९९००८

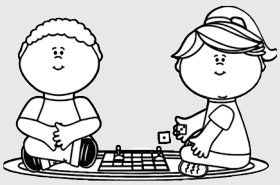

नानी बड़ी सयानी

बाल-कविता

● शिवचरण सरोहा

पानी
बर्फ तो पानी है
भाप उसकी नानी है,
भाप है नानी
तो क्या है पानी ?
नानी बड़ी सयानी है
भाप-बर्फ पानी है।

बूँद
बादल से टूटी
हवा में छूटी
गिरी टपाक
छप से छपाक
पानी की बूँदें
मिट्टी गूँदें।

परछाईं
परछाईं बोली धूप से
यहाँ-वहाँ चढ़ी है
जहाँ जाऊँ खड़ी है
मेरे पीछे पड़ी है।

दीवाली
चकरी चली सर्र-सर्र
फूलझड़ी छूटी झर्र-झर्र,
बम फूटे भड़ाम-भड़ाम
बरतन गिरे धड़ाम-धड़ाम।

नटखट-खटपट
एक था नटखट
एक था खटपट,
दोनों में हुई लटपट
छीना-छानी झपट-झपट,
आई पुलिस लिखी रपट
दोनों भाग गए सरपट।

ओस
दूब पर थी ओस धरी
चमकी कोने पर नहीं झरी,
उठा ले गई किरण-परी।

तोता
हरी डाल पे हरा तोता
आँखें मींचे खूब सोता,
भूख लगे मिर्च भी खाए
जीभ जले टें-टें चिल्लाए।

गधा
कहने को कव्वाल है
बेसुरा बेताल है,
अपने सुर पर फिदा है
गधा तो गधा है।

डाली
एक डाली, दो डाली
न जाने कितनी डाली,
काट-काटकर डाली
धरती खाली कर डाली।

चली हवा
हवा चली सर-सर-सर
लत्ते उड़े फर-फर-फर
बुढ़िया सोए खर-खर-खर।

ताना-बाना
शेर का रेंकना
गाय का भौंकना
हाथी का दहाड़ना
कुत्ते का चिंघाड़ना
बकरी का हिनहिनाना

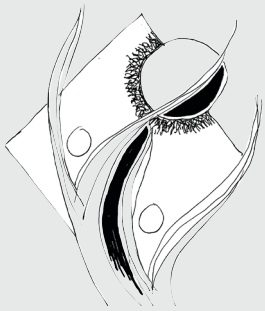

गधे का मिमियाना
घोड़े का रँभाना
ठीक भी कर दो नाना
ये उल्टा ताना-बाना।

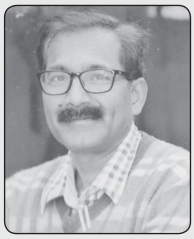

सुपरिचित कवि। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। हिंदी अकादमी, दिल्ली से पुरस्कृत एवं साहित्य मंडल, नाथद्वारा से सम्मानित। शिल्पा चड्ढा एवं राजेंद्र बिष्ट स्मृति सम्मान भी।

पप्पू
बर्गर खाया खाया पीजा
मोमोज खाकर पप्पू रीझा,
खाकर हो गया गोल-मटोल
पेट फूलकर हो गया ढोल।

टोका-टाकी
पतंग मत उड़ा
धूप में मत जा,
मत भाग इधर-उधर
एग्जाम है सिर पर,
किताब खोल लिया कर
कभी पढ़ लिया कर,
नंबरों की होड़ है
परीक्षा तेरी बोर्ड है।

स्कूल
लिखी नहीं थी सुलेख
बाहर रहा था देख,
पड़ी पीठ पर छड़ी
तितली फूल से उड़ी,
तिलमिलाया बच्चा
स्कूल नहीं है सच्चा।

बापू
एक बूढ़ा जवान
छाती अपनी तान,
दे रहा था जंतर
आजादी का मंतर—
'करो या मरो'
न किसी से डरो।

बचपन
कैसे लें
बचपन की मौज,
मुँह चिढ़ाए
बस्ते का बोझ।

सा.अ.
ए-१०७, शकूरपुर,
आनंदवास, दिल्ली-११००३४
दूरभाष : ८९२०५३७४३४

राम झरोखे बैठ के

एक श्रेष्ठ सैक्युलर सांसद

● गोपाल चतुर्वेदी

लोकतंत्र के चुनावकाल में बहुत कुछ अनपेक्षित होता है। जनता का आका आम आदमी की तलाश में जुटता है। भारतीय प्रजातंत्र के स्वर्ग में जीवित सांसद को धरती, विशेषकर अपने क्षेत्र की याद आती है। यों साल में एकाध बार वह अपने चुनाव क्षेत्र के नर्क में जाता तो रहा है, पर वहाँ की समस्याएँ जस-की-तस हैं। हर बार वह उनके निराकरण का वादा करता है और हर बार क्षेत्र से निकलते ही उसे भूल भी जाता है। क्या करे, यदि वहाँ सिंचाई के लिए जलाभाव है तो वह नदी को तो जन्म देने से रहा! एक नहर की योजना है, सरकार के कागजों में। पर हर बार कुछ ऐसी दुर्घटना घटती है कि वह वरीयता के क्रम में नीचे आ जाती है। कभी सूखा पड़ जाता है, कभी बाढ़ आ जाती है। नहर का निर्माण कैसे हो? हो भी जाए तो पानी कहाँ से उपलब्ध हो? सरकार का पूरा ध्यान सूखे या बाढ़ से राहत में लगा है।

पूरे शासकीय तंत्र की रुचि भी राहत में निहित है। यदि दस रुपल्ली का खर्चा है तो तीन-चार तो अंटी होना ही होना। सदाचार की गंगा में उद्‌गम के समय कोई गंदगी है क्या? उसकी संभावना तक नहीं है। वह तो जैसे-जैसे गंगा मानवीय बस्ती में पधारती है, उसमें इनसानी कलुष का समावेश होता जाता है। कहीं पूरे शहर की गटर-गंदगी गंगा को पावन करती है, तो कहीं वह कूड़े की निकासी का केंद्र है। ऐसा नहीं है कि पूरी आबादी करप्शन से बीमार है। बस इतना है कि जो जनसुविधा के कार्य में व्यस्त हैं, यह रोग उन्हीं को सताता है। भ्रष्टाचार अधिकार का मर्ज है। यानी ऊपर की नीतियों में खोट न हो, उनके क्रियान्वयन में तो हो ही सकता है। शासकीय अमला मानता है कि राहत का कार्य लेन-देन पर निर्भर है, यानी 'देन' की प्रक्रिया तभी प्रारंभ होगी जब 'लेन' का प्रबंध हो जाए। गंगा के स्रोत की शुद्धता से क्या हासिल होना है? अंग्रेजों के शासनकाल से वसूली की मानसिकता बाबू के चरित्र की अंग बन चुकी है। अब उसकी धमनियों में लहू न प्रवाहित होकर वसूली दौड़ती है। इसको रोकना, नीति-निर्माताओं की प्राथमिकता भले हो, पर क्या वह इसमें सफल हो पाएँगे?

हमारे सांसद भी विवश हैं। वह अपनी सुविधाओं और महत्त्व में गुम हैं। उन्हें भी अपने चुनावी व्यय की क्षतिपूर्ति करनी है, साथ ही भविष्य की उन पर निर्भर पीढ़ी का प्रबंध भी। पिछली बार सांसद होने पर उन्हें बताया गया है कि शिक्षण-संस्थाओं की स्थापना भी फायदे का सौदा है। फैक्टरी, पेट्रोल-पंप न लगाया, डिग्री बाँटने की थोक की दुकान खोल ली। नाम का नाम और दाम का दाम। जमीन की रियायती दर की जुगाड़ न हो पाए तो सांसद होने का लाभ ही क्या है? इसके अलावा एक और प्रमुख खर्चा शिक्षा-संस्था की इमारत है। इसके लिए राष्ट्रीयकृत बैंकों से बेहतर विकल्प क्या है? धीरे-धीरे उधार चुकता होता रहेगा। नहीं भी हुआ तो फर्क क्या पड़ता है? शिक्षा जनता के भले के लिए है और बैंकों में भी जनता का ही धन है। जनता का धन यदि जनता के वास्ते खर्च नहीं होगा तो किसके लिए होगा?

यही शिक्षण संस्था इस बार उनके गले का फंदा बन चुकी है। पिछली 'टर्म' में उन्होंने डिग्री कॉलेज क्या बनवाया, उस सफल प्रयोग के लिए अब वह पछता रहे हैं। सांसद महोदय अपने परिवार क्षेत्र के इसी शहर में रखते हैं। शहर अपनी शिक्षा के लिए प्रसिद्ध है। उसकी पूरे देश में ख्याति है। सांसद के 'जनता डिग्री कॉलेज' ने इसी में नाम कमाने की उपलब्धि हासिल की है। कहते हैं कि उसका 'स्टाफ' विश्वविद्यालय से टक्कर लेता है। छात्रावास महँगे तो हैं, पर उनकी सुविधाओं का मुकाबला नहीं है।

चुनावों के दौरान उन्होंने भारतीय जातीय व्यवस्था का खुलकर विरोध किया है। उनकी धारणा, क्या विश्वास है कि आदमी-आदमी बराबर हैं। जन्म की दुर्घटना से कोई एक से दूसरे का श्रेष्ठ होना कैसे संभव है? इस समानता की खाद से उन्होंने समाज की हर जात में वोटों की ढेर सारी फसल काटी है। धीरे-धीरे उनका व्यक्तित्व जनमानस के प्रिय और चहेते नेता के रूप में उभर रहा है। इस तथ्य का प्रमुख उदाहरण है कि पिछले चुनाव में एक के अलावा उनके हर विरोधी की जमानत जब्त हो चुकी है। 'जनता डिग्री कॉलेज' ने उनकी जनप्रिय छवि को और उभारा है। अब तो अखबारों में संभावित मंत्री पद के लिए उनका नाम भी उछलने लगा है। कॉफी हाऊस की बौद्धिक चर्चा में विद्वान् कहते पाए जाते हैं कि ''भैया! बहुत दिनों बाद ऐसा जनप्रतिनिधि आया है, जिसने कोई शिक्षण संस्था न अपने न किसी रिश्तेदार के नाम बनाई है, वरना अपना तो अनुभव है कि यदि किसी केश कर्तनालय या शौचालय का भी उद्‌घाटन है तो जनता का नुमाइंदा अपना नाम-पटल वहाँ जरूर लगवाता है। इसने तो डिग्री कॉलेज तक जनता को समर्पित किया है।''

ऐसी शानदार संस्था के होते हुए यदि सांसद की संतान वहाँ नहीं पढ़ती तो कहाँ पढ़ती ? यदि पिता के कॉलेज में लड़का या लड़की पढ़े तो प्रिंसिपल तक उसका ध्यान और विशेष खयाल रखते हैं। यही रुचिरा के साथ हुआ। यों सांसद पुत्री सबकी चहेती है। प्राध्यापक से लेकर सहपाठी तक उसका सम्मान करते। पढ़ाई में उसकी श्रेष्ठता के सब ही कायल हैं। इतना ही नहीं, व्यवहार में भी उसके घर के संयत संस्कार झलकते हैं। पिता के आदर्शों को जैसे अमल में लाने के लिए ही उसका जन्म हुआ हो। विनय, विनम्रता, सबको यथायोग्य इज्जत देने के लिए ही उससे छोटे-बड़े कर्मचारी सब प्रभावित हैं। जातियों के भेद को भुलाकर समानता का दृष्टिकोण अपनाना उसके स्वभाव का अंग है। प्राध्यापक को 'सर' के संबोधन से वह कभी नहीं चूकती, वहीं हर सहपाठी के सुख-दु:ख में वह उनका साथ निभाती है। यों शिक्षा एक ऐसा साधन है, जिसके दुरुपयोग से कुछ घटिया नेता बनते हैं, वहीं उसके सदुपयोग से पारस्परिक बंधुत्व पनपता है। यदि किसी ने शिक्षा को गंभीरता से लिया है तो उसका जातिवाद के कुचक्र में फँसना कठिन है। जीवनभर लोग छात्र जीवन की स्वर्णिम यादों को बहुमूल्य वस्तुओं की पोटली बाँधकर सँजोते हैं। यही स्मृतियाँ सुख के समय उनकी प्रेरणा है और दु:ख के वक्त उनका सहारा।

नेता का एक खास गुण, कहना कुछ और तथा सोचना कुछ और है। रुचिरा के पिता भी इसका अपवाद नहीं हैं। उनका संकुचित जातिवाद का विरोध असलियत में वोट पाने के जुगाड़ के अतिरिक्त कुछ और नहीं है। पर उन्होंने इतनी बार इसे सार्वजनिक रूप से दोहराया है कि यही इनसानियत उनके व्यक्तित्व की पहचान बन गई है। जब कोई सैक्युलर होने की बात करता तो उदाहरण उनका देता। कॉलेज की चयन समिति द्वारा नियुक्त प्राध्यापकों में एकमात्र गुण प्रत्याशियों की योग्यता रहा है। न उन्होंने अपनी जाति के लोगों को वरीयता दी है, न किसी समुदाय के प्रति उदासीनता जताई है।

नेता का एक खास गुण, कहना कुछ और तथा सोचना कुछ और है। रुचिरा के पिता भी इसका अपवाद नहीं हैं। उनका संकुचित जातिवाद का विरोध असलियत में वोट पाने के जुगाड़ के अतिरिक्त कुछ और नहीं है। पर उन्होंने इतनी बार इसे सार्वजनिक रूप से दोहराया है कि यही इनसानियत उनके व्यक्तित्व की पहचान बन गई है। जब कोई सैक्युलर होने की बात करता तो उदाहरण उनका देता। कॉलेज की चयन समिति द्वारा नियुक्त प्राध्यापकों में एकमात्र गुण प्रत्याशियों की योग्यता रहा है। न उन्होंने अपनी जाति के लोगों को वरीयता दी है, न किसी समुदाय के प्रति उदासीनता जताई है। लिहाजा, जो नियुक्त हुआ, वह अपने विषय का सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति ही रहा है। पूर्ण चयन समिति उनकी गुण-ग्राहकता पर गर्व करती है। धन और सिफारिश की प्रचलित रीति के जमाने में ऐसा होने का कोई सोच भी नहीं पाता है। पर जनता डिग्री कॉलेज की ख्याति में केवल योग्यता के मानक से चार चाँद लग गए हैं। ऐसा नहीं है कि उनकी आलोचना नहीं हुई। आलोचक तो मर्यादा पुरुषोत्तम राम को भी नहीं बख्शते तो सांसद तो अवतार न होकर सामान्य इनसान हैं। कोई कहता कि ''यह शर्मा ब्राह्मणों के नाम पर कलंक है।'' दूसरा उसमें जोड़ता कि 'जनता डिग्री कॉलेज' में 'जनता' इसलिए है कि माँ-बाप ने इसे घर से निकाल दिया था, धर्म-विरोधी होने के कारण। जितने मुँह उतनी बकवास। एक अन्य तो इस हद तक जाते कि ''इसने कॉलेज को अपना नाम देने पर गंभीरता से विचार किया था, जैसे एक नेता ने जीवित रहते अपनी मूर्तियाँ लगवा लीं। क्या भरोसा कि बाद में कोई और उन्हें पंछियों का बसेरा और शौचालय बनने का अवसर दे न दे ? फिर यह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि नामकरण में यह टुच्चापन उसे शोभा नहीं देता है। वहीं तो उसका ब्राह्मणत्व जगा वरना वह ब्राह्मण तो केवल नाम का है। यदि उसमें ब्राह्मण का एक भी गुण होता तो वह समाज का गौरव होता।''

बहरहाल, शर्माजी सांसद के चुनाव में भारी विजय से गद्‌गद है। एक स्तर तक सफलता पाकर आदमी सिर्फ अपना गुणगान सुन पाता है, अन्यथा वह बहरा है। सांसद जान-बूझकर अपने अतिशय सैक्युलर होने का सिक्का जमाने के लिए कभी-कभी अल्पसंख्यकों के प्रति अतिरिक्त उदारता भी प्रदर्शित करते हैं नियुक्तियों में। पर चयन समिति के उनके साथी नहीं सोचते कि यह वोट बैंक का आग्रह है। ऐसे योग्य तो यह भी हैं। कहीं भी इसका चयन हो जाता। दीगर है कि इससे अधिक योग्य प्रत्याशी भी हैं, पर अल्पसंख्यकों के चयन से कॉलेज की 'इमेज' थोड़ी और समावेशी बनेगी। उन्हें प्रोत्साहन भी मिलेगा। उसका इकलौता लक्ष्य वोट है। ब्राह्मणों के तो मिल ही जाते हैं, यदि अल्पसंख्यकों के भी मिलने लगे तो उसे कौन हरा सकता है ? अपने इस चिंतन को वह कैसे उजागर करे ? उसके धर्म-निरपेक्ष होने की कलई खुलेगी !

यों इस बार वह एक निजी समस्या के हल के लिए आए हैं। घर में कोहराम मचा है। पर नेता की, अदृश्य आंतरिक पीड़ा के अलावा सबकुछ सार्वजनिक है। वह कैसे स्वीकार करता कि रुचिरा ने उसी के कॉलेज के दलित प्राध्यापक के साथ विवाह कर लिया है। कॉलेज के प्रिंसिपल ने इसे उसके पिता के 'आदर्शों को साकार' करने का शुभ निर्णय बताया है, वहीं पूरे कॉलेज के छात्रों ने इसे पिता के उसूलों पर जीने का प्रयास। उन्होंने नव-विवाहितों के स्वागत का कार्यक्रम भी आयोजित करने का निश्चय किया है। स्वाभाविक है कि सांसद को इसका मुख्य अतिथि बनाया जाए। रुचिरा के इस मनपंसद विवाह से उसकी माँ के आँसू हैं कि थम ही नहीं रहे हैं। वहीं सांसद ने कॉलेज के समारोह में मन-ही-मन आर्तनाद करते घोषणा की है, यह विवाह उनकी बेटी का नई सामाजिक क्रांति में निजी योगदान है। उन्हें इस पर गर्व है। उन्हें विवाह में पैसे की बरबादी, दहेज आदि से परहेज है, पर अपनी

बेटी के विवाह के उपलक्ष्य में एक सादे रिसेप्शन का आयोजन, अपने क्षेत्रवासियों के वृहद परिवार के लिए वह अवश्य करेंगे।

समाचार-पत्रों की सुर्खियों में सांसद और उसकी बेटी के विवाह की खबरें छाई रहीं। शादी पर, उसकी सहमति के लिए उसको बधाई दी गई। वहीं रुचिरा की माँ-भाई ने उससे अनबोला-चाली साध ली। यहाँ तक कि दोनों माता-पुत्र सांसद द्वारा आयोजित स्वागत समारोह में भी नहीं आए। सांसद ने अपनी छवि को धूमिल न करने के आग्रह व मिन्नतों से उन्हें समझाने की कोशिश की। पर सब व्यर्थ। मन के अवचेतन में बसी जात की सैकड़ों वर्षों की पकड़ उनकी चेतना पर भारी पड़ी। दोनों इस समारोह में भी शरीक नहीं हुए। सांसद परिवार की इस बेरुखी से दुःखी तो हुए, पर करते क्या? वह भी अंदर-ही-अंदर उदास थे, किंतु विवश भी। प्रश्न उनकी 'इमेज' के चूर-चूर होने का है। उन्होंने निश्चय किया था कि विवाह के शुभ अवसर पर वह नव-विवाहितों को नगर विकास निगम के द्वारा निर्मित एक फ्लैट का उपहार देंगे। उन्होंने समाज के हर तबके से अपनी बेटी के आदर्श के अनुकरण करने की 'अपील' की। साथ ही उन दोनों को अपने यहाँ भोजन के लिए आमंत्रित भी किया—''यह मेरा सौभाग्य है कि बेटी ने शादी करके दामाद नहीं, एक बेटा परिवार को सौंपा है। वह विद्वत्ता के लिहाज से हर हाल में संपन्न है। वह धनवानों से कहीं अधिक धनवान है। पढ़ाने में उसकी प्रसिद्धि है। वह इस लिहाज से लाखों से बेहतर है।''

पर वह फ्लैट देने की घोषणा से मुकर गए। मन-ही-मन वह अपने सार्वजनिक भाषणों को दोष देते। रात को कभी-कभी चौंककर उठ बैठते। उनके ब्राह्मण-संस्कार और विशुद्ध पारिवारिक परंपरा का क्या होगा? उनकी पत्नी कभी-कभी उन्हें ही कोसती, ''न उस कलमुँहे को कॉलेज में नौकरी देते, न आज यह दिन देखना पड़ता।''

वह भी दुखी होते यह सोचकर कि राजनीति में व्यक्ति को अपनी असली आस्था छिपाने के लिए कितने मुखौटे लगाने पड़ते हैं? आज तो उसकी बेटी उसके झूठे आदर्शों का शिकार बनी है, कल उनका बेटा भी यही कर बैठा तो वह क्या करेगा? उसके अंतर्मन का संघर्ष धीरे-धीरे स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव डालने लगा।

आदर्शों का ढोंग करने में उसे कष्ट होता। कभी रक्तचाप बढ़ता, कभी अकारण बुखार आ जाता। सारी अफवाहों के बावजूद वह मंत्री नहीं बन पाया। निजी जीवन की निराशा और मंत्री पद न पाने की पीड़ा से एक दिन उसे गंभीर दिल का दौरा पड़ा। उसकी बेटी और दामाद घर आकर भी उसके दर्शन नहीं कर पाए। जब तक वह अस्पताल ले जाया गया, उसके प्राण-पखेरू उड़ चुके थे। झूठ के जीवन का प्रतिकार वह अपने जीवन की आहुति देकर भी न कर पाया। आज उनका बेटा भी सफल नेता बन चुका है, उसके झूठे उसूलों को दोहराकर! वह तो इन सब चिंताओं से मुक्ति पा चुका है, पर उसकी पत्नी अपने लाड़ले के भविष्य को लेकर चिंतित है। ''यह इतनी लगन से अपने पिता के मिथ्या आदर्शों का अनुकरण कर रहा है, कहीं इसका हश्र भी उस जैसा न हो!''

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

कविता

यों नहीं मैला करो वातावरण को

• सुशीला शर्मा

यों नहीं मैला करो वातावरण को,
स्वच्छ कर लो तुम अभी निज आचरण को।
खो न जाए स्वार्थ में गरिमा तुम्हारी,
अब हटा दो छल-कपट के आवरण को॥
तारिणी जनहित निरंतर बह रही है,
मत करो मुझको मलिन यह कह रही है।
पाप धो-धोकर हुई कलुषित तरंगें,
मौन होकर पावनी सब सह रही है॥
पार पाना चाहते हो यदि भँवर से,
तो पखारो मातु गंगा के चरण को।
स्वच्छ कर लो तुम भी निज आचरण को॥
चंद सिक्कों के लिए मानव झुका है,
मूल्य चारित्रिक गुणों के खो चुका है।
दौड़ में दौलत की आगे हो भले ही,

पंथ में हो भ्रष्ट काँटे बो चुका है॥
हो न जाओ नष्ट लालच की प्रलय में,
रोक लो तुम आत्मा के नित क्षरण को।
स्वच्छ कर लो तुम अभी निज आचरण को॥
मत मसलना बाग की कच्ची कली को,
महकने दो इसकी खुशबू से हर गली को।
है यही संपूर्ण सृष्टि की विधाता,
बहन, बेटी, माँ कहा जिस लाड़ली को॥
है दया, वात्सल्य, ममता की जो मूरत,
पूज लो उस जगज्जननी के चरण को।
स्वच्छ कर लो तुम अभी निज आचरण को॥

१७४/६ इंदिरा कॉलोनी
मुजफ्फरनगर (उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : ९४५७८३७८६४

अनुभूति

● माला कपूर

बहुआयामी व्यक्तित्व की धनी। पठन, गायन, कविता-लेखन, पाक-कला, चित्रकला, ड्राइविंग तथा आतिथ्य-सत्कार में तो दक्ष हैं ही साथ ही देश-दुनिया की रोमांचकारी यात्राओं में अत्यंत रूचि रखती हैं। एन.सी.ई.आर.टी. से नेशनल अवॉर्ड द्वारा सम्मानित। देश के अनेकों संस्थानों द्वारा सम्मानित।

बचपन बहाया मैंने,
कागज की किश्तियों में।
लड़कपन सँभाला था,
कलम की बैसाखियों ने॥
कलम किए कितने कलम,
प्रगति की राह पर।
मानपत्रों की हर कतरन,
रखी सँभालकर॥
प्रकृति का उपभोग किया,
आँख मूँदकर।
क्या घटेगा क्या बढ़ेगा,
मूल प्रश्न भूलकर॥
जमा और गुणा किए,
उन्नति के आँकड़े।
भौतिकता के युग में,
फिर पाँव जा पड़े॥
योजनाएँ अनगिनत,
नभ छूने की तैयारी।
एक हाथ में कुल्हाड़ी,
और दूजे में ले आरी॥
वन है तो जीवन है,
आधार मंत्र छोड़कर।
करने चली सृजन,
नियम सृष्टि के तोड़कर॥
प्राणधार वृक्षों का
नियंत्रण बिगाड़कर।
स्तंभ सृष्टि संतुलन के,
रख दिए उखाड़कर॥
चिन दिए घरों पे घर,
गहरे खंभ बीज कर॥
धरा का छेदकर सीना,
विनाश नींव सींचकर॥
उठा था शोर चारों ओर,
बन गए घर बन गए।
किया अनसुना रुदन कि
वन गए, वन गए॥
दीवारों के जंगल में,
गाँव लुप्त हो गए।
सुमन, सुगंध शुद्ध पवन,
सभी अल्प हो गए॥
घुटने लगा जब दम,
मैं सहमी और तड़फड़ाई।
रुकने लगी जब साँस,
तब चेतना आई॥
हाय! जिस डाल पर था घर,
उसे ही काट दिया?
अपने ही पाँवों पर,
स्वयं प्रहार किया?
चरमराई शाख ढह गई,
आ गिरी धरा पर मैं।
आहत अपंग असहाय सी,
पथरा गई थी मैं॥
न जड़, न चेतन जैसी
हुई मेरी अवस्था।
निर्बल हुआ हर अंग,
और घिर आई शून्यता॥
वृक्ष भी था घायल कुछ,
छाँव फिर भी रखी सर पर।
जीवन दिया फिर मुझको,
अपने श्वास देकर॥
जलकर स्वयं लू धूप में,
दी मुझको शीतल छाया।
भीगा स्वयं सावन में,
और मुझको सदा बचाया॥
आँधियों की धूल,
मेरे तन से दूर ही रही।
हिमपात में भी मैं,
सुरक्षित पड़ी रही॥
उदारता देख वृक्ष की,
तब मैं लजाई।
पाप-बोध से गड़ी,
मैं न उठ पाई॥
साहस कर पूछा वृक्ष से,
कि क्यों मुझको बचाया?
मैंने केवल तुमको,
भोगा और सताया॥
हलचल हुई,
पत्ते से पत्ता सरसराया।
नादान प्रश्न पर,
पिता ज्यों मुसकराया॥
ममता भरी बाँहों सी,
शाखें आईं बढ़कर।
बोली कि क्या करोगी,
जो दूँ फिर एक अवसर॥
नन्हा सा बीज एक,
मेरे हाथ में दिया।
सारतत्त्व मेरी मुट्ठी में,
फिर थमा दिया॥
उस बीज ने सृष्टि की,
झलक दिखलाई।
आत्मग्लानि से रूँधी,
और आँख भर आई॥
अश्रु पश्चात्ताप के,
बहाकर बीज ले गए।
गोद में धरा की,
जन्म लेने को समा गए॥
स्नेह स्पर्श पाकर,
अंकुरों ने आँख जो खोली।
सृष्टि-चक्र चल पड़ा,
धरा की भर गई झोली॥

२००१ सनकोर्ट टावर-१, जेपी ग्रीन्स
गोल्फ कोर्स, ग्रेटर नोएडा-२०१३०६ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९१००९११०९

श्रीगुरुनानक देव के जीवन के प्रेरणास्पद प्रसंग

● **मनमोहन गुप्ता**

श्री गुरुनानक देव सिख सिंह समाज के ही नहीं अपितु हम सबके महान् गुरु थे। आज से पाँच सौ पचास वर्ष पूर्व वे इस धरा पर अवतरित हुए थे। शारीरिक रूप से आज वे हमारे समक्ष नहीं हैं, लेकिन उनकी शिक्षाएँ हमारे लिए हमेशा प्रेरणास्पद रहेंगी। इनके तेज से हम आज भी आलोकित हो रहे हैं। उनका प्रकाश आज चहुँ दिशाओं में इस प्रकार फैला हुआ दृष्टिगत होता है—

'जिऊँ करि सूरज निकलया, तारे छपे, अँधेरु पलोआ।'

ऐसे ज्योतिर्पुंज को हमारा कोटि-कोटि प्रणाम! लख-लख बार चरण वंदना हमारी। इस वर्ष श्रीगुरुनानक देव की पाँच सौ पचासवीं जयंती संपूर्ण भारत में ही नहीं विश्व में भी बहुत धूमधाम और उल्लास के साथ मनाई जा रही है। श्री गुरुदेव दिव्य पुरुष थे। कहा भी गया है—

'सतपुरख जिन जाणया, सतगुरु तिसके नाऊँ।
तिसके संग सिख उबरे, नानक हरिगुन गाऊ।'

श्रीगुरुनानक देव किसी एक व्यक्ति या एक जाति के ही गुरु नहीं थे। वे विश्व गुरु थे। इनके बचपन की प्रारंभिक घटना है। मौलवी मुहम्मद हसन इनके शिक्षक थे। वह इन्हें पुत्रवत् प्यार करते थे। वह बड़ी लगन के साथ इन्हें फारसी पढ़ाया करते थे। एक दिन की घटना है। वह बच्चों को फारसी के अक्षर का ज्ञान करा रहे थे, जिसमें वह अलिफ बे और पे के संदर्भ में बता रहे थे। इनके सभी साथी अनुशासित होकर चुपचाप तख्ती पर ये अक्षर लिख रहे थे। तभी बालक नानक ने मौलवी साहब से पूछ लिया, 'मौलवीजी, अलिफ का क्या अर्थ होता है?'

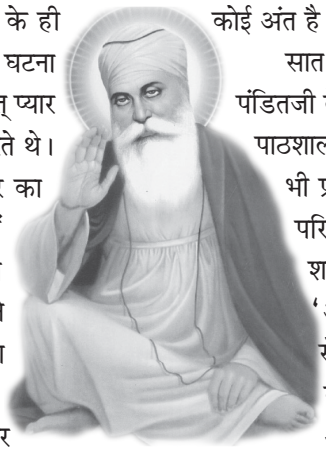

मौलवी साहब ने अलिफ का अर्थ कुछ न बताकर इतना कह दिया कि 'वह तो केवल एक अक्षर है।' तपाक से बालक नानक बोल उठे—'मौलवी साहब, अलिफ अल्लाह के याद कर गफलतु मनहिं बिसारा।'

इसे सुनकर मौलवी चौंक पड़े। वह भाँप गए, निश्चित ही यह बालक के रूप में कोई महान् शक्ति ही है। ठीक इसी प्रकार जब गोपाल पंडितजी पाठशाला में पढ़ा रहे थे। सभी बालक लिख रहे थे। लेकिन बालक नानक अपलक नेत्रों से आकाश को निहार रहा था।

पंडितजी ने इनसे पूछा, 'नानक बेटा, तुम क्यों नहीं पढ़-लिख रहे हो?

'पढ़ तो रहा हूँ पंडितजी', यह सुनकर पंडितजी उनपर झल्ला गए। कहने लगे, 'एक तो पढ़ता नहीं है, दूसरे झूठ और बोलता है।'

पंडितजी सच्ची पढ़ाई तो मैं ही पढ़ रहा हूँ। ये सब तो झूठी पढ़ाई पढ़ रहे हैं—

'जलि मोह घसि मसि करि
मति कागद करि सारन
भाई कलम करि चितु, लेखारि
गुरु पुछि लिखु बीचारि
लिखु नाम सालाह लिखु
लिखु अंत न पारावार।'

अर्थात् मोह को जलाकर उसे घिसकर स्याही बनाओ। बुद्धि को श्रेष्ठ कागज समझो। प्रेमभाव की कलम बनाओ। चित्र को लेखक और गुरु से पूछकर लिखो—नाम की स्तुति। और यह भी लिखो कि उस प्रभु का न कोई अंत है और न कोई सीमा।

सात वर्ष की अवस्था में बालक नानक की यह बात सुनकर पंडितजी देखते ही रह गए थे। थोड़ा और बड़ा होने पर इन्हें संस्कृत पाठशाला में अध्ययन के लिए प्रवेश दिला दिया गया था। यहाँ भी प्रथम दिन में ही बालक नानक ने अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय देकर सबको हतप्रभ कर दिया था। इनके संस्कृत शाला में गुरुजी थे श्री पंडित ब्रजनाथ। जब कक्षा में उन्होंने 'ओ३म' बोलने को विद्यार्थियों से कहा तो नानक तपाक से पूछ उठे, 'पंडितजी 'ओ३म' का अर्थ क्या होता है?' बालक नानक के मुँह से ऐसा प्रश्न सुनकर गुरु को बड़ा आश्चर्य हुआ। पंडित ब्रजनाथ कुछ बोलते, उससे पूर्व ही बालक नानक बोल उठे—

'एक ओंकार सतिनामु, करतापुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरु प्रसादि।'

अर्थात् ओ३म उस ईश्वर का नाम है, जो एक है, सत् है, सारी सृष्टि रचनेवाला है, निडर है, वैर-विरोध से परे है, जिस पर काल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जो कभी जन्म नहीं लेता। जिसे पैदा करनेवाला कोई दूसरा नहीं और जिसे मनुष्य गुरु की कृपा से ही प्राप्त कर सकता है।

बालक नानक के मुख से यह गहन गुरुवाणी सुनकर पंडितजी दाँतों तले अंगुली दबा गए। उनकी सारी विद्वत्ता धरी रह गई थी। ठीक

इसी प्रकार जब बालक नानक का यज्ञोपवीत संस्कार हो रहा था तो उस समय भी पुरोहित हरदयाल से उन्होंने ऐसा ही प्रश्न कर डाला था— 'पुरोहितजी! जनेऊ का क्या अर्थ है?' पुरोहितजी ने उसकी गूढ़ व्याख्या कर दी थी। उस पर बालक नानक मुसकरा उठे थे। उन्होंने बहुत ही सरल शब्दों में इस प्रकार जनेऊ का अर्थ स्पष्ट किया—

'दया कपाह, संतोखसूत, जल गंढी, सत्यबट।
इह जनेऊ जीऊ का हइ 'त' पांडे घत।'

अर्थात् दया की कपास हो। संतोष का सूत हो। सत्य की बाट हो, यही यज्ञोपवीत का अर्थ है।

हृदयरूपी थाली में क्या होना चाहिए? इस संदर्भ में उन्होंने कहा था—

'थाल बिच तिन वस्तु पाइयो,
संत संतोख, विचार।
अमृतनाम ठाकुर का पइयो,
जिसका सबसु आधार।'

अर्थात् उसमें सत्य, संतोष और विचार, यानी सच्ची सूझ-बूझ। प्रभु की उपासना में जब नाम रूपी अमृत मिलता है तो उसे चखकर भक्त का जी भर आता है। उसके पश्चात् तो उसकी और कोई इच्छा ही नहीं रह पाती है। उनकी स्वयं की वाणी में कहा गया है—

'ना ओहु मरता, ना हम डरिया
ना ओहु विनसे ना हम कड़िया
ना ओहु निर्धन, ना हम भूखे
ना ओहु दूखु, ना हम कऊ दूखे
ना उसु बंधन, ना हम बाँधे
ना उसु धंधा, ना हम धांधे
ना उसु मैल, ना हम कह मैला
उसु आनंदते हम सद केला'

वह परमात्मा है तो मैं भी जीवात्मा हूँ। न वह मरता है, न मैं मृत्यु से डरता हूँ। न कभी उसका नाश होता है और न मेरा। न वह कभी गरीब होता है और न मैं भूखा रहता हूँ। न उसे दु:ख लगते हैं, न मुझे कष्ट सताते हैं। न कोई उसे बाँध सकता है और न मैं बंधन में हूँ। न उसका कोई काम-धंधा शेष है और न मेरा कोई कर्तव्य अधूरा है; न वह कभी मैला होता है, न मुझे पाप लगते हैं। वह परमात्मा आनंदस्वरूप है। उसमें लीन होकर हम भी आनंदमय बन जाते हैं।

सच्चे मनुष्य होने के संदर्भ में उनकी मान्यता थी—

'सच तां पर जानिए जा सिख सच्ची लेह।
दया जाने जीव को, किछ पुत्र दान करेइ॥'

उनकी मान्यता में, जो शिक्षा ग्रहण करता है। जो दूसरों के दु:ख देखकर उन पर दया करता है और कुछ दान-पुण्य करता है। वही सच्चा मनुष्य है।

एक दिन की बात है। इनके पिता कालू मेहता दुकान से लौटकर आए तो उन्होंने नानक की माँ तृष्णा रानी से नानक की शिकायत करते हुए कहा, 'नानक की अम्माँ, तुम्हीं सोचो। बूढ़ा बाप तो दिन-रात हड्डियाँ रगड़-रगड़कर कमाई करे और जवान बेटा घर में ठाले बैठे ही बेकार रोटियाँ तोड़ता रहे। तो आप ही बताइए यह कहाँ का न्याय है?'

सुपरिचित कवि-लेखक। अब तक दो कहानी-संग्रह, दो कविता-संग्रह, एक उपन्यास प्रेम में तथा राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में अनेक रचनाएँ निरंतर प्रकाशित एवं दूरदर्शन तथा आकाशवाणी जयपुर से रचनाओं का सजीव प्रसारण। नाथद्वारा में हिंदी की अग्रणी संस्था साहित्य मंडल तथा राज. ब्रजभाषा अकादमी, जयपुर द्वारा सम्मानित।

नानक की माँ ने इनके पिता की बात सुनकर धैर्य बँधाते हुए कहा था, 'देखो जी! अब नानक बाल्यावस्था त्यागकर किशोरावस्था के पायदान पर पैर रख रहा है। उसके साथ डाँट-डपट करना ठीक नहीं है। आप उसे प्यार से समझाइए, अवश्य मान जाएगा। आप उसे प्रतिदिन दुकान पर लेकर तो जाइए। वह वहाँ जाएगा तो व्यापार में भी धीरे-धीरे उसका मन लगने लगेगा। जब किसी के सिर पर आ पड़ती है तो वह उसे अवश्य पूरा करता है। तुम उस पर क्रोध न करना। तुम्हें मेरी कसम है, जो तुम उस पर क्रोध करो तो।'

दूसरे दिन पिता कालू मेहता नानक को अपने साथ दुकान पर ले गए। वहाँ दुकानदारी करने के नियम भी बताए। कुछ अपने अनुभव भी उन्हें सुनाए। लेन-देन के बारे में दृढ़ रहने की शिक्षा देकर उन्होंने अपनी जेब से बीस रुपए देते हुए उनसे कहा, 'लो ये बीस रुपए हैं, मंडी में चले जाओ और माल खरीद लाओ। तुम रुपयों के मामले में अपनी अंटी मत खोल देना। तुम्हें सच्चा सौदा करके ही लौटना है।'

युवक नानक अंटी में रुपए रखकर चूड़काना मंडी की ओर चल दिए। मंडी के सामने से उन्हें एक संत समूह की टोली आती नजर आई। नानक को संत दिख जाएँ और वह उनके दर्शनों को उनके पास न जाए। यह कभी संभव ही नहीं था। नानक वहाँ पहुँच ही गए। धर्मिक चर्चा करने लगे। बातचीत में ही उन्हें पता चल गया कि संत समाज भूखा है। इन्होंने सुबह से कुछ भी ग्रहण नहीं किया है। यह सुनते ही नानक का हाथ रुपयों की अंटी की ओर गया। लेकिन तभी अपने पिताजी की शिक्षा का स्मरण हो आया कि अंटी ढीली नहीं करनी है। बेटा सच्चा सौदा करके ही घर लौटना है।

नानक के अंतर्मन से आवाज आई। इससे अच्छा सच्चा सौदा क्या हो सकता है नानक! इन रुपयों से संतों की भूख मिटाई जाए। पुण्य की कमाई ही सबसे ऊँची कमाई होती है। बस फिर क्या था, नानक दौड़े-दौड़े गए और साधुओं के लिए भोजन तथा फल आदि खरीद लाए। उन्होंने पूर्ण भक्ति और श्रद्धा से संत समाज को भरपेट भोजन कराया। उसके उपरांत बहुत देर तक सत्संग का लाभ उठाया।

शाम को जब नानक खाली हाथ दुकान पर लौटे तो पिता ने दोनों हाथों से अपना माथा ठोंका। नानक पर बुरी तरह झुँझलाए। उस परिस्थिति

में वे नानक की माता द्वारा दिलाई सारी कसमें त्यागकर बेटे नानक को डाँटने लगे—'बाप का पैसा लुटाते हुए तुम्हें जरा भी शर्म नहीं आई। अरे, अपनी मेहनत से कमाई करो, तभी तुम्हें पता चलेगा कि कठोर मेहनत से कमाया हुआ धन कैसे खर्च किया जाता है?'

बाप-बेटे की कहा-सुनी पड़ोसी दुकानदारों ने सुनी तो वे इकट्ठे होकर तमाशा देखने लगे। संयोगवश उस शहर के मुखिया भी जब वहाँ से निकले तो वह भी वहीं रुक गए थे। वह नानक के व्यक्तित्व से पूर्व में ही प्रभावित हो चुके थे। इसीलिए नानक के पिता को पास बुलाकर समझाने लगे, 'केवल बीस रुपए की बात है न? यह लो तुम मुझसे बीस रुपए की जगह तीस रुपए ले लो, पर नानक से कुछ नहीं कहोगे। तुम नहीं जानते, नानक का कोई दोष नहीं है। जिसके मन में ईश्वर भक्ति की लगन लग जाती है, वह तुम्हारी दुकानदारी से अधिक संत सेवा की कमाई करना अधिक पसंद करता है। मेरी बात मानो तो आज से तुम अपने बेटे को स्वतंत्र छोड़ दो। वह तो आजाद पंछी की तरह है। निश्चित ही एक दिन स्वच्छंद गगन में उड़ान भरेगा, तुम उसे बाँधकर अपने पास नहीं रख सकते।' कहा भी गया है—

'घालि खाइ कछु हथहु देई। नानक राह पद्यनहु सेई॥'

अर्थात् मेहनत से कमाओ-खाओ और हाथों से दान दो। दूसरों की सेवा का कोई भी अवसर कभी भी तुम्हारे हाथ से निकल न जाए।

दीवान जयराम की सिफारिश पर सुलतानपुर के नवाब दौलतखाँ ने युवक नानक को अपना भंडारी नियुक्त कर दिया था। इस पर कुछ लोगों ने उनका विरोध किया। वह उनको फँसाने के लिए झूठे षड्यंत्र रच रहे थे। उनमें से एक षड्यंत्र यह सामने आया कि नानक सरकारी भंडार में से गबन करता है। जबकि गबन करना तो दूर की बात थी, सच्चाई यह थी कि नानक अपने वेतन का अधिकांश भाग साधु-संतों की सेवा में खर्च कर दिया करते थे।

विरोधियों के षड्यंत्र पर नवाब ने नानक को दंडित कर जेल भेज दिया था। लेकिन जब गबन की जाँच हुई तो उसमें वह निर्दोष पाए गए। उस पर सुल्तानपुर का नवाब उनका प्रशंसक ही नहीं, भक्त बन गया। उसने नानक के सम्मुख उनके वजीर बनाए जाने का प्रस्ताव रखा। उस पर नानक ने नवाब साहब से कहा, 'नवाब साहब, आपकी नेकनीयती से मैं प्रभावित हूँ। लेकिन अब मैं नौकरी नहीं करना चाहता। क्योंकि दुनिया का नवाब मुझे अपनी तरफ बुला रहा है। बस अब तो मैं उसी की नौकरी करूँगा।' उसी समय सुल्तानपुर के नवाब नानक के चरणों में गिरकर पश्चात्ताप के आँसू आँखों में भरकर कहने लगे, 'आप खुदा के हुजूर में जाइए! मुझे आपमें खुदाई का नूर नजर आ रहा है।'

जब से नानक सुल्तानपुर गए, तभी से अपने इकलौते पुत्र की राह देखते-देखते उनकी माँ की आँखें पथरा गई थीं। उमर के ढलान पर पिता कालूराम मेहता भी अपनी 'बुढ़ापे की लाठी' पर नजर लगाए बैठे थे। लेकिन जब उनको पता चला कि नानक ने वजीर बनने से मना कर दिया है और अब वह दुनिया से दूर-दूर रहने लगा है तो माँ-बाप की सब आशाओं पर पानी फिर गया।

जब उन्हें कहीं से कोई उम्मीद नजर नहीं आई तो वे नानक को राजी करने के लिए उनके मित्र मरदाना के पास पहुँचे। उन्होंने उससे कहा, बेटा! वह दर-दर की ठोकरें खा रहा है। उसे अपने माँ-बाप भी अब पराए लगने लगे हैं। तुम्हीं बताओ मरदाना, घर में किस चीज की कमी है? अपनी दुकान है। खूब चलता हुआ व्यापार है। बाजार में अच्छी साख है। हमने तो आस लगा रखी थी, बेटा जवान होगा तो माँ-बाप की सेवा करेगा। हमारे व्यापार को सँभाल लेगा। हम बुढ़ापे के चार दिन सुख-चैन से काट लेंगे। पर नानक ने तो हमसे ऐसा मुँह फेर लिया है, जैसे हम उसके माँ-बाप नहीं दुश्मन हों। फिर उसके ये दिन खाने-कमाने के हैं। अब तुम ही बताओ मरदाना बेटा, उसे समझदार कौन कहेगा, जो अपना भरा-पूरा घर छोड़कर भिक्षा की रूखी-सूखी रोटियों पर गुजारा कर रहा है।

'बेटा मरदाना, हम पर दया करो। एक बार तुम सुल्तानपुर जाकर अपने मित्र को मनाकर अपने साथ यहाँ ले आओ। तलवंडी के तुम दोनों ही बचपन के घनिष्ठ मित्र हो। वह तुम्हारी बात अवश्य मान जाएगा। तुम हमारे बुढ़ापे पर तरस खाओ। एक बार नानक को जरूर घर ले आओ बेटा! तुम्हारा यह उपकार हम जिंदगीभर नहीं भूलेंगे।'

उनकी यह दर्द भरी दास्तान सुनकर मरदाना का दिल भी भर आया था। उसने कालूरामजी को आश्वासन देते हुए कहा, 'दादा, खुदा ने चाहा तो मैं सात दिनों के अंदर तुम्हारा बेटा तलवंडी में लाकर तुम्हारे सम्मुख खड़ा कर दूँगा। मुझे पूर्ण विश्वास है, वह अपनी जिम्मेदारी को अवश्य समझेगा। अपने कर्तव्य का निर्वहन भी करेगा। आप चिंता न करें। मैं आज ही, अभी सुल्तानपुर के लिए प्रस्थान कर रहा हूँ।' मरदाना की बात से नानक के बूढ़े माँ-बाप को आशा बँधी।

उधर मरदाना जब नानक से मिला तो उसके सारे प्रयत्न विफल हो रहे थे। मरदाना ने नानक को भक्ति से मोड़कर घर-गृहस्थी के सब्जबाग दिखाए। पर नानक का दिल अंत: फकीर बन चुका था। धन-दौलत उसे व्यर्थ दिखाई देने लगी थी। गृहस्थ को वह बंधन समझने लगा था। मरदाना नानक से प्रभावित होकर स्वयं भी फकीरी के रंग में रँग गया। नानक गाते समय रबाब बजाते थे। उसका निर्माण स्वयं उन्होंने ही किया था। संसार से विमुख होकर युवक नानक गुरु नानकदेव हो गए। वे अपने मित्र मरदाना के साथ यही पद गाते नजर आते थे—

'मर रे! अहनिसि हरिगुण सारि।

गुरुमुखि जिसुद्वार मनि बसे, तिसु मेले गुरु संयोगु।'

अर्थात्! हे प्यारे राम! मेरा मन तुम में पूरी तरह रँग गया है। दुनिया से विमुख मन दिन-रात राम में ही डूबा हुआ है और वह शून्य मंडल में जाकर टिक गया है। सतगुरु ने मुझे आदिपुरुष परमेश्वर के दर्शन करा दिए हैं। अब मेरा मन उसी में स्थित हो गया है। वह कभी डाँवाँडोल नहीं हो सकता है।

गुप्ता सदन, एस.बी.के. गर्ल्स हा.से. स्कूल के पास,
मंडी अटलबंद, भरतपुर-३२१००९ (राजस्थान)
दूरभाष : ६३७८२६२३२५

बाल-गीत

किस्सा मीठी भूल का

● यश मालवीय

जाने-माने नवगीतकार। तीन नवगीत-संग्रह, एक दोहा-संग्रह, दो व्यंग्य-संग्रह, दो बालगीत-संग्रह; एक नाटक 'मैं कठपुतली अलबेली' भारत रंग महोत्सव, नई दिल्ली में मंचित। उ.प्र. हिंदी संस्थान से दो बार 'निराला सम्मान' सहित 'सर्जना सम्मान', 'उमाकांत मालवीय बाल साहित्य पुरस्कार'; मुंबई का 'मोदी कला भारती युवा कविता सम्मान'।

: एक :

प्यार दादा
पापा के भी पापा हैं ये
अपने प्यारे दादा
कविता लिख देते हैं जब भी
देखें पन्ना सादा

इस कमरे से उस कमरे तक
दौड़े चिया दुलारी
राज कर रही पूरे घर में
जैसे राजकुमारी

मीठी आम सरीखी,
मीठा तरबूजा-खरबूजा
दादी कहती है उस जैसा
कोई और न दूजा

बैठी खेल रही मस्ती में
दादाजी की दाढ़ी
आनेवाली है दिल्ली से
माँ की छुकछुक गाड़ी

मोटरसाइकिल से जाएगी
शाम ढले स्टेशन
पापा कंघी-चोटी करते
खिल-खिल करता आँगन

: दो :

हलुवे का, पंजीरी का,
जन्मदिवस है शीरीं का।

पंडितजी की चाट चखो,
देखो ठाठ कबीरी का।

आप सभी को आना है,
जश्न बड़ा दिलगीरी का।

अम्मा, अप्पा गाते हैं,
गाना मस्त फकीरी का।

बहन हीर की फ्रॉक में है,
छोटा जेब अमीरी का।

दादी, नानी की बातें,
चर्चा चला अलीरी का।

माथे पर रोली टीका,
गहरा रंग अबीरी का।

: तीन :

पहला दिन स्कूल का
खिले हुए से फूल का,
पहला दिन स्कूल का।

बस्ते में बंदर भालू
चाभी की बिल्ली चालू,
भरा टिफिन
काजू-किशमिश,
उबले से अंडे आलू

मौसम आँधी पानी का,
मिट्टी पानी धूल का।

साथ चली प्यारी नानी
दुनिया से न्यारी नानी,
दादी रह-रह चैट करे
खबरें दे सारी नानी,

कैसे दो-दो पाँच हुआ,
किस्सा मीठी भूल का।

चाचा भी तो साथ चला
टाटा करता हाथ हिला,
नन्हा सूरज चमक उठा
टीकेवाला माथ खिला,

सिर्फ पढ़ाई होनी है,
बाकी काम फिजूल का।

रोती गाती चिया चली
पापा निकले गली-गली,
मम्मी की भी आँखों से
बरस पड़ी काली बदली,

आँखों में उतरा आया,
पानी स्वीमिंग पूल का।

: चार :

अक्षरजी स्कूल चले
सारी मस्ती भूल चले,
अक्षरजी स्कूल चले।

आँखों कौंध रहे जुगनू
जैसे हो कोई जादू,
मम्मी, पापा ना भई ना
टीचर जी आजू-बाजू,

नन्हे कंधे पर बस्ता,
ज्यों गुलाब के फूल चले।

टॉफी, बिस्कुट के तारे
सजे टिफिन में हैं सारे,
होंठों वाली झप्पी पर
टपक रहे आँसू खारे,

पानी की बोतल लेकर,
ठंडे-ठंडे कूल चले।

कितने खेल खिलौने हैं
बंदर भालू बौने हैं,
भरें चौकड़ी इधर-उधर
अक्षरजी ज्यों छौने हैं,

दादी की बाँहों में ही,
धीरे-धीरे झूल चले।

: पाँच :

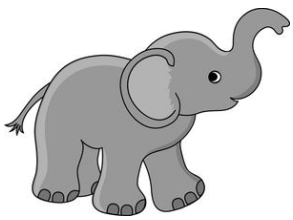

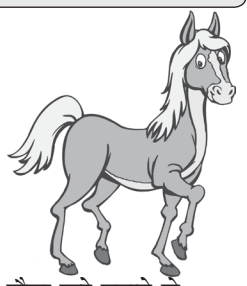

हाथी घोड़ा पालकी
चिया हुई दो साल की,
गोवा वाली लहरे हैं
सर्दी नैनीताल की,
रह-रह कविता पाठ करे
लड़की बड़ी कमाल की,
चॉकलेट को सौ नंबर
छुट्टी रोटी दाल की,
रसगुल्ला भी हार गया
चुम्मी ले ली गाल की,
अम्माँ नजर उतार रही
टेढ़ी बाँकी चाल की,

तौबा करे नहाने से
गरमी स्वेटर शॉल की,
निंदिया से पक्की खुट्टी
है जी के जंजाल की,
चमके आँखों का काजल
बिंदिया चमके भाल की,
पटना कासी कोडरमा
दिल्ली की, भोपाल की,
सपना मिट्ठू पल्लू का
बिटिया नए धमाल की,
आई इसी दिसंबर में
है पूजा के थाल की,
इक दुनिया है रंगों की
नीली पीली लाल की,
टब की मछली हर गंगे
चुहिया है चौपाल की।

सा अ

ए-१११ मेंहदौरी कॉलोनी,
इलाहाबाद-२११००४ (उ.प्र)
दूरभाष : ६३०७५५७२२९

मातृ रूपेण संस्थिता

● रश्मि कुमार

''आपको आना ही होगा मीरा दी। आप आइए और मेरे बेटे को आशीर्वाद दीजिए।''

''अरे आशीर्वाद तो हमेशा दूँगी, पर शाम में देर हो जाएगी।''

''तो क्या हुआ, एक दिन देर ही सही, आपका कौन सा छोटा बच्चा है। विजय तो है ही घर में।''

मीरा सिंह शहर के सबसे अच्छे स्कूल की वाइस प्रिंसिपल हैं। बेहद गंभीर और परिपक्व मीरा सिंह स्कूल की शायद सबसे पुरानी शिक्षिका हैं। सुरेखा ने जब उन्हें अपने बच्चे के जन्मदिन के लिए निमंत्रण दिया तो वे सोच में पड़ गईं। स्कूल खत्म होने के बाद रुकने में सबसे बड़ी असुविधा घर के काम-काज की होती है। घर में काम करनेवाली बाई का वक्त तय है। देर होने पर वह बिना काम किए लौट जाती है। उसके बाद घर पहुँचकर सुबह की बिखरी रसोई समेटना, साफ-सफाई करना और फिर रात का भोजन बनाना मीराजी के लिए खासी परेशानी का कारण बन जाता। इसलिए वे स्कूल समाप्त होने के बाद समय से घर पहुँचना चाहतीं। वैसे यह समस्या सिर्फ मीराजी की नहीं, आमतौर पर हर गृहणी की है। सुचारू रूप से घर चलाने के लिए इन बाई-महरी के साथ कितना एडजस्ट करना पड़ता है, यह सिर्फ गृहणी ही बता सकती है। अगर काम करनेवाली बाई के साथ तालमेल न बैठे तो फिर गृहणी को पीर-बावरची और भिश्ती बनते देर नहीं लगती। वैसे तो मीराजी का परिवार छोटा सा है, बस वे और उनके पति ही यहाँ रहते हैं। आजकल बेटा विजय भी आया हुआ है। दक्षिण भारत की किसी कंपनी में काम करता था, किसी वजह से कंपनी बंद हो गई और विजय जैसे कई लोगों की नौकरी चली गई। तब से करीब तीन महीने होने को आए, कई जगह कोशिश करने के बाद भी बात नहीं बन पाई। फिलहाल उसके पास कोई काम नहीं है।

मीराजी स्कूल की वाइस प्रिंसिपल होने के साथ-साथ स्कूल की अन्य सभी गतिविधियों की को-ऑर्डिनेटर भी हैं। पिछले दिनों स्कूल के वार्षिकोत्सव की तैयारी चल रही थी। करीब रोज ही उन्हें घर लौटने में देर हो जाती। विजय के आ जाने से शुरू में देर हो जाने पर वे विजय को फोन कर दिया करतीं। घर में किसी के होने से घर का काम समय से हो जाता। धीरे-धीरे उन्हें आदत पड़ गई। कई बार तो वे सीधे बाई को फोन कर देतीं, निर्देश देतीं, ''भैयाजी घर में ही हैं, रसोई साफ करके रात का भोजन बना लेना।'' उन्हें ध्यान ही नहीं रहता कि शाम को विजय को भी कहीं जाने की जरूरत या इच्छा हो सकती है। उनके पति अपने काम से रात के आठ-नौ बजे के पहले कभी घर नहीं आ पाते। विजय की नौकरी छूट जाने के बाद समय पर घर लौट आने की जिम्मेदारी से वे निश्चिंत होने लगीं। पहले स्कूल से लौटते वक्त वे साग-भाजी या घर की अन्य जरूरत का सामान खुद खरीद लातीं, अब वे अधिकतर सीधे घर चली आतीं और विजय को बाजार भेज देतीं। न चाहते हुए भी मन में आ ही जाता, ''अच्छा है सब्जी-फल लाने के बहाने थोड़ा घूम-फिर आएगा, दिन भर घर में बैठा ही तो रहता है।''

सुपरिचित कथाकार। पाँच कहानी-संग्रह, दो उपन्यास प्रकाशित। एक पुस्तक संपादित। भाऊराव देवरस संस्थान का 'युवा साहित्यकार सम्मान', उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का 'सर्जना पुरस्कार' एवं 'शिंगलू पुरस्कार' प्राप्त। दूरदर्शन एवं आकाशवाणी से रचनाओं का प्रसारण।

बारहवीं पास करने के बाद विजय इंजीनियरिंग करने दक्षिण भारत के किसी कॉलेज में चला गया, उसके बाद एम.बी.ए. करते ही उसे नौकरी मिल गई थी। करीब आठ साल से वह पढ़ाई और नौकरी की वजह से घर से बाहर था। मीराजी और उनके पति की एक नियमित दिनचर्या बन गई थी। नौकरी के साथ-साथ घर की सारी सार-सँभाल वे खुद ही करतीं। उनके पति को घर के काम-काज से कोई मतलब ही नहीं होता। विजय के आ जाने के बाद पहले तो उन्होंने हर समझदार और अंडरस्टैंडिंग माँ-बाप की तरह उसका हौसला बढ़ाया। पिता बोले, ''डोंट वरी यंगमैन, नौकरी का क्या, कहीं और मिल जाएगी, बी हॉप फुल एंड हैप्पी।'' मीरा जी बोलीं, ''और नहीं तो क्या, मेरे होनहार बेटे के लिए नौकरी की कमी है क्या, तुम उससे ज्यादा अच्छी नौकरी डिजर्व करते हो, इसलिए कंपनी बंद हो गई। जो होता है, अच्छे के लिए होता है।''

दो-चार दिन बाद पिता पहले की तरह अपने काम में व्यस्त हो गए और मीराजी स्कूल में। शुरू-शुरू में मीराजी स्कूल से दो-तीन बार फोन कर लेतीं, ''नाश्ता किया या नहीं, खाना खाया कि नहीं आदि पूछने के लिए।'' धीरे-धीरे विजय का हाल पूछने के लिए फोन करना नहीं के बराबर हो गया, अपितु काम बताने के लिए वे अधिक फोन करने लगीं। अभी कल की ही बात है, स्कूल से आते ही मीराजी ने सब्जी लाने के लिए उसे बाजार भेज दिया। विजय सब्जी लेकर आया तो खाना बनानेवाली बाई ने कहा, ''क्या दीदी, हरा धनिया खत्म हो गया क्या?''

''अरे, खत्म कैसे होगा, अभी तो सब्जी आई है, देख, हरा धनिया-मिर्च उसमें होंगे।''

''अरे नहीं है न दीदी, जल्दी ला के दो, मेरा दूसरे घर का टाईम हो रहा है।''

मीराजी ने आवाज दी, ''विजय!''

''हाँ माँ।''

''ये क्या इतनी सब्जी लाया, हरा धनिया नहीं लाया।''

''वो लिस्ट में नहीं था माँ।''

''लो और सुनो, अरे धनिया-मिर्च कोई खरीदता है भला, वह तो सब्जीवाले ऐसे ही डाल देते हैं।''

''तो डाल दिया होगा।''

''अरे नहीं डाला न, ये सब्जीवाले बिना कहे थोड़े ही यह सब डालते हैं।''

''अब मुझे क्या मालूम?''

''तो मालूम होना चाहिए न, ये सब कब सीखेगा तू?'' बेचारे इंजीनियर और एम.बी.ए. विजय को जवाब नहीं सूझा।

''अच्छा जा, लेकर तो आ।''

''कितना ले आऊँ?''

''अरे कौन सा खरीदना है तुझे, बोलना सब्जीवाले से, अभी-अभी तो सब्जी ली है, धनिया-मिर्चा क्यों नहीं डाला। वो वैसे ही दे देगा।''

विजय थोड़ी देर सिर झुकाए खड़ा रहा, बाई की आवाज उसके कानों में पड़ी, ''ई आज-कल का बच्चा सब, बाजार-हाट कुछो नहीं बूझता है।''

मीराजी चुप रहीं, पुरानी मुँह लगी बाई थी, वे विजय को चाहे डाँट लें, पर बाई से कभी कुछ नहीं कहती थीं। बेचारे विजय को दुबारा जाना पड़ा, धनिया-मिर्च लेकर आना पड़ा। मीराजी ने पूछ ही लिया, ''पैसे तो नहीं दिए उसे।'' विजय कुछ बोला नहीं, चुपचाप अपना टैबलेट खोलकर बैठ गया, आजकल सारा दिन यही करता है, ऑन-लाइन अप्लाई करने में अपने आपको व्यस्त रखता है। न चाहते हुए भी मीराजी एक लंबी साँस लेकर रह गईं।

सुरेखा के निमंत्रण को स्वीकार करते हुए उन्होंने फिर विजय को फोन किया, ''बेटे, बाई आएगी तो काम करवा लेना, तुम अपने लिए और पापा के लिए डिनर बनवा लेना, कुछ खास खाना हो तो बाजार से ले आना।

''नहीं माँ, जो बना देगी खा लूँगा।''

''ठीक है बेटे।''

फोन रखते ही साथ बैठी सहकर्मी विमलाजी बोल उठीं, ''अरे आप भाग्यशाली हैं, घर सँभालने के लिए बेटा बैठा है घर में, यहाँ तो कभी भी घर लौटो, भोजन बनाना ही पड़ता है। पार्टी क्या खाक एन्जॉय करें।''

मीराजी बोलीं, ''अरे अभी न है घर में, नौकरी मिल जाएगी तो फिर चला ही जाएगा।''

''हाँ, सो तो है ही।'' विमलाजी लंबी साँस लेकर बोलीं।

सुरेखा के घर जाने में अभी वक्त था। पार्टी शाम छह बजे की थी। अधिकतर शिक्षिकाएँ स्कूल में ही रुक गई थीं, साथ मिलकर जाने के लिए। मीराजी भी उन्हीं के साथ बैठ गईं। अब चार बजे घर जाकर छह बजे तक लौटना कठिन लगा उन्हें। विजय घर में नहीं होता तो अवश्य वे घर चली जातीं। कामकाज करवाकर आराम से सात-साढ़े सात तक आ जातीं। छह बजे पहुँचना जरूरी थोड़े ही था, कौन सी ट्रेन छूट रही थी। विजय के घर बैठे होने से उन्हें तो आराम ही हो गया, न चाहते हुए भी उनके मन में यह विचार झाँक उठा। तीन महीने पहले विजय की नौकरी छूट जाने को उन्होंने गंभीरता से नहीं लिया था, सोचा था, निजी क्षेत्र की नौकरी ऐसी ही होती है, न छूटते देर लगती है न मिलते। पर जब तीन महीने बीत गए तो उन्हें लगने लगा कि नौकरी मिलना आसान नहीं है। शुरू-शुरू में विजय उनसे हर बात कहता-सुनता था, कहाँ अप्लाई किया है, कितना पैकेज दे रहे हैं आदि। धीरे-धीरे उसने बातचीत करना कम कर दिया, मीराजी भी अधिक पूछ-ताछ नहीं करतीं। सोचती ज्यादा दखलअंदाजी आजकल के बच्चों को पसंद नहीं आती, नौकरी मिलेगी तो खुद ही बता देगा।

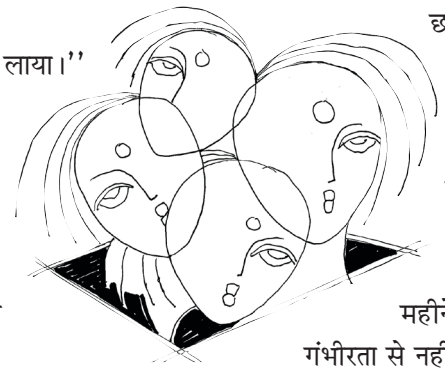

सुरेखा के घर पहुँचते-पहुँचते शाम उतर आई। घर के ड्राईंग-रूम में छोटी सी पार्टी का आयोजन था। सुरेखा का पाँच साल का बेटा खूब सुंदर से बच्चोंवाले प्रिंस सूट में घूम रहा था। कभी अपनी साइकिल चलाता, कभी सजावट के लिए लगे झालरों को खींच लेता। सुरेखा उसके पीछे-पीछे घूम रही थी, बोल उठी, ''देखो दीदी, कितना शैतान है, अभी केक भी नहीं कटा और इसने झालर तोड़ दी, बंदर कहीं का।''

''अरे, आज उसका जन्मदिन है, आज के दिन उसे मत डाँटो।'' मीराजी ने टोक दिया। सुरेखा के बच्चे को देखकर उन्हें अनायास ही विजय का बचपन याद आने लगा। छोटो सा गोल-मटोल विजय खूब चंचल, खूब नटखट सा था। कभी एक जगह टिककर नहीं बैठता, उसे सँभालने में मीराजी की नाक में दम हो आता। सुबह की चाय वे उसे स्कूल भेजने के बाद ही पी पातीं। स्कूल से आने के बाद फिर वही धमा-चौकड़ी। हर वक्त मीराजी की नजर उस पर रहती, शाम को स्कूल का

होमवर्क करवाकर रात होते-होते जब तक उसे खिला-पिलाकर सुला नहीं देतीं वे चैन की साँस नहीं ले पातीं। उनकी पूरी दिनचर्या विजय के साथ ही बँधी हुई थी। स्कूल पास करते-करते समझदार और जिम्मेदार अवश्य हो गया, पर उसकी चंचलता में कोई कमी नहीं आई। खाने-पीने को लेकर हमेशा का नकचढ़ा, ''नाश्ते में ब्रेड नहीं खाना है, आलू की टिक्की बनाओ।''

मीराजी परेशान हो जाती, उन्हें भी स्कूल के लिए निकलना होता, पर विजय की फरमाइशों का अंत नहीं होता। एक बार उनके हाथ में हेयर लाइन फैक्चर हो गया। अस्पताल में प्लास्टर बँधवाकर घर लौटने तक बड़ा गंभीर बना रहा, उसके बाद पारा सातवें आसमान पर, ''क्या माँ, अभी ही हाथ तोड़ना था तुम्हें।''

''अरे, मैंने कौन सा जान के तोड़ा, वो तो मैं फिसल गई, हाथ से रोकने की कोशिश में सारा जोर इसी पर आ गया।''

''हूँ, मार्केट में लाल-लाल गाजर, हरी-हरी मटर बिक रही है, गाजर का हलवा और मटर की कचौड़ी बनाती, सो नहीं तो अपना हाथ तोड़ बैठी।''

मीराजी के कुछ कहने से पहले ही बाई बोल उठी, ''अरे रे भइयाजी, मलकिन के हाथ टूटि गईल आ तोहरा के हलवा-पूरी खाय के हउ।''

मीराजी विजय को कुछ कहने के बजाय बाई पर झल्ला उठीं, बोली, ''अरे, उसका खाने का मन है तो बना दो न, छुट्टी खत्म हो जाएगी तो कॉलेज चला जाएगा।''

''रहने दो, मैं बाजार से खरीद के खा लूँगा। तुम आराम करो, मेरी छुट्टी में जो तुमने दिन देखकर हाथ तोड़ ही लिया तो बस अब आराम फरमाओ।'' माँ की फिक्र करने का विजय का अपना एक तरीका था।

बाई ने चैन की साँस ली पर मीराजी का मन कचोट उठा, बेचारा छुट्टियों में चार दिन के लिए आया, पर इस चोट की वजह से उसे मन का खिला-पिला नहीं पाई। वही विजय इन तीन महीनों में नाश्ते में क्या खाता-पीता है, मीराजी ने देखने की जरूरत नहीं समझी। कभी ब्रेड, कभी कॉर्नफ्लेक्स। ब्रेड भी खुद ही टोस्ट कर लेता या कभी कच्चा ही खा लेता। मीराजी को याद नहीं आया कि इन तीन महीनों में कभी पूरी, पराँठा, पोहा, उपमा या और कुछ विजय की पसंद का बनाया हो। वे और उनके पति अधिकतर फल और अंकुरित अनाज खाते, उसके साथ कभी-कभी ब्रेड ले लेते। विजय तो पहले ब्रेड छूता तक नहीं था, वही विजय इन तीन महीनों से क्या खाता है, क्या पीता है, मीराजी ने अलग से देखने की, सोचने की जरूरत नहीं समझी। रुटीन में जो नाश्ता बनता, उसे ही विजय के लिए भी लगा देतीं। विजय भी चुपचाप खा लेता। कहते हैं, बेटियाँ शादी के बाद पराई हो जाती हैं, और बेटे, वे क्या मिली हुई नौकरी छूट जाने के बाद पराए हो जाते हैं, या कर दिए जाते हैं। वह भी मीराजी जैसी पढ़ी-लिखी, समझदार और परिपक्व माँ के द्वारा। अचानक ही यह विचार मन में कौंध उठा, चौंक उठीं मीराजी, ये कर क्या रही हैं वो, अपने ही घर में। आज विजय जैसा होनहार युवक सिस्टम का मारा है, बेरोजगार है तो अपने ही घर में माँ-बाप की अवहेलना अगर न भी करें तो तटस्थता झेल रहा है, घर में काम करनेवाली बाई भी दो बातें सुना देती है।

पार्टी अपने शबाब पर थी, केक कटने के बाद कोल्डड्रिंक सर्व किया जा रहा था, मीराजी फिर सोच में पड़ गईं, कोल्ड ड्रिंक पीने के लिए हमेशा विजय को डाँटती थीं, वह मानता ही नहीं था, जिद करके उनसे पैसे लेकर खरीद लाता, इधर कई महीनों से उसने किसी चीज के लिए जिद की हो, उन्हें याद नहीं आता। हाथ में लिया हुआ शीतल पेय का वह ठंडा गिलास उन्होंने चुपचाप रख दिया, उनसे पिया नहीं गया। जिद करना तो दूर, इधर पूरे दिन वह करता क्या है, उन्होंने देखने की जरूरत नहीं समझी। उनके पास अपने ढेरो काम थे, स्कूल जाना, स्कूल की अन्य गतिविधियों में सक्रिय रहना, मोहल्ले की महिला मंडल की वे सेक्रेटरी हैं। विजय को अधिकतर अपने लैपटाप या टेबलेट पर व्यस्त देखतीं। पहले जब दो-चार दिन छुट्टी लेकर घर आता तो पूरे दिन बोलता रहता, ''माँ मेरे ऑफिस में ये, मेरे ऑफिस में वो हुआ।''

मीराजी कहती, ''क्यों रे, ऑफिस में काम तो करता है, पर घर कैसे सँभालता है?''

''मैं सब कर लेता हूँ माँ, वन बी एच के में ठाठ से रहता हूँ, होम डिलीवरी पर सब मिलता है।''

''कब तक ऐसे रहेगा, अब शादी कर ले।''

''शादी कर लूँ, अभी-अभी तो नौकरी शुरू की है, यह मुसीबत पाल लूँ।''

''मुसीबत कैसी, बहू घर आएगी तो तेरी देखभाल करेगी।''

''लो, मैं कहीं से तुझे दुबला लग रहा हूँ, बहू आके क्या करेगी।''

''देख, अब तू शादी कर ले, इससे पहले कि मैं कही लड़की देखूँ, कोई गर्लफ्रेंड हो तो बता दे।''

''ओ माई गॉड, आई डोंट हैव टाइम फॉर गर्लफ्रेंड।''

''तो ठीक है, फिर मैं ही देखती हूँ।''

''देखने की क्या जरूरत है माँ, तू है न मेरी गर्लफ्रेंड, तू ही मेरा घर सँभाल दे।''

''अरे रे नालायक! मैं तेरा घर सँभालने चलूँ, यहाँ का क्या, तुम्हारे पापा, मेरी नौकरी।''

''पापा से मैं कहनेवाला हूँ, बस बहुत हो गया, माँ को मैं अपने साथ ले जा रहा हूँ, वे अपना कोई और अरेंजमेंट कर लें।''

मीराजी को हँसी आ गई, बोलीं, ''अरे वो अपना अरेंजमेंट कर भी लें, पर मेरी नौकरी का क्या?''

''अरे, तुम्हारा बेटा कमाता है अब, नौकरी से वी.आर.एस. ले लो।''

पर इससे पहले कि उनकी नौकरी पर और बहस होती, विजय की नौकरी छूट गई। उसके बाद जो वह घर आया तो 'वी.आर.एस.' लेने की बात तो दूर उन्होंने उसकी शादी तक की चर्चा नहीं की। क्या नौकरी छूट जाने से विजय शादी करने लायक भी नहीं रहा। मुँह से न भी कहें

पर व्यवहार भी तो बोलता है। उनका वैसा हँसमुख और खिलंदड़ा बेटा धीरे-धीरे कहाँ खो गया, उन्हें पता कैसे नहीं चला।

सुरेखा उन्हें खाने के लिए बुलाने आई, ''चलिए दीदी, खाना खा लीजिए।''

''केक तो खा लिया सुरेखा, अब जाने दो।''

''नहीं दीदी, मुँह जूठा किए बिना कैसे जाने दूँ, थोड़ा सा कुछ ले लीजिए।''

''देर हो रही है।''

''अरे तो आपको कौन सी चिंता है दीदी, विजय है न घर में।''

सुरेखा ने सहज भाव से ही कहा, पर विमलाजी बोल उठीं, ''अरे बेटे का सुख उठा लीजिए मीरा दी, पार्टी एन्जॉय कीजिए। अभी बहू नहीं आई है न, इसलिए बेटा सुन लेता है।''

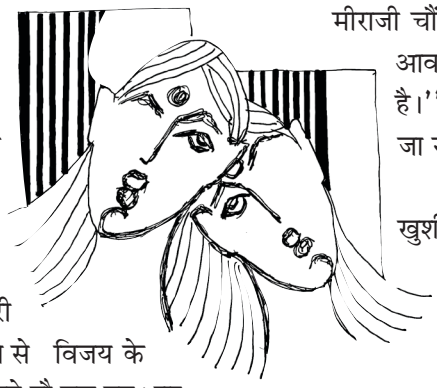

सामान्य सा मजाक था, पर मीराजी के कलेजे पर आरी चल गई। खाने की टेबल पर नजर पड़ी। छोले-भटूरे, समोसा, गाजर का हलवा, दही वड़े, रसगुल्ला आदि। सजे हुए व्यंजनों को देखकर मीराजी का मन और डूब गया। सबकुछ विजय की पसंद का। गले से कौर नहीं उतरा, किसी तरह औपचारिकता पूरी कर वे वहाँ से निकल आईं। रास्ते में मिठाई वाले से विजय के लिए रसगुल्ले पैक करा लिये। घर पहुँचते-पहुँचते नौ बज गए। घर पहुँचीं तो विजय और उसके पापा भोजन कर रहे थे। लौकी की सादी सब्जी, मूँग की दाल, सलाद, दही और रोटी। विजय के पापा का यही भोजन था, रोज बनता, लौकी, तुरई, भिंडी, परवल, पालक, करेला, मूँग की दाल आदि। वे सहज भाव से खा रहे थे, पर विजय को यह सब खाते देखकर वह असहज हो उठीं। विजय तो हरी सब्जी छूता तक नहीं था, वही विजय शांति से सिर नीचा किए चुपचाप भोजन कर रहा था। सिर्फ आज ही नहीं, पिछले तीन महीनों से वह यही सब तो खा-पी रहा था। मीराजी का ध्यान क्यों नहीं गया। पहले का समय होता तो विजय पूछ-पूछकर नाक में दम कर देता, ''पार्टी में क्या-क्या खाई माँ, मेरे लिए क्यों नहीं लाई, नहीं लाई, तो फिर मेरे लिए भी सब बनाओ, अभी बनाओ, मैं नहीं खाता तुम्हारी लौकी, भिंडी।''

आज विजय ने कोई सवाल नहीं पूछा। चुपचाप खाना खाकर अपने कमरे में सोने चला गया, रसगुल्ले का पैकेट मीराजी के हाथ में ही रह गया। रात भर मीराजी सो नहीं पाईं। सोचती रहीं, अनजाने में ही सही, उनसे बहुत लापरवाही हो गई, न कल से विजय को वक्त देंगी। सोने से पहले छोले भिगोए, भटूरे बनाने के लिए मैदा तैयार करके रखा। पति से बोलीं, ''सुनिए, कल मैं छुट्टी ले लूँगी, आप भी ले लीजिए।''

''क्यों?''

''हम लोग विजय के साथ कहीं घूम आते हैं, कई दिनों से कहीं बाहर नहीं गए।''

''ओ के, आई विल ट्राई।''

रातभर वे करवटें बदलती रहीं। प्रगतिशील और एक्टिविस्ट मानी जानेवाली मीराजी नारी-विमर्श पर बोलती हैं तो तालियाँ बटोर ले जाती हैं। नारियों के प्रति कोई अन्याय सहन नहीं करने की सीख देनेवाली मीराजी को पहली बार लगा कि वे बेटे के प्रति लापरवाही नहीं, अन्याय कर बैठी हैं। सुबह वे स्वयं चाय लेकर विजय के कमरे में गईं तो विजय कहीं जाने के लिए तैयार हो रहा था। सामान पैक करते देख पूछ बैठीं—

''कहीं जा रहे हो बेटे?''

''हाँ माँ, दस बजे की ट्रेन है।''

''ट्रेन है, जा कहाँ रहे हो?''

''वो एक जगह अप्लाई किया था, उन्होंने कॉल लेटर भेजा है, दिल्ली जा रहा हूँ।''

मीराजी चौंक उठीं, कुछ नहीं सूझा तो वहीं से पति को जोर से आवाज दी, ''सुनिए, सुन रहे हैं, विजय दिल्ली जा रहा है।'' अखबार में से बिना सिर उठाए उन्होंने कहा, ''दिल्ली जा रहा है, क्यों?''

''उसे नौकरी मिल गई है।'' मीराजी के स्वर में खुशी की खनक नहीं थी, मन-ही-मन जो अपराध-बोध था, वह स्वर में झलक उठा। पर पति सामान्य भाव से बोले, ''नौकरी मिल गई, गुड, तुमने बताया नहीं।''

''कल देर रात मेल चेक किया तो देखा।''

''अरे तो बताया क्यों नहीं?'' मीराजी कमजोर आवाज में बोल उठीं।

अनायास ही उन्हें याद आया तब विजय को पहली नौकरी मिली थी तो खुशी के मारे बावला हो गया था लड़का, लैपटॉप उठाकर उनके पास भागा हुआ आया था। बोला, ''देखो माँ मेरा अप्वाइंटमेंट लेटर। जानती हो माँ, आज मुझे लगता है यह एक लाईन इनसान की जिंदगी बदल देता है, 'प्लीज्ड टू अप्वाइंट यू', देखो, देखो, तुम भी पढ़ो माँ, बोल के पढ़ो, जब तुम्हें तुम्हारा पहला अप्वाइंटमेंट लेटर मिला था तो ऐसा ही लगा था न माँ, है न।''

विजय की पुलक भरी आवाज मीराजी को पुलकित कर गई थी, उसके सुर में सुर मिलाकर वे बोल उठी थीं, ''तू बिल्कुल सच कह रहा है रे विजय, ये एक पंक्ति सिर्फ कानों में ही नहीं, जीवन में रस घोल देती है, 'प्लीज्ड टू अप्वाईंट यू।' और दोनों माँ-बेटे की मिली-जुली हँसी से घर में जल-तरंग की ध्वनि सी गूँज उठी थी।

उसी विजय की आज दुबारा नौकरी मिलने पर ऐसी ठंडी प्रतिक्रिया, ''मैंने सोचा, आप लोग थके-हारे आए हैं, सो रहे होंगे, सुबह बता दूँगा।''

विजय से इतने शिष्टाचार की अपेक्षा नहीं थी कभी, आदत ही नहीं थी, मीराजी कुछ बोल ही नहीं पाईं। उनके पति ने नितांत व्यावहारिक सवाल किया—

''पैकेज कितना दे रहे हैं?''

''गुजारे लायक काफी है, पापा।''

''हाँ, यह भी ठीक है, थोड़ा कम भी हो तो शुरू करने में हर्ज नहीं।'' आदतानुसार विजय को पापा ने प्रैक्टिकल सलाह दे डाली।

पहले से निर्विकार विजय के चेहरे पर कोई भाव नहीं उभरा। मीराजी स्वयं अपने मन को बिखरने से बचाने के लिए मानो बोल उठीं।

''पर ट्रेन से क्यों, फ्लाइट ले लेते।''

''फ्लाइट फुल थी माँ।'' विजय नजरें झुकाए हुए बोल उठा, मीराजी समझ गईं, विजय झूठ बोल रहा है। पर उन्हें गुस्सा नहीं आया, मन में जैसे गुस्सा करने का जोर नहीं बचा। दु:ख हुआ कि विजय ने उनसे टिकट की फरमाइश नहीं की, वह तो स्वयं कहता रहता था।

''अब ये ट्रेन-वेन से तो तुम लोग चलो मत, मुझे भी ट्रेन से नहीं जाना, फ्लाइट का टिकट लो।''

''उसमें बहुत पैसा लग जाता है।''

''अरे तो पैसा रख के करोगी क्या, कौन सा छाती पर धर के ले जाओगी। अरे अपने ऊपर खर्च करना सीखो, कंजूसी कोई अच्छी बात है।''

कई बार न चाहते हुए भी मीराजी को फ्लाइट की टिकट करानी पड़ती। वही विजय आज ट्रेन से जा रहा है, शायद अपने खाते में बचे पैसे बचाने के लिए। नई जगह, नई नौकरी, पैसे की जरूरत पड़ेगी। मीराजी मानो विजय को मनाने के लिए बोल उठीं—

''तो एक-दो दिन बाद चले जाना, आज तो हम लोगों ने घूमने का प्रोग्राम बना रखा है।''

''हाँ-हाँ, तुम लोग जाओ न माँ, मैं पंद्रह मिनट में निकल रहा हूँ, तुम लोग अपना प्रोग्राम कॉन्टीन्यू करो।''

पंद्रह मिनट में निकल जाएगा, छोले-भठूरे किसे खिलाएँगी। मीराजी का कलेजा छलनी हो गया। विजय ने 'हम लोग' में स्वयं को शामिल नहीं किया, मीराजी का 'हम लोग' विजय के लिए 'तुम लोग' कब से हो गया। खुद को सँभालकर बोलीं, ''हम लोग तो तेरे साथ जाने वाले थे बेटे।''

''आएम सॉरी माँ, मुझे दिल्ली जाना होगा, रात तक पहुँच जाऊँगा, कल सुबह रिपोर्ट करना है।''

मीराजी समझ गईं, विजय नहीं रुकेगा। कोई भी कंपनी ज्वॉइनिंग के लिए सिर्फ चौबीस घंटे का समय नहीं देती, उससे अधिक देती है। ऊपर से उनके पति बोल उठे, ''जाने दो न उसे, आखिर नौकरी का सवाल है।''

''चलिए, हम लोग भी स्टेशन छोड़ने चलते हैं।''

''परेशान न हो माँ, मैंने ओला कैब बुला ली है।''

कैब पाँच मिनट में आ पहुँची। विजय अपना छोटा सा बैग लेकर निकल गया। हाँ, जाते-जाते पाँव छूना नहीं भूला। मीराजी ही आज दही-शक्कर खिलाना भूल गईं, जैसे कल रात रसगुल्ले देना भूल गई थीं। दरवाजे पर खड़ी विजय की कैब स्टार्ट हुई, फिर आँखों से ओझल हो गई। मीराजी को लगा, दिल्ली वाकई दूर है, उनका बेटा उनसे बहुत दूर चला गया है।

२/४३, विपुल खंड, गोमती नगर
लखनऊ-२२६०१० (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४१५४०८४७६

बाल-कहानी

नन्हीं चींटी

• **प्रेम किशोर 'पटाखा'**

एक थी नन्हीं चींटी। प्यारी-प्यारी स्वीटी-स्वीटी। एक दिन मैंने देखा, मेरे पास सड़क के इस पार खड़ी थी। मेरे साथ सड़क को पार करना चाहती थी।

'अरे-अरे! तुम यह क्या करती हो, दौड़ते हुए वाहनों के बीच में से सड़क पार करना चाहती हो, यहीं से पीछे लौट जाओ।'

चींटी ने मुझे देखा, 'बोली, क्या कहते हो कवि! मुझे सड़क पार करके आगे जाना है।'

'मगर कैसे? ऐसे तो तुम इतनी बड़ी लंबी-चौड़ी सड़क पार नहीं कर सकतीं।'

तभी पीछे से हवा का एक तेज झोंका आया। नन्हीं चींटी हवा के साथ उड़ गई। मैंने देखा, 'अरे किधर गई?'

मैंने सड़क पार की, देखा चींटी वहाँ मौजूद थी।

हास्य-व्यंग्य के प्रख्यात कवि-लेखक। बाल-साहित्य में भी दर्जनों पुस्तकें प्रकाशित। इन दिनों भी लेखन में सक्रिय। टी.वी. के अनेक चैनलों पर हास्य-व्यंग्य की फुलझड़ियाँ गुदगुदाती हैं।

'अरे! तुम तो सचमुच सड़क पार करके आ गईं, गजब है।'

चींटी ने कहा, 'हाँ कवि, सुनो एक बात पते की, जिनके पास अपना हौसला होता है, उनके ही पक्ष में फैसला होता है।'

नन्हीं चींटी मुझे अपना प्यारा संदेश देकर चली गई।

४३, लक्ष्मीपुरी, सराय हकीम
अलीगढ़ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९८९७०६७२७६

कहानी रुपए और सिक्कों के जन्म की

• कुलभूषण सोनी

प्यारे बच्चो! मैं तुम्हें बताना चाहूँगा कि जिन रुपयों व सिक्कों का उपयोग हम अपनी आवश्यक वस्तुओं को खरीदने में करते हैं, इसे राजस्व मुद्रा कहा जाता है। जब हम सब्जी, आटा, दूध, कपड़े या फिर कोई भी आवश्यक वस्तु किसी दुकानदार से खरीदते हैं तो हमें उसकी कीमत चुकानी पड़ती है। परंतु क्या तुमने कभी यह भी सोचा कि वस्तु की कीमत चुकानेवाली वस्तु रुपया अर्थात् मुद्रा का प्रचलन कब, किसने और कहाँ किया? तो सुनो इसकी पूरी कहानी—

बच्चो, बहुत समय पहले लोग किसी व्यक्ति से अपनी आवश्यकता की वस्तु लेने के लिए देनेवाले को अपनी कोई बहुमूल्य वस्तु, जैसे मोतियों की माला, हीरे की अँगूठी जमा कराते थे। इसके अनंतर कौड़ियाँ (समुद्र से प्राप्त धातु सीपी) का उपयोग गिनती के हिसाब से किया जाने लगा। पुरातत्त्व विशेषज्ञ एवं इतिहासकारों के अनुसार मोहनजोदड़ो में मिट्टी के सिक्के और मोहरों का उपयोग वस्तुओं के लेन-देन में किया जाता था।

बच्चो, सबसे पहले इलेक्ट्रम धातु के सिक्कों का प्रचलन लीबिया (वर्तमान टर्की) देश में वहाँ के राजा जेस ने किया। सेम जैसे आकार के इन सिक्कों में २५ प्रतिशत चाँदी तथा ७५ प्रतिशत सोना मिलाया गया था। इसके बाद तो यूनानियों ने इसी धातु के अपने सिक्के जारी कर दिए, जो एशिया और यूनान में पाँच सौ वर्षों से भी अधिक समय तक चले। इसके अनंतर इन सिक्कों को देखकर अन्य देशों ने भी अपने सिक्के जारी कर दिए, जो सोने के अलावा चाँदी और ताँबे की मिश्रित धातुओं के बनाए गए। इनके चलन से बड़े व्यापारियों को लेन-देन में आसानी हो गई। रोम में भी आकर्षक डिजाइन के सिक्के जारी किए गए, जो ५०० ई. से १४०० ई. तक चले। परंतु धीरे-धीरे उनकी यह मुद्रा बंद होती चली गई तथा १५वीं शताब्दी से कागज और विभिन्न धातुओं के रुपए व सिक्कों का प्रचलन शुरू हो गया, जो आज तक जारी है।

बच्चो, १६५४ ई. में भारत के मुगल सम्राट् शाहजहाँ ने सर्वप्रथम यहाँ सोने का सिक्का जारी किया, जो वजन में करीब २२०० ग्राम का था तथा ५.४ इंच के आकार में अत्यंत आकर्षक था। यह सिक्का काफी वजन का था, अत: इससे लेन-देन में व्यापारियों को परेशानी महसूस होती थी। अत: मुगल सम्राट् ने उनकी प्रार्थना पर कागज की मुद्रा (रुपया) चला दी। कुछ तथ्यों के अनुसार, कागज की मुद्रा का चलन ईसा से ११९ वर्ष पूर्व भी माना गया है। चीन में भी तब सातवीं सदी के दौरान वहाँ के शासक तेन्ग सम्राट् थे तथा चौदहवीं सदी में चीन के सम्राट् भिंग ने भी कागज के नोट (रुपए) जारी किए, जो १३ इंच लंबे व ९ इंच चौड़े आकार के थे। जब व्यापारियों में ऐसे नोटों की माँग बढ़ गई तो शासक ने २.१६ इंच लंबे तथा १.१८ इंच चौड़े आकार के नोट जारी कर दिए।

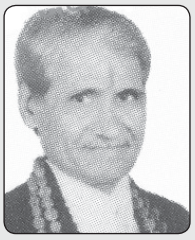

सुपरिचित कवि एवं कथावाचक। कई काव्य-संग्रह एवं देश की पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित तथा आकाशवाणी के कई केंद्रों से प्रसारित। सामाजिक-धार्मिक कई संस्थाओं के पदाधिकारी रहे। संप्रति विभिन्न कलाओं के नवांकुर तैयार करने में संलग्न।

बच्चो, १८वीं शताब्दी के बाद भारत में अनेक प्रकार के विभिन्न धातुओं के सिक्कों एवं कागज के रुपयों का प्रचलन होता रहा। इस दौरान गिन्नी, इकन्नी, दुअन्नी, चवन्नी, एक पैसा, दो पैसा, पाँच पैसा, दस पैसा, बीस पैसा आदि सिक्के जारी हो गए, जिनमें घोड़ा, शेर, नेता, सम्राट्, गवर्नर आदि के चित्र बनाए गए। ये सिक्के गोल, चौकोर, गिरारीदार, छेददार छोटे-बड़े आकारों में ताँबे, पीतल, सिल्वर, चाँदी, लोहा, इलेक्ट्रम आदि धातुओं से निर्मित थे।

बच्चो, १९४० ई. में अमेरिका में रूबिल चलाया गया। भारत में चलाए गए नोट और सिक्कों में निर्माण तिथि, जोकि बालें तथा सम्राट् अशोक का चक्र स्थापित किया गया। हर सिक्के पर उसकी कीमत भी अंकित कर दी गई। इस सरकारी मुद्रा का प्रचलन और बदलाव भी समय-समय पर होता रहता है। भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान चाँदी के रुपए के सिक्कों में जॉर्ज पंचम का चित्र टंकित किया गया। कुछ देशों में वहाँ भारतीय मुद्रा की तरह 'डालर' चलाए जाते हैं, जो हमें विदेश जाने के लिए भारतीय मुद्रा निवेश कर डॉलर उपलब्ध हो जाते हैं। इससे हमें वहाँ कोई भी वस्तु खरीदने में सुविधा हो जाती है। तो बच्चो, जान गए न रुपए और सिक्कों के प्रचलन की बात! तुममें से बहुत से बच्चे डाक टिकटों व माचिस की डिब्बियों का संग्रह करते होंगे। ठीक इसी तरह के संग्रह अगर तुम देखना चाहो तो शीघ्र ही दिल्ली संग्रहालय पहुँचो। वहाँ तुम्हें इन रुपए-सिक्कों के अलावा अनेक प्रकार के आश्चर्यजनक वस्तुओं के संग्रह देखने को मिलेंगे, जिन्हें देखते ही तुम दंग रह जाओगे। दिल्ली में तुम्हें लालकिला, जंतर-मंतर आदि भी देखने को मिलेंगे, परंतु भूल न जाना दिल्ली आना।

श्याम ज्वैलर्स, निकट गोल मार्केट
प्रताप विहार, किराड़ी, दिल्ली-११००८६
दूरभाष : ९२११६२५५६१

एक नदी जीजी के गाँव की

● नर्मदा प्रसाद सिसोदिया

झो रे-झबरे में पैर रखते ही लचकते-लरकते हैं यह घुरक की रंगधूलि है। इधर छकड़ा-छकड़ी की छील छिबैया करती चरमराती ध्वनियाँ हैं। घूघरमाल टिन्या रही है, सो सकुचाहट में फुरफुरी आ गई। हवा की सनसनी में मीठा उलाहना है, कानाफूसी करते काकड़ के पौधे गुनताड़े लगा रहे हैं। जाले में रोपे पौधे कुड़कुड़ाते हैं तो पहाड़ की कगार में अँकुराते पौधे किलकिलाते हैं। झिरपती पनाल रिस-रिसकर सरस रही है। कगरिया में केल मुछेल कुहुक रही है। गोपाल अंजुरि में जल भरकर प्यास बुझा रहे हैं। ओल में खोज उमचे हैं तो झिरप में झकोल खाते हैं। फगुनाई की टुहुक भरते खाकर, सेमल और महुआ की टहनियों से राग-अनुराग भरे डीकुर फूट रहे हैं। उमदा मधुगंध छलक रही है सो फुनगी-फुनगी पर भौंरे झूला-झूल रहे हैं। बिदकती-फुदकती चिड़िया हैं, किलोल हो रहा है। ओ हो जी! चोखे-चोखे नीलकंठ से सगुन हैं लटालूम दरश-परस हुआ है। यह सतपुड़ा के भातना का ठेठ उपरोस है। उद्‌गम की प्रकृति को निहारते हुए मेरे हिया के डुबले की ललक लुदबुद-लुदबुद है—

फुनगी-फुनगी पे डार दओ झूला सुनहरी,
कौन झुलावे झूला, झूले भँवरा-भवरी।
भओ भुनसारो के महुआ बीने पनिहारी,
छप्पर पे डार दई, भर-भर टुकनिया सारी॥

भूगोल में शंक्वाकार पहाड़ी, पठार, पहाड़, घाटी, मैदान को सम्मोच रेखाओं से प्रदर्शित करते हैं। हाँ जी! भैया! मैंने तो अपनी सजूगर आँखों से देखा है, घुरक से उतरकर गुना है कि जमीन का वह भाग, जो अत्यधिक ऊँचा हो और चट्टानों वृक्ष वनस्पतियों से आच्छादित हो, वह पहाड़ की श्रेणी में आता है। और पहाड़ का ही कुछ भाग सपाट हो तो वह हो गया पठार। हाँ, जैसे यहाँ से पूरब में पचमढ़ी का पठार। पर जहाँ धरातल बिल्कुल समतल हो, वह रहा मैदान। हम जानते हैं कि धरातल का ढाल ऊँचाई से नीचाई की तरफ होता है। होशंगाबाद जिले के दक्षिण में यह सतपुड़ा का पहाड़ है। यहाँ की जमीन का ढाल दक्षिण से उत्तर की ओर है। तो भैया! वर्षाऋतु में पानी बरसकर धरती पर आता है 'गगनाम्बु

सुपरिचित निबंध-लेखक। चार कविता-संग्रह (साक्षरता, पर्यावरण, रेडक्रॉस पर आधारित) तथा हिंदी की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में निबंध तथा यात्रा-वृत्तांत प्रकाशित। नर्मदा, इसकी सहायक नदी एवं सतपुड़ा पहाड़ का भ्रमण। कई स्थानीय संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

त्रिदोषघं निर्मलं मधुरं लघु।' ओ हो! जी! मधुर भाव की होड़ा-होड़ी से अहा! पत्थरों को चिकना-चुपड़ा करता है सिलपाटी बनती हैं। बस यहाँ कैसे ठहर पाएगा पानी। उसे जिधर ढाल मिलता जाएगा, वह 'रमता जोगी' गड़बड़ गोटी खाते-खाते किलकता बह जाएगा। तो छरहरी सी जलधाराएँ पहाड़ से लरकती हुई आ रही हैं और साफचट झलमल-झलमल रेत कनों का सहचर है। सिलबट्टे पर पिसी-पिसाई वनस्पतियों की घुट्टी भी घुली-मिली है। हाँ, रूपरंग में बेजोड़ कहें तो गुणवान भी हैं, पर भिन्न-भिन्न धाराओं के भिन्न गुण होते हुए भी अब ये धाराएँ गुनगान करती हुई खड़े ढाल से उतरती-उतरती मुड़ती-मुड़ाती एक में एक जुड़ती हैं तो सिलपाटी, जामुनकुंडी, लालपानी, गूलरपानी, छोटी कुंडी, बड़ी कुंडी नाम से जानी जाती हैं।

तो सतपुड़ा वनांचल के वनक्षेत्र में ही है भातना का पहाड़ी क्षेत्र। भला इसी सिद्ध क्षेत्र से वे धाराएँ जो अपने नाम से जानी जाती हैं, 'एभिर्दोषैरसंयुक्तं अनवद्यं च जांगलम्।' वे मनोहर जल लेकर थोड़ी गहरी होकर ठहरती, ठुमकती ठिठोली करती हुई ढाल से उछल-कूदकर अपना ठौर पाना चाहती हैं। सो एकाकार हो गई हैं तो भला! उन्हें अब कौन जानता है? पर उनके मिलने-जुड़ने समर्पण करने से जो आकार सिरजा है, वह है हथेड़ नदी। भैया! यही है हथेड़ नदी का उद्‌गम।

मोटे-मोटे चिकने तनेवाले साजड़ के वृक्ष की रेम की रेम हथेड़ के बहते पानी में ही संतरित हैं। और उपरोस में अहा! देखो भातना ने कितनी-कितनी सिलक जोड़ रखी है, तो अपने सघन वनक्षेत्र में बाँस, सागौन, महुआ, तेंदू घिरिया, अचार, हर्रा, बहेड़ा, खाकर, सेमल आदि

के कीमती वृक्ष हैं। तो झाड़-पेड़ों के पहरेदार झाड़ी-झुरमुट हैं। खाकर दहकते हुए गनगना रहे हैं। सेमल के फूल झरझरा रहे हैं, महुआ के फूल टिपटिपा रहे हैं। हाँ, मोर-तीतर एटारा होते ही तुर-तुर तुरकने लगते हैं तो पेड़ों की खोल से सुआ-तोती आहट सुनते ही सचेत करते हैं। और ये चिड़ियाँ लटकते-झूलते घोंसले से फुर्र होकर पूरे जंगल में जान डाल देती हैं, 'देखो कोई आया है।' इसी भातना क्षेत्र में बेरवाली ग्वाड़ी, नीबूवाली ग्वाड़ी, इमलीवाली ग्वाड़ी अपने अतीत की कहानी कह रही हैं। यहाँ मचान बनाई जाती रही हैं। मैदानों से बैलों को चराने दो-दो माह तक किसान यहाँ पड़ाव डालकर रहते थे। बैलों के लिए कटी-फटी टहनियों से बागड़ बनाकर कोढ़ा बनाए जाते थे। और रहने के लिए सागौन के पत्तों की छानी-छपरी बनाई जाती थी। अब तो इनके अवशेष भी बिरले ही हैं। पर पहाड़ ने अजूबे भी रचे हैं, कहते हैं—बिंडा वाली पहाड़ी जो शिखर जैसी है, वहाँ कोदू के बीज का भंडार रहता था। किसान को कोदू के बीज की जरूरत हो तो बिंडा खोलकर कोदू ले आते थे। पर फसल पकने पर उतना ही कोदू रख आते थे। किंतु अब तो कोदू की फसल ही नहीं उगाई जाती। खैर, जनश्रुति के अनुसार जैसी भी सिद्धी रही हो, पर यह तो सिद्ध है कि वृक्ष वनस्पति की जड़ें अपनी गाँठ में पानी की बचत करती रहती हैं तो धीरे-धीरे पहाड़ की बिंडा-बुखारी में पानी जोड़ती रहती हैं। तो नर्मदा की सहायिकाएँ झुरती नहीं हैं, दिन-रात झिरती रहती हैं। हाँ, पेड़ों के गोपटा पनपते रहते हैं तो ढिक को उदरने से बचाते हैं। भैया! पेड़ों ने ग्वाड़ी-ग्वाड़ी रचाए हैं तोरण द्वार, वंदनवार। भैया! सतपुड़ा की पोथी को पं. भवानी प्रसाद मिश्र ने १९३९ में अपने हिया की आँखों से बाँचा था तो सतपुड़ा का समय बोल रहा है—

सतपुड़ा के घने जंगल
नींद में डूबे हुए से ऊँघते अनमने जंगल।
झाड़ ऊँचे और नीचे, चुप खड़े हैं आँख मींचे
घास चुप है, कास चुप है, मूक शाल, पलाश चुप है॥

सतपुड़ा के भातना पहाड़ से निकलते हुए हथेड़ नदी को यहाँ खूब उछलने-कूदने क्षिप्रिकाएँ बनाने का अवसर ही अवसर मिला है तो काँटने-छाँटने की क्रियाएँ हुई हैं। कितनी ही मोड़-घोड़ बनाती हैं। पड़ोस के तिलकसेंदूर पहाड़ में बाइस मोड़ हैं। इसी मोड़-घोड़ की गड़वाट से बैलगाड़ी मुड़-मुड़कर दुड़कती रहती है। तो पहाड़ ने नदियों को मुड़ना-जुड़ना सिखाया है। पर नदियों से पहाड़ ने पौधों को पेड़ बनाना सीखा है। हाँ जी, दक्षिण के पहाड़ी गाँव पीपलिया, घोघरा, भावंदा मानाटेकर तक जाने के लिए हथेड़ नदी की राँझी गाँव तक सात धाराएँ उलाकना पड़ता है। पिताजी के साथ मानाटेकर जाते समय हथेड़ की सात धारा उलाककर मानाटेकर पहुँचे थे। हाँ, 'कोस-कोस पर बानी। चार कोस पर पानी।' हमने पैदल चलते-चलते महुआ के फूल बीननेवालों का हलकारा सुना था तो काकड़-काकड़, ग्वाड़ी, बीट के पानी को चखा था। और सब्बूलाल के यहाँ मंडुआ पे अचार-चिरौंजी महुआ के फूल को सूखते देखा था। हाँ, याद है पिताजी ने हथेड़ की साफ-सुथरी काली चट्टान पर कपड़ा बिछाकर आटा गूँथकर जगरे पर गाँकड़ सेंकी तो हथेड़ के कल-कल बहते हुए मीठे पानी में जरई में दाल खदबदा गई थी। शीतल जल ने प्यास बुझाई थी—

मुखर्या उदकं ह्द्यं पापघं सर्वकामदम्।
त्रिदोषशमनं शैत्यं स्वादु बृंहणमुत्तमम्॥

अब तक यह हथेड़ नदी चट्टानों की संगति में सकरोधा सी सकड़ी-सुकरी सी बहती आ रही थी। रेत, बालू, बजरी तो गोल पत्थरों की लुढिया को लुड़काते-डुरयाते ला रही थी। चट्टानों की पहाड़ी भूमि से बह रही थी। वह कठोर भूमि की सीमा समाप्त हो गई है। चाँदे-मुनारे भूगोल उमचाते हैं। तो कठोर चट्टानों से पानी भुरभुरी कच्ची मिट्टी की देह पर गिरता है तो इस काकड़ पर कुंड सिरजता है। इसे गोलनहोड कहते हैं लोक में जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं। कहते हैं, इस डोह के भीतर कोई ग्वालन मही कर रही है। जो भी हो, पर इतना तो है कि ऊँची चट्टानों से नीचे कुंड में पानी गिरने से दही के मथने-मथाने जैसी घुर-घुम्म की भँवर तो चलती ही है। यह भी कहा जाता है कि राज्य छिन जाने पर किसी राजा ने पारस पत्थर को इस कुंड में छोड़ दिया था। अंग्रेजों को जानकारी मिलने पर हाथी के पैर में लोहे की साँकल बाँधकर कुंड में छोड़ी थी। वापस खींचने पर एक कड़ी सोने की होकर निकली थी। किंवदंतियाँ तो मानस में अंकित हैं सो 'आपो देवता' जल कुंड गोलनडोह आदिवासियों का तीर्थस्थल है। यहाँ पितृ तर्पण करते हैं। लोकसंस्कृति पल्लवित होती है। भैया, हथेड़ नदी अपनी गति से इस कुंड से निकलकर बहते हुए कितनी ही कड़ियों को जोड़ती है तो लोक कह उठता है, 'सुन्ने की दोई बनी रे कगारिया। हीरा लाल जड़े री माई॥' हथेड़ के किनारे के उमगते झाड़-पेड़, रेत-पानी, बोली-बानी, सब सोने की कड़ियाँ ही हैं।

तो गोलनडोह के काकड़ से काबड़ लेकर लोकलय से अभिमंत्रित जल की गगरी छलकती है तो आगे हथेड़ नदी अमलघाट, पारछा, बाँदरी और मकोड़िया से बड़ी जीजी रामबाई के गाँव ढावाकलाँ से बहती है। हथेड़ नदी के किनारे बड़ी जीजी का गाँव बड़ा ढाबा (कलाँ) कितना सुहावना है। नदी किनारे मझोले कद-काठी की महुआ सागौन आचार साजड़ की राढ़ी रही है। 'परोपकाराय फलन्ति वृक्षा:'—हाँ, इसमें साँवले गदराए पके अचार तोड़ लेने की अनुभूति है आँखों में। तो झूलती टहनियों का डर है हिया में। जीजी की बाड़ी में लटालूम संतरे और नीबू के पेड़ हैं तो संतरे तोड़ने के लिए कैसे-कैसे डुरयाते फिरते थे। आम की कच्ची कैरी तोड़ने की हड़बड़ी रहती थी। रखवाले की टेर का भय था। ये डर तो छोटे ही थे। भैया, जीजी के व्याकुल होते हृदय की धड़कन का डर था। उसके पल्लू में बँधी ममता का डर था। और ये नदी की ममता है कि गाँव की गलियों में महीन रेत बिछी हुई है नरम-नरम। पैर रखते ही कोई नया एहसास भीतर-भीतर गुदगुदी भरता था। नान ढाबा खुर्द से रविवार की छुट्टी में बड़ी जीजी के घर जाते थे तो हथेड़ नदी के जड़घाट

सपड़ने जाते थे। नदी नहाने तो जीजी हमें साथ ले जाती, पर 'कुंडा में मत कूदना', 'धूम नी करना', हुलस-हुलसकर हिदायत तो गले की बेल पकड़कर कबूल कराती। काँस के कूचा से कसेंड़ी चमचमाती। पर पानी में हम लोरते-सपड़ते तो आँख गड़ाकर देखती रहती।

यह हथेड़ नदी ढाबा कलाँ गाँव के दक्षिण-पश्चिम से पूरब में सूरजमुखी बहती है, फिर उत्तर में घेरा बनाकर बहती है, भैया! माखन कछार, बड़घाट, सिरेवाले घाट, जड़ घाट, मट्टी घाट, पीपल घाट, कालीमाई घाट, झिरना घाट, गोंडी घाट, माता घाट तो लोक की हुमकती हुरक ने रचाए-बसाए हैं। कूकड़ी गाँव से छोटा सा नाला बहते हुए हथेड़ में झिर छोड़ता रहता है, इसीलिए इसे झिरना की लोक उपाधि मिली है। भैया! पहाड़, पेड़, चट्टान, नदी, नाले, ग्वाड़ी, घाट को भला! लोक ने तो बड़ी लायकी भरी उपाधियों से विभूषित किया है देखो न—भातना पहाड़, ठूँठा आम, सिलपाटी, मग्गरपाटी, गंजाल, तवा और डुलारा, सोनापानी, बदबदा, चीरा पत्थरनाला, गूलरग्वाड़ी, बड़घाट, जड़घाट आदि-आदि। भला ये उपाधियाँ किसी ग्रंथ में नहीं मिलेंगी, ये तो लोक की पोथी में रची-बसी हैं। भैया! लोक का कोई थाव नहीं है, वह तो रसनीयता से सराबोर अथाह सागर है, सागर।

यहाँ से हथेड़ बदबदा और झिरना को गोद में लेकर उत्तर में नर्मदा से मिलने के लिए उतावली हो जाती है। पर लोक तो यहाँ ठहर-ठहर जाता है, प्रात: पाँच बजे मूँझाँकले में ढाबाकलाँ की गलियों से रामफेरी निकल रही है। रामफेरी निकलते ही मजोटा उसारी दगदगा हो उठे हैं। गोधन से सार भरी है सो गाय दुहते हैं। भैया! नाड़ी जोत दमचाक हो उठे हैं—'रेवा तट पर धूम-धड़ाका, रामभजन के यही तड़ाका।' नदी के किनारे गाँव का होना कितना सुखदायी है। गाँव के पूरब में हथेड़ किनारे कालीमाई का चोतरा था। बैसाख में यहाँ मेला लगता है। कहते हैं, काली माई की मूर्ति हथेड़ नदी की बड़ीपूर जगबोला में बहकर आई थी, सो ढाबाकलाँ गाँव के पूरब के मैदान में थमथमा गई थी। उसी समय से यहाँ कालीमाई की स्थापना कर दी गई है। हाँ जी, जो हुआ, अच्छा हुआ कि अब तो नित ही यहाँ जलमंगल की कामना से लोकमंगल के अनुष्ठान रचे जाते हैं। हाँ भैया! खेत में पकी फसल खड़ी है, 'परसी थाली है।' गार पानी का भयकारा है, भाका भरभराई भैया! प्रकृति असंतुलित हुई कि अल्पवृष्टि, अतिवृष्टि और असमय वृष्टि से घबराहट होती है—घरघराती बदली है। बूढ़ी छाती फूट पड़ी, 'नातिन की लगुन पतरी छपाई है।' हाँ जी, घबराते-कँदराते घर-घर से बच्चे-बूढ़े आ गए हैं, कढाई की मनौती हो रही है, 'सत की नाव खिबडिया सतगुरु।' दीयाबाती की जोत जलाई है तो हथेड़ के जल में तैरा दी है। हे हथेड़ माता! हमारी ये विनय पतरी नर्मदा माई तक पहुँचा देना। हाँ, तो हथेड़ नदी का प्रताप है कि इस चोतरा ने अब तो बड़े देवालय का रूप ले लिया है तो देवी पूजा, कथा भागवत, शादी-ब्याह, भंडारा के आयोजन बड़े उछाव से संपन्न हो रहे हैं। तो सामूहिक सहभागिता से दु:ख-सुख में सहज ही हिया से हिया जुड़ रहे हैं।

यह जो नदी है वह मेरे हिया में, जब-तब हिलोर भरती रहती है। वह अब ढाबाखुर्द से बहती है। हाँ जी, ढाबा कलाँ और ढाबा खुर्द जुड़वाँ भाई हैं। तो हथेड़ नदी छोटे भाई से कुछ ज्यादा लाड़ लड़ाती है। इस गाँव से चिपककर बहती है। यहाँ ज्योतिषाचार्य वैद्य पं. रामस्वरूप शर्मा की प्रसिद्धि से हथेड़ गौरवान्वित है। और मुझे भी इस बात का गौरव है कि इसी गाँव की शासकीय माध्यमिक शाला में कक्षा छठवीं में अध्ययन किया है। हाँ, स्कूल की पूरी छुट्टी होते ही पाँच बजे हथेड़ किनारे खेलते थे। मेरे बड़े भाई अमरसिंह ने आम की कैरी झड़ोने के लिए हथेड़ का एक मझोला गोल पत्थर ऐसा फेंका था कि मेरी बाईं आँख के बाजू की हड्डी पर 'टक' से लगा था। भैया! हथेड़ के पत्थर का चीन्हा तो आज भी चमक उठता है। और मेरी आँखों में चमक है कि पंडितजी के घर रहते हुए स्नान तो नित भोर में ही हथेड़ नदी में ही करते थे। ठिठुरती ठंड में भी छोटी सी निरमल कुंडी में डुबकी लगाने का आनंद तो आज भी पुलकित कर रहा है। उस निरमल जल की वे बूँदें मेरी अँजुरी में अब भी ठहरी हुई हैं।

हाँ, हथेड़ नदी के जल की बूँदें, गढवाट की धूलि, और गोया के कीचड़ के छींटे मेरी देह मे रँजे-भँजे हैं, सो बरसात की आहट आने के पहले ही अपने गाँव रतवाड़ा से गाय, बैल, बछड़े, बछिया को हाँकते ले जाते थे। पालतू पशुओं को बीमारी से बचाने की परंपरा का पालन करते तो ढाबा खुर्द से नीचे हथेड़ नदी के कुंडा में गायों को पानी पिलाते, गौएँ संतृप्त हो जातीं, फिर उन्हें सपड़ाते। 'अपो देवीरूप हये यत्र गाव: पिवन्ति न:।' जल देवता की प्रार्थना के भाव उमगते तो यहीं भीलटदेव के भाई सील्या बाबा के चोंतरा की सभी पशुओं को परिक्रमा कराते। नारियल, प्रसाद चढ़ाते। धूप, दीप लगाते। अच्छी बरसात की कामना करते। दुपरिया चढ़ आती तो आम के वृक्षों की छिया में कलेउ करते। थोड़े सुस्ताते। संजा तक घर लौट आते।

दीयाबाती, दुआ-बाँदी हुई कि माँ हालचाल पूछती बात गुनती तो बोल पड़ती—'अरे बेटा सुनजो, यो काई घटी गयो, बड़ा ढाबा से बाबूलाल पावनाजी आया था के रया था,' छोटे-मोटे नालों की धार सूख गई। और ये हमारी हथेड़ माई के कहीं-कहीं कुंडा भरे थे, उनमें मरी-मरी सी धार चल रही है। माताजी उढाला है ये। सुनता से म्हारो जी बठी गयो। बात निकली तो मने मन की बात बताई, 'हमारा रतवाड़ा का पूरा बाखल का बाड़ा हुन का कुआँ सूखी गया। खूब उमस है। रोहनी बरस जाए तो अच्छो है। केय है कि खूब गरमी पड़े तो बरसात अच्छी होय।' अब तो यो उपाय है कि खूब बरसात होय तो पानी ढबरा-ढबरी में अखेटो करो। घर की मगरी से उतरती पानी की धार एक कोना में अखेटी करजो, अरू ओखे एक गढ्ढत्तू में गिराजो। देखो फिर आता साल कुआँ, नदी, नाला में झिर सरसाएगी। अरू एक बात याद आई—तीरथ जानावाला लोग हुन तो आम की गुठली गढाई खे आय है। तो बेटा, अपना खेत की पाल भनी बीज गड़ाजो, पौधा लगाजो। ये पेड़ पौधा हुन की जड़ तो पानी की भंडारिया है। बोलते-बोलते नेह छोह से छाती

भर आई तो झुरती-झुरियाँ छलक आईं—

तलाब खुदाजो
पाल बँधाजो।
जे पे आम लगाजो
आम लगाजो म्हारा भागीरथ॥

हुमकारा पूरा हुआ तो जान रहा हूँ। यह हथेड़ नदी अब तक झिरना, बदबदा, सेरूआ, डोरी, लामदा ने छोड़ी गाँव की रसना से थोड़ी-थोड़ी भली-चंगी थी। पर ये क्या हुआ जी! लठियाडोह तो इटारसी शहर की गटर का पानी और इटारसी रेलवे यार्ड का रसायन घुला पानी भला हथेड़ में ही छोड़ रहा है। इस लठियाडोह नदी के काले पानी को देखकर हर कोई दर्शक का जी मिचला उठता है। पर नदी क्या करे बेचारी! और तो और सयाले में हम हर साल देखते ही हैं कि खेतों से सिंचाई के पानी के साथ रासायनिक खाद बहकर आ रही है। भैया! नर्मदा के उत्तरतट और दक्षिणतट की सारी की सारी सहायक नदियाँ उसाँसें भर रही हैं। तो ये हथेड़ नदी घबराती-कँदराती चालीस कोस बहते हुए आवलीघाट में नर्मदा में मिल रही है। हत्या के पाप को हरनेवाली हथेड़ नदी स्वयं प्रायश्चित्त कर रही है।

पर सतपुड़ा की सिलपाटी बोलती-बतियाती है—नदियाँ तो परोपकार में लगी हुई हैं, 'परोपकारस्य बहन्ति नद्यः।' खग-मृग की प्यास बुझातीं, फुनगियों पत्ते-पतोड़ी का समेटा सकेलकर खाद बनातीं। पर खुरापातियों की चिनगारियों की लपटें वृक्ष वनस्पतियों को खाक में मिलातीं। और दोनों तटों की जंगल की बीट, गवाड़ी में कुल्हाड़ी की ठक-ठक का खटका लगा रहता। विचार करें, वृक्ष कैसे पानी जोड़ेंगे। सतपुड़ा विंध्याचल में कैसे पानी के बिंडा भराएँगे। कैसे झिरना झिरेंगे जी। कैसे पनाल सरसेंगीं नर्मदा की सहायिकाओं में। लोक कह उठता है, 'नदी तो माता लागे रे!' हाँ, नदी को माता माना है। गौरीशंकर महाराज नर्मदा परिक्रमा करते हुए नर्मदा की सहायक नदियों को भी उलाकते नहीं थे। विंध्याचल और सतपुड़ा को नर्मदा के दो किनारे माना गया है तो सहायक नदियों को भी नर्मदा स्वरूपा मानना धर्म सम्मत है। और हाँ, यह भी सत्य ही है कि सहायक नदियाँ गंजाल, हथेड़, तवा, गड़रिया, कोलार, दुधी, शक्कर हरणी, बारना, सिनौरी, हथनी, अजनाल जैसी उत्तर-दक्षिण तटों की नदियाँ नर्मदा में जल छोड़कर अपनी माई नर्मदा को सदानीरा बनाती हैं तो विचारणीय बात है कि फिर काहे का टोटा। भैया! अरदास है कि लोक में 'नर्मदे हर' की टुहुक टनकी हो जाए। तो हरक में हटूटी का समय आ गया है कि नर्मदा की नश-नाड़ी सहायक नदियों का संरक्षण अर्थात् नर्मदा का संरक्षण। भैया! कहा गया है, 'नर्मदा सलिलं स्वच्छं वृष्यं मनोहरम्' अर्ज है कि मध्य प्रदेश की जीवनरेखा की चौकसी करने की हुलस जन-जन के हिया में सरसाओ—

धरम के बीज कुछ बो लें,
प्रभु का खाता खाली है।
जगत् मालिक की बगिया है,
वही इसका माली है॥

साअ

ऑफिसर रेसीडेंसी कंचन नगर
एस.पी.एम. गेट नं.-४ के सामने
रसूलिया, होशंगाबाद (म.प्र.)
दूरभाष : ९९२६५४४१५७

पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक **साहित्य अमृत** के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 1110734393 IFSC–CBIN 0280297 में **साहित्य अमृत** के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- आपको अगर **साहित्य अमृत** का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा sahityaamritindia@gmail.com पर इ-मेल करें।

हृदय परिवर्तन

● राकेश भ्रमर

निर्मला देवी एक धार्मिक और संस्कारवान महिला थीं। नियमित रूप से पूजा-पाठ करती थीं। सारे व्रत-उपवास रखती थीं। दूसरों का छुआ नहीं खाती थीं, परंतु इतनी धर्मांधता और संस्कारों के बावजूद उनके घर में सुख-चैन नहीं था। खुद कम पढ़ी-लिखी थीं और पुरानी परिपाटी का अनुपालन करती थीं।

पति की आय बहुत सीमित थी और एकमात्र लड़का आवारा था। छोटी लड़की बी.ए. करके घर में बैठी थी। अपने संस्कारों के चलते वह बेटी से नौकरी नहीं करवाना चाहती थीं। बी.ए. भी कहाँ करवाना चाहती थीं। वह तो बेटी की जिद्द थी कि पढ़ाई करेगी। बाप उसकी पढ़ाई के पक्ष में था। उसने हिम्मत बढ़ाई तो बी.ए. कर लिया, वरना वह तो इंटर के बाद ही बेटी के हाथ पीले कर देना चाहती थीं। कर भी देतीं, परंतु दहेज आड़े आ गया। घर में कोई जमा-पूँजी नहीं थी। ऐसी कोई जायदाद भी नहीं थी, जिसे बेचकर बेटी की शादी कर सकतीं। बस कुढ़कर रह गईं। लिहाजा बैठे-ठाले बेटी का बी.ए. हो गया।

उन्हें बस एक ही बात से सुख मिलता था कि उनकी बेटी बहुत सुशील है, किसी लड़के के साथ उसका चक्कर नहीं है, वरना हाय राम! मोहल्ले की किस लड़की का किस के साथ चक्कर नहीं है। सबके लक्षण जानती हैं। मोहल्ले की महिलाएँ जब सामनेवाले पार्क में इकट्ठा होती हैं, तब मोहल्ले के एक-एक घर की पोल-पट्टी खुल जाती है। फर्क बस इतना होता है कि कोई अपने घर के बारे में नहीं बताता।

निर्मला देवी बड़ी जागरूक महिला थीं। वह पास-पड़ोस के घरों के अंदर-बाहर की पूरी खबर रखती थीं, खासकर महिलाओं और लड़कियों के अवैध संबंधों की। अपने पड़ोसी जगमोहन की बेटी स्नेहा के प्रेम-संबंध की खबर उन्होंने ही सबसे पहले मोहल्ला-सभा में महिलाओं को दी थी। स्नेहा के प्रेम-संबंधों की खबर भी उनको अचानक ही हुई थी। कुछ अनुभव और कुछ अनुमान से उन्होंने उसके प्रेम-संबंधों को एक मूर्त रूप दे दिया था।

एक दिन वह छत पर कपड़े फैलाने गई थीं। जगमोहन के घर की छत उनके घर की छत से जुड़ी हुई थी। उन्होंने देखा, स्नेहा छत के एक कोने में खड़ी धीमे स्वर में किसी से बात कर रही थी। बीच-बीच में मुसकरा भी रही थी। वह खड़ी होकर देखती रहीं। किससे बात कर रही थी, वह भी इतने स्निग्ध और प्रेमिल भाव से। जरूर उसका प्रेमी होगा। उनके मन में यह बात आई नहीं कि खबर बन गई और फिर एक औरत को चटपटी खबर का पता चले और वह आग की तरह फैलकर चर्चा न बने, ऐसा कभी हुआ है क्या?

सुपरिचित साहित्यकार। 'जंगल बबूलों के', 'हवाओं के शहर में'(गजल-संग्रह), 'उस गली में' (उपन्यास), 'अब और नहीं' (कहानी-संग्रह)। 'प्राची' मासिक पत्रिका का संपादन। पत्र-पत्रिकाओं में सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। दूरदर्शन लखनऊ तथा आकाशवाणी रामपुर, जबलपुर और मुंबई से रचनाओं का प्रसारण। संप्रति केंद्र सरकार में अधिकारी।

निर्मला देवी जितनी निष्ठा से पूजा-पाठ, व्रत-उपवास और घर के नित्य-कर्म संपादित करती थीं, उसी ईमानदारी से वह मोहल्ले की भी छोटी-बड़ी बातों की खबर रखती थीं और उनमें थोड़ा-बहुत नमक-मिर्च लगाकर अपने सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करती थीं। इसमें उनको परम सुख प्राप्त होता था। अपने घर की घटनाओं से उन्हें दुःख होता था, जैसे पति की सीमित आय और घर में संसाधनों की कमी पर अकसर पति के साथ उनकी कहा-सुनी, तकरार और खटपट होती रहती थी। बेटे की आवारगी पर थोड़ा नाराज-सी दिखती थीं, परंतु उसे कहती कुछ नहीं थीं; जबकि बेटी को देख-देखकर वह आग-बबूला होती रहती थीं। इतना सौंदर्य लेकर आई है, बी.ए. भी कर लिया। अब कहाँ से लाखों का दहेज आएगा इसकी शादी के लिए। मरी किसी अच्छे घर में पैदा हुई होती तो इसके सौंदर्य की कद्र भी होती। कोई राजकुमार मिलता। हम तो इसे किसी बूढ़े, दुहेजू या लूले-लंगड़े के साथ बाँध देंगे। कर्ज लेकर शादी तो करेंगे नहीं। अच्छे घर की लड़की है, संस्कारवान है, किसी के साथ ऐसे भाग भी तो नहीं सकती। गरीब-नीच के यहाँ ऐसा होता होगा, हम ठहरे कर्मकांडी ब्राह्मण। हमारे घरों की लड़कियाँ मरती मर जाएँगी, परंतु कुपथ पर पैर न रखेंगी। किसी के साथ मुँह काला न करेंगी।

उनको अपनी बेटी के सुशील होने पर गर्व महसूस होता है, परंतु जब घर की हालत देखती हैं, तो दिल में एक कराह-सी उठती है। कैसे करेंगे इसकी शादी! ले-देकर पति ने यह पचास गज का मकान बनवाया

है। उस पर भी अभी बैंक का कर्जा चढ़ा हुआ है। जाने कब उतरेगा! पति से लड़ाई करें भी तो कितनी! मुँहजोरी करने से न तो उनकी तनख्वाह बढ़नेवाली है, न घर में कहीं से कारू का खजाना आनेवाला है। इसी हालात में गुजारा करना है। लड़का कुछ कमाता तो बाप को सहारा मिल जाता, परंतु न तो उसने ढंग की पढ़ाई की, न कहीं काम-धंधा करता है। सुबह खाकर निकल जाता है, रात गए लौटता है। कुछ बोलता नहीं। पूछो तो कह देता है, काम की तलाश में जाता है। ऐसा कौन सा काम है, जो उसे ढूँढ़े से भी नहीं मिलता। मेहनत-मजदूरी का काम तो हर किसी को मिल जाता है। सच तो यह है, वह काम नहीं करना चाहता है। उड़ते-उड़ते खबर लगी थी, किसी लड़की के चक्कर में सारा दिन घूमता रहता है। पता नहीं, ठुल्ले लड़कों में इन लड़कियों को क्या मिलता है। दो रुपए की आइसक्रीम भी तो नहीं खिला सकते। फिर क्यों आवारा लड़कों के पीछे ये लड़कियाँ पागल हो जाती हैं।

लड़के की शादी करने की उनकी बड़ी इच्छा है। उसकी शादी में जो दहेज मिलता, उससे बेटी की शादी कर देते। परंतु ऐसे निठल्ले, नाकारा और अनपढ़ लड़के के गले में कौन समझदार आदमी अपनी बेटी का फंदा डालेगा। भूखों न मर जाएगी। अब वह जमाना नहीं रहा, जब केवल लड़के का उच्च कुल देखा जाता था। घर में चाहे चूहे भूखों मर रहे हों। लेकिन अब न आदमी की जाति काम आती है, न घर-परिवार का बड़प्पन। अब देखी जाती है, लड़के की आय और संपन्नता। उनके पास न तो घर-द्वार सही है, न घर में ऐसी संपन्नता बिखरी पड़ी है, जिसकी चमक में लड़कीवाले भागे चले आएँ और चकाचौंध होकर लड़के के ऊपर गिर पड़ें।

पति, बेटे और बेटी को देखकर वह रोज-रोज कुढ़ती थीं, परंतु मोहल्ले में बैठकर वह अपना दर्द भूल जाती थीं। घर का काम निबटाकर वह पड़ोस के घरों में चली जातीं और इधर-उधर की बातें करते हुए घर की ढँकी-छिपी बातों के बारे में जानकारी हासिल करतीं और फिर शाम को उन्हीं बातों को वह महिला-गोष्ठी में नमक-मिर्च लगाकर बयान करतीं। और आज तो उन्हें ऐसी खबर हाथ लगी थी कि वह पंख लगाकर महिला-गोष्ठी में पहुँच जाना चाहती थीं।

निर्मला देवी आज शाम को जब मोहल्ले के पार्क में महिला-मंडली में पहुँची तो उनके मुख-मंडल पर एक रहस्यमयी मुसकान तैर रही थी। उनके शरीर का अंग-अंग नाचता-सा प्रतीत हो रहा था, आँखें आश्चर्यमिश्रित खुशी से उबली पड़ रही थीं। उनके कदमों में बड़ी तेजी थी, जैसे वह महिलाओं के बीच जल्दी से पहुँचकर रहस्य से परदा उठाना चाह रही थीं।

महिला-मंडली को भी निर्मला देवी की बहुत अधीरता से प्रतीक्षा थी, क्योंकि वह एक महिला ही नहीं थी, पूरे मोहल्ले की अच्छी-बुरी खबरों का खबरिया चैनल थीं और वह हर खबर को इतनी खूबी से नमक-मिर्च लगाकर बयान करती थीं कि सुननेवाला मुँह बाए सुनता ही रहता था, कोई प्रश्न नहीं कर पाता था। उनकी अविश्वसनीय बातों में भी विश्वसनीयता का गहरा तड़का लगा होता था।

कई महिलाओं के मुँह से एक साथ निकला, ''आओ, आओ बहन! लगता है, आज कोई जोरदार खबर लेकर आई हो।''

निर्मला देवी धम से घासयुक्त जमीन पर बैठ गईं। फिर अपनी साँसों को दुरुस्त करते हुए कहा, ''खबर तो जोरदार है और ऐसी खबर है, जिसे सुनते ही तुम सबके होश उड़ जाएँगे।''

''ऐसी कौन सी खबर है? क्या किसी बकरी ने आदमी का बच्चा जन दिया या गाय ने घोड़े को पैदा किया है?''

''कुछ ऐसा ही हुआ है। ऐसी घटना शहर में हुई होगी, परंतु अपने मोहल्ले में पहली बार हुई है।'' 'क्या घटना हो गई है?' अब महिलाओं के मन सशंकित हो उठे। उनके चेहरे की रोनक जैसे तपती धूप में उड़ गई हो।

''आपको याद है, मैंने एक दिन बताया था कि हमारे पड़ोसी जगमोहन की बेटी का किसी लड़के के साथ चक्कर है।''

''हाँ, तो अब क्या हो गया? क्या लड़की घर से भाग गई?''

''हाँ, यही तो...'' निमला देवी ने हल्के से ताली बजाकर कहा।

सभी महिलाओं ने हैरान आँखों से एक-दूसरे को इस तरह देखा, जैसे उनकी अपनी लड़कियाँ घर से भाग गई हों। निर्मला देवी उनकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा कर रही थीं, परंतु उनमें से किसी ने कुछ नहीं कहा, तो निर्मला देवी ने जोश में कहा, ''अरे, मैंने इतनी जोरदार खबर सुनाई, फिर भी तुम लोगों को जिज्ञासा और आश्चर्य नहीं हुआ।''

उन्हें आश्चर्य क्या होता? आजकल लड़कियों का भागना आम बात हो गई है। वह तो पहले से ही जानती थीं कि एक दिन ऐसा ही होगा। लड़कियाँ जब चोरी-चोरी प्यार करती हैं और घरवाले उस पर प्रतिबंध लगाते हैं तो लड़कियों के पास भागने के अलावा और चारा क्या होता है? या तो वह भाग जाती हैं या आत्महत्या कर लेती हैं।

महिला मंडली में सबसे बुजुर्ग महिला थीं सावित्री देवी। वह सँभलकर बोलीं, ''निर्मला, सच्ची बात तो यह है कि महिलाएँ ऐसी बातों से बड़ी खुश होती हैं और इनमें नमक-मिर्च लगाकर हर जगह सुनाती हैं, परंतु यहाँ मौजूद सभी स्त्रियों की अपनी जवान बेटियाँ हैं। तुम्हारी बात सुनकर इनको इसलिए साँप सूँघ गया कि कहीं इनकी बेटी भी ऐसा न कर बैठे। इन सबके मन में एक डर बैठ गया है।''

''भई, कोई कुछ भी कहे, मैं तुम्हारी बेटियों की नहीं जानती कि उनका चरित्र कैसा है, परंतु मैंने अपनी बेटी को ऐसे संस्कार दिए हैं कि मजाल है किसी मर्द की तरफ नजर उठाकर देख ले। सिर झुकाकर घर से निकलती है, तो सिर झुकाए ही वापस आती है। बी.ए. कर चुकी है, परंतु मजाल है, जो किसी लड़के के साथ उसका चक्कर रहा हो। अब तो बस भगवान् से दुआ करती हूँ कि किसी तरह उसके हाथ पीले करके विदा कर दूँ।''

''कोई लड़का देखा कि नहीं!'' सावित्री देवी ने पूछा।

''अभी कहाँ, घर में कुछ देने के लिए हो तब तो लड़का देखूँ! उसके बाप की कमाई से घर ही बड़ी मुश्किल से चलता है।'' निर्मला देवी के स्वर में निराशा का भाव घर कर गया। निर्मला देवी के पति

किसी प्राइवेट फर्म में काम करते थे।

कुछ पल बाद महिलाओं में स्वाभाविक वृत्ति जाग उठी। एक ने चंचल भाव से पूछा, ''बहन, वह जगमोहन की बेटी की बात तो बताओ, कैसे भाग गई?''

निर्मला देवी के अंदर का खबरिया पत्रकार फिर जाग उठा, घर की गरीबी और बेटी की जवानी की तरफ से उनका ध्यान मोहल्ले की कर्तव्यपरायणता की ओर मुड़ गया। वह उत्साह से बोलीं, ''यह तो नहीं पता चला, कैसे और कब भागी, परंतु कल से ही उनके घर में अजीब सी खामोशी और डरावना माहौल पसरा हुआ है। सभी लोग घर के अंदर बंद हैं। बाहर भी निकलते हैं तो ऐसे जैसे चोरी करके जा रहे हों। सबसे पहले तो मुझे लगा कि घर का कोई व्यक्ति बीमार है, परंतु वह सब अंदर-बाहर आ-जा रहे हैं। बस, उनकी बेटी नहीं दिखाई दे रही है। वह छत पर घंटों खड़ी रहकर फोन पर बातें करती थी। परंतु कल सारा दिन वह छत पर नहीं आई। मैं तुरंत समझ गई, दाल में कुछ काला है।''

''कहीं, वह बीमार तो नहीं है?'' एक महिला ने कहा। वह सत्य को स्वीकार नहीं करना चाहती थी। ''अजी, काहे की बीमारी! वह बीमार होती तो उसे अस्पताल ले जाते या कोई डॉक्टर घर में आता। घर के लोग ऐसे उदास हैं, जैसे वह मर गई हो। और ऐसा तभी होता है, जब लड़की मुँह काला करके किसी के साथ भाग जाती है।''

''कुछ पता चला किसके साथ भागी है?'' एक अन्य महिला ने पूछा।

''क्या बात करती हो बहन! क्या वह बताकर भागी है, जो पता चलता। ऐसी लड़कियाँ बड़ी शातिर होती हैं। चुपके-चुपके इतना बड़ा खेल खेल जाती हैं कि भगवान् को भी विश्वास नहीं होता।'' निर्मला देवी ने विश्वासपूर्वक कहा।

''मैं तो कहती हूँ बहना। इसमें सारी गलती माँ-बाप की होती है, वह जान-बूझकर मक्खी निगलते हैं। बेटी को इतनी छूट क्यों देते हैं, जो वह बाहर लड़कों से नैन-मटक्का करती फिरे?'' एक अन्य महिला ने अपना मत दिया।

दूसरी ने उसे टोकते हुए कहा, ''ये लो, कैसी बात करती हो। आज के जमाने में क्या लड़कियों को घर में बंद करके रखेंगे। शिक्षा के लिए उनको बाहर भेजना ही पड़ेगा। झाड़ू-पोंछावाली औरतों को आज के जमाने में कोई लड़का पसंद करेगा क्या?''

''तो फिर इसका नतीजा भी भुगतने के लिए हमको तैयार रहना पड़ेगा। जवान लड़के और लड़कियाँ बिना किसी प्रतिबंध के मिलेंगे, तो उनकी यौन इच्छाएँ और कामनाओं को हवा मिलेगी ही। उनके बीच अवैध संबंध बनेंगे ही। इसको कौन रोक सकता है!''

''इनको कोई नहीं रोक सकता, पर मैं तो कहती हूँ, घर की बंद दीवारों के अंदर अवैध संबंध ज्यादा पनपते हैं, खुले में उतना अधिक नहीं। यह संबंध तो प्राचीनकाल से हमारे समाज में बनते रहे हैं। चोरी-छिपे रात के अँधेरों में न जाने कितने पापाचार होते हैं, परंतु हम सभी आँख मूँदकर अपने को पाक-साफ बताते हैं। आज जगमोहन की बेटी भाग गई, तो हम लोग उसका मजाक बनाकर मजा ले रहे हैं, परंतु हमारे घरों की कितनी लड़कियाँ गर्भपात करवाती हैं, यह क्या हमें नहीं पता।'' सावित्री देवी ने सबकी कमजोर नस दबा दी।

निर्मला देवी नाराज होकर बोलीं, ''यह आप कैसे कह सकती हैं। सबके घरों में क्या होता है, वो जानें। मैं तो अपनी बेटी की गारंटी लेती हूँ, वह बड़ी ही चरित्रवान है।''

महिलाओं ने इस बार कोई कमेंट नहीं किया। सबके दामन में दाग था, क्या कहतीं किसी को। चुपचाप चेहरा ताकती रहीं एक-दूसरे का। सावित्री देवी ने कहा, ''आज बहस में मजा नहीं आ रहा है।'' ''हाँ, चलो घर चलें।'' कई स्वर एक साथ उठे। निर्मला देवी का मन उठने का नहीं था। वह चाहती थीं, जगमोहन की बेटी को लेकर और अधिक चर्चा हो। उनको नमक-मिर्च लगाकर कुछ कहने का मौका मिले, परंतु महिलाएँ तैयार नहीं थीं; लिहाजा सभी को उठना पड़ा।

वह घर पहुँची तो उदास थीं। बेटी अपने कमरे में बंद थी। पता नहीं क्या कर रही थी। उनके मन में तरह-तरह के विचार आ रहे थे। क्या होगा उनकी बेटी का। कब तक उसे कमरे में बंद करके रखेंगी? आज जगमोहन की बेटी भागी है, तो उन्हें मजा आ रहा है। कल को उनकी बेटी भाग गई तो''? लेकिन कैसे भागेगी? वह तो उसे बाहर जाने का भी मौका नहीं देतीं। सारा दिन घर में बंद रहती है, परंतु क्या किसी जीव को कैद में रखकर उसकी इच्छाओं और कामनाओं को मारा जा सकता है? उनकी बेटी तो भरपूर जवान है। क्या उसकी भावनाएँ नहीं मचलती होंगी?

वह खुद तो अठारह साल की उमर में ब्याहकर ससुराल आ गई थीं। उनकी बेटी २५ साल की होने जा रही है। अब तक उसके दामन को दागदार होने से बचाए रखा है। बचपन से उसे ऐसे संस्कार और शिक्षा दी कि उसके कदम कभी गलत मार्ग पर न पड़े। वह भी सदा सुमार्ग पर चलती। उनका कहना माना, परंतु कब तक मानेगी। जमाने की हवा बेलगाम हो गई है। जवान होने के पहले ही लड़के-लड़कियों पर प्यार का नशा चढ़ जाता है और वह इतने मदमस्त हो जाते हैं कि कोई भी गलत कदम उठा लेते हैं। घर-परिवार की मर्यादा का उन्हें कोई खयाल नहीं होता। स्नेहा ने यही तो किया''कुछ होने के पहले ही बेटी के हाथ पीले करने होंगे।

उस दिन उन्होंने पति से बहुत खुलकर इस प्रसंग पर चर्चा की, बोलीं, ''अब और कब तक बेटी को घर में बिठाकर रखेंगे? कहीं से कुछ पैसे का प्रबंध करो। ऑफिस से उधार लो, बैंक से कर्जा लो, चाहे कुछ भी करो। परंतु अब उसके हाथ पीले करने ही पड़ेंगे। देखते नहीं, आजकल लड़कियाँ क्या कर रही हैं। पता है आपको, जगमोहन की बेटी

भाग गई। क्या तुम चाहते हो, मेरी बेटी भी नाक कटाए। कब तक मैं उसे घर में बंद करके रखूँगी। वह कुढ़-कुढ़कर हिस्टीरिया की मरीज बन जाएगी।''

हरिनारायण कुछ देर तक सोचते रहे, फिर शांतभाव से बोले, ''कर्जा लेना तो बहुत मुश्किल है। गाँव की दो बीघा जमीन है, उसी को बेचना पड़ेगा। परंतु यह इतनी जल्दी संभव नहीं है। मैंने तुमसे कितनी बार कहा, परंतु तुम मेरी बात नहीं मानती। बेटी को बाहर निकलने दो। किसी स्कूल में मास्टरी ही कर ले। दो पैसे हाथ में आएँगे, बचत होगी और उसका मन भी लगा रहेगा। शादी एक दो-साल बाद कर देंगे। तब तक वह भी दो पैसे जमा कर लेगी।''

''तुमको तो जैसे जमाने के बारे में कुछ पता नहीं है। घर से निकली नहीं कि पैर फिसले नहीं। कितनी भी सुशील और सुसंस्कृत लड़की हो, उसको बहलाने-फुसलाने के लिए लड़के हर गली-मोहल्ले में तैयार खड़े मिलते हैं और कौन ऐसी लड़की है, जिसके पैर बाहर निकलने पर नहीं फिसलते।''

''तुम पता नहीं कौन से जमाने की बात कर रही हो। आज जमाना बदल गया है। सारी लड़कियाँ बाहर निकल रही हैं। सभी तो ऐसी नहीं हैं। तुमको अपनी बेटी पर भरोसा करना होगा।''

''अभी तो नहीं कर सकती। जब उसके हाथ पीले करके उसकी ससुराल विदा कर दूँगी, तभी उस पर विश्वास करूँगी। उसका पति उसे बाहर भेजे या घर में बंद करके रखे, उसकी मर्जी।''

हरिनारायण की पत्नी के आगे ज्यादा चलती नहीं थी, इसलिए वे उससे ज्यादा बहस नहीं करते थे। इस बार भी चुप हो गए, ''जो तुम्हारी इच्छा हो, करो।''

निर्मला देवी खीझकर गुस्से में बोलीं, ''तो क्या मैं उसका गला दबाकर मार डालूँ। घर में भी रहते हुए लड़कियाँ बिगड़ जाती हैं। अब उसे ज्यादा दिन घर में बिठाकर रखना ठीक नहीं होगा।'' आज पता नहीं उनके मन में ऐसे विचार क्यों आ रहे थे। क्या जगमोहन की बेटी के भागने से वह डर गई हैं। उन्हें लगने लगा है कि लड़कियों पर चाहे जितने प्रतिबंध लगा लो, चाहे जितना घर में बंद करके रख लो, वह किसी-न-किसी प्रकार से टोले-मोहल्ले के लड़कों से नैन-मटक्का कर ही लेती हैं। उनको किसी से नजर मिलाने से कौन रोक सकता है?

क्या पता उनकी बेटी का भी किसी के साथ चक्कर हो। उस पर चौबीस घंटे तो नजर रखी नहीं जा सकती है। वह भी तो घर से कभी-न-कभी बाहर निकलती ही है। वह खुद उसे घर में छोड़कर बाहर चली जाती हैं और घंटों बाद लौटकर आती हैं। सोचती हैं, लड़की घर में सुरक्षित है। क्या पता, उसी दौरान वह मोहल्ले के किसी छोकरे को घर में बुला लेती हो और उसके साथ मौज-मस्ती करती हो। उन्हें कैसे पता चलेगा? सोचकर उनका दिमाग सनसना गया। वह बेचैन हो गईं।

पति के लाख कहने के बावजूद वह बेटी को बाहर नौकरी के लिए भेजने को तैयार नहीं हुईं। वह जल्द-से-जल्द उसकी शादी कर देना चाहती थीं। इसके लिए वह रोज पति पर दबाव बनाती रहीं। हारकर पति एक दिन गाँव गए जमीन का सौदा करने के लिए, परंतु इतनी जल्दी उसका भी सौदा कहाँ से होता। वह गाँव के दो-चार लोगों से बात करके वापस आ गए। खरीददार मिलेगा तो बात बनेगी।

इसी तरह दो महीने और बीत गए। अब वह बेटी को लेकर इतनी चिंतित रहने लगी थीं कि मोहल्ले की महिला गोष्ठी में भी भाग नहीं लेती थीं। घर में रहतीं, ताकि बेटी पर नजर रख सकें। वह साफ देख रही थीं कि घर में बंद रहने से उनकी बेटी उदास और गुमसुम सी रहती है। ज्यादा किसी से बात नहीं करती है। उसके चेहरे की प्रफुल्लता और सौंदर्य पर जैसे ग्रहण लगता जा रहा है। बीमार सी दिखती है। भरी जवानी में वह बुढ़ापे की ओर कदम बढ़ाती सी लग रही थी। सचमुच, वह घर में बैठे-बैठे ही बुढ़ा जाएगी।

इसी बीच एक दिन उन्होंने देखा कि जगमोहन के घर में बड़ी चहल-पहल थी। किसी त्योहार जैसा माहौल था। बहुत सारे लोग आ-जा रहे थे। निर्मला देवी के अंदर का खबरिया जासूस जाग उठा। वह तुरंत बाहर निकलीं और किसी बहाने से जगमोहन के घर में जा बैठीं। वहाँ जाकर उन्हें जो पता चला, उससे उनके होश ही उड़ गए। ज्यादा देर तक उनसे बैठा न रहा गया। जगमोहन की बीवी ने उन्हें मिठाई दी, वह उनसे खाई न गई। हाथ में ही रखे-रखे कुछ देर तक बैठी अनमने ढंग से बातें करती रहीं और फिर घर लौट आईं।

जगमोहन की बेटी लौट आई थी। उसने अपने प्रेमी के साथ कोर्ट में शादी कर ली थी और आज अपने पति के साथ मायके आई थी। उसका पति किसी बड़ी कंपनी में मैनेजर है। स्नेहा के घरवालों ने उसके पति को स्वीकार कर लिया था। इस बात से निर्मला देवी को बड़ा धक्का लगा। एक तो लड़की घर से भाग गई। फिर माँ-बाप की मर्जी के बिना उसने अपने प्रेमी से शादी भी कर ली और माँ-बाप ने खुशी-खुशी उन दोनों के रिश्ते को मंजूर भी कर लिया था। क्या ऐसे रिश्तों को मंजूर करना इतना आसान होता है? जगमोहन और उसकी पत्नी इतने दरियादिल हैं?

निर्मला देवी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। वह उलझकर रह गई थीं। यह आधुनिक जमाना है और आजकल ऐसा ही हो रहा है। माँ-बाप को अपने बच्चों की बात माननी ही पड़ती है, वरना वह ऐसा कदम उठा लेते हैं, जो कष्टदाई ही नहीं, दुःखदाई भी होता है।

सारी रात निर्मला देवी को नींद नहीं आई। वह दुनिया में होनेवाली अनोखी बातों के बारे में विचार करती रहीं। दूसरी सुबह उठीं तो वह थोड़ी खुश दिख रही थीं, जैसे कोई खजाना उनके हाथ में लग गया था। वह हाथ-मुँह धोकर तैयार हुईं और मन में एक ठोस निर्णय लेकर बेटी के कमरे में पहुँचीं।

उनकी बेटी अभी तक लेटी हुई थी, जैसे कई दिनों से बीमार हो। अकसर वह लेटी ही रहती थी। घर में कोई बहुत ज्यादा काम नहीं होता था। जो थोड़ा बहुत होता था, उसे माँ ही कर लेती थी। वह करे तो क्या करे? माँ की इजाजत के बिना वह पास-पड़ोस में भी नहीं जा सकती थी। बस कुछ पुरानी किताबों को पढ़ते हुए समय पास करती

थी। कुछ देर टी.वी. देख लिया, बस इतना ही। घर में और कोई था भी नहीं, जिससे बात करके समय काटती। माँ से उसका संवाद बहुत कम होता था।

बेटी उन्हें देखकर भी लेटी रही, परंतु आज माँ उसके ऊपर नाराज नहीं हुई। उन्होंने खुशी-खुशी कहा, ''बेटा उठो, मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूँ।''

बेटी ने 'क्या' के भाव से उन्हें देखा। उसके चेहरे पर कोई अनोखी चमक नहीं जागी। वह जानती थी, माँ क्या कहेंगी? उसे कोसने के सिवा माँ को आता ही क्या है? बेटी को अगर इसी तरह पालना-पोसना था, तो उसे जन्म ही क्यों दिया? उसकी समझ में आज तक नहीं आया था···माँ-बाप जब अपने बच्चों को ढंग से पाल-पोस नहीं सकते, उन्हें उचित शिक्षा नहीं दे सकते और उन्हें अपने पैरों पर खड़े होने की स्वतंत्रता नहीं दे सकते, तो उन्हें पैदा ही क्यों करते हैं?

निर्मला देवी ने उत्साह से कहा, ''बेटी, तुमको हमारे घर के हालात पता हैं। इन हालात में हम कितनी मुश्किल से गुजारा कर रहे हैं। तुम्हारा भाई आवारा है, बाप की कमाई से तुम्हारे लिए दहेज जुटा नहीं पा रहे हैं। बताओ, हम और कितने दिन बिना शादी के तुम्हें घर में बिठाकर रख सकते हैं। बदनामी होती है। घर में पड़े-पड़े तुम भी कुंठित होती रहती हो। इससे तुम बीमार पड़ जाओगी। देखो न, कैसी तो पीली-सी हो गई हो। चेहरे की रौनक खत्म होती जा रही है। ये अच्छे लक्षण नहीं हैं। बेटी, तुम्हारी इच्छा थी न कि पढ़-लिखकर तुम कोई नौकरी करो। तो आज मैं तुम्हें इजाजत देती हूँ कि तुम इस घर की दमघोंटू हवा से बाहर निकलो और बाहर जाकर खुली हवा में साँस लो।''

सुनिधि हकबकाकर उठकर बैठ गई, जैसे कोई बुरा सपना देख रही हो। उसने फटी आँखों से माँ को देखा। माँ का मुसकराता हुआ चेहरा उसने न जाने कितने वर्षों बाद देखा था। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। यह सच नहीं था। उसे लगा, वह सपना देख रही है। माँ का ऐसा बदला हुआ रूप उसके लिए अभूतपूर्व था। क्या वह अपनी माँ को नहीं जानती? बात-बात पर टोकना, डाँटना और फटकारना। न जाने कितनी वर्जनाएँ उसके ऊपर लगाई जाती रहीं। यह नहीं करना है, ऐसे नहीं करना। यहाँ नहीं जाना है, वहाँ नहीं बैठना है। इससे बात नहीं करनी है, उसकी तरफ निगाह उठाकर भी नहीं देखना है। माँ की नसीहतें सुन-सुनकर वह तंग आ गई थी। इतनी बेड़ियाँ तो कैदियों के पैरों में भी नहीं डाली जाती हैं, जितनी उसके पैरों में पड़ी थीं। खुली हवा में साँस कैसे ली जाती है, यह उसने कभी नहीं जाना। स्कूल-कॉलेज भी जाती थी, तो उसे ऐसा लगता था, जैसे माँ उसके पीछे-पीछे आ रही हों और डर के मारे उसने कभी वैसा कुछ नहीं किया, जो माँ की निगाहों में वर्जित था या अमर्यादित।

फिर आज···उसने अपनी आँखों पर हाथ रखकर जोर से मींचा और फिर आँखें खोलीं। थोड़ी देर तक धुँधलापन छाया रहा, परंतु जैसे ही आँखें साफ हुईं, सामने उसकी माँ का मुसकराता हुआ चेहरा था। उसका दिल धड़क उठा। यह सपना नहीं है।

''मैं समझ सकती हूँ कि तू इतनी हैरानी से क्यों मुझे देख रही है। तुझे विश्वास नहीं हो रहा है। कैसे हो? मैंने एक माँ की तरह तेरे साथ कभी व्यवहार नहीं किया। इस तरह का व्यवहार तो सौतेली माँ भी नहीं करती। दरअसल मैं जमाने के साथ कदम-से-कदम मिलाकर नहीं चल सकी। हर बात को हमेशा दकियानूसी निगाहों से देखा और परखा, परंतु अब मेरी आँखें खुल गई हैं।''

सुनिधि चारपाई से उठकर खड़ी हो गई। निर्मला देवी ने उसका हाथ पकड़कर फिर से अपनी बगल में बिठा लिया और बोलीं, ''तुझे इतना हैरान-परेशान होने की जरूरत नहीं है। तू ऐसा कर, तैयार हो जा और आज से अपने लिए किसी नौकरी की तलाश आरंभ कर दे।''

सुनिधि की समझ में नहीं आ रहा था, यह कैसा चमत्कार हो रहा था। कैसी अबूझ पहेली आज हल हो रही थी। परंतु पहेली के खुलने के बाद भी वह उसके परिणाम से इतना हतप्रभ थी कि एक बेवकूफ की तरह बस देखे ही जा रही थी। माँ उससे क्या चाहती हैं, और उसे क्या करना है, वह समझ नहीं पा रही थी या समझते हुए भी उसे सबकुछ एक सपने की तरह लग रहा था।

उसने माँ की तरफ देखा, जैसे एक निरीह पंछी बाज के पंजों से छूटने के बाद देखता है। उसे विश्वास नहीं होता है कि वह कैद से छूट गया है और वह उड़ भी सकता है। उड़ना चाहकर भी वह नहीं उड़ता, क्योंकि तब भी वह यही सोचता है कि बाज दुबारा उसे अपने पंजों में दबाकर लहूलुहान कर देगा।

माँ कुछ देर तक चुप रहीं और फिर बोलीं, ''बेटी, मुझे अक्ल आई है, परंतु बहुत देर से आई है। अपनी बेवकूफी में मैंने तुझे बहुत कष्ट दिए, बंदी जैसा बनाकर रख दिया। अब मैं नए जमाने की हवा से काफी हद तक परिचित हो गई हूँ। तू भी घर के हालात जानती ही है। बेटा कुछ नहीं कर रहा, पिता की आय सीमित है। अब तुझे ही कुछ करना होगा। आज मैं तेरे ऊपर लगाए गए सारे बंधन तोड़ रही हूँ। तू बाहर निकल, नौकरी कर और अपने जीवन को सफल बना।''

निर्मला देवी कुछ देर के लिए रुकीं, जैसे साँसों को समेट रही हों या अपने हृदय को कड़ा कर रही थीं। फिर बेटी के सिर पर हाथ फेरते हुए बोलीं, ''बेटी, तेरी उम्र शादी लायक हो गई है, परंतु हम इस लायक नहीं हैं कि कोई लायक लड़का देखकर उसके साथ तेरी शादी कर सकें। तेरे लिए दहेज जुटाते-जुटाते हम बूढ़े हो जाएँगे, तब भी तेरी शादी नहीं कर पाएँगे। बिना दहेज के कोई लड़का तुझे ब्याहने के लिए तैयार होगा या नहीं, इसका पता नहीं। इसलिए मैं तुझसे कहती हूँ, बाहर जाकर अगर तुझे कोई लड़का पसंद आ जाए और तुझे उससे प्यार हो जाए या कोई लड़का तुझको पसंद करने लगे, तो नि:संकोच तुम दोनों प्यार कर लेना। फिर मुझे बताना, मैं खुशी-खुशी तुम दोनों की शादी कर दूँगी।''

सुनिधि को लगा, वह बेहोश हो जाएगी।

७, श्री होम्स, कंचन विहार, बचपन स्कूल के पास
लामती, विजय नगर, जबलपुर-४८२००२ (म.प्र.)
दूरभाष : ९९६८०२०९३०

शोलापुर

मूल : **बन्यामिन**

अनुवाद : **पी.के. राधामणी**

श्री बन्यामिन (बेन्नी डेनियल) मलयालम कथा-साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर हैं। प्रवासी जीवन की विषमताओं को अंकित करनेवाला उपन्यास 'आडु जीवितम्' (बकरी का जीवन) के लिए केरल साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला। अबूदाबी शक्ति अवार्ड, के.ए. कोट्टुंगल्लूर अवार्ड आदि कई पुरस्कार प्राप्त। कई उपन्यास और कहानियाँ प्रकाशित। यहाँ उनकी एक कहानी 'शोलापुर' का हिंदी रूपांतरण प्रकाशित कर रहे हैं।

तड़के उठकर दरवाजे पर ताला लगाने के बाद वे घर से निकले। सात बजने से पहले सड़क तक पहुँच जाएँ तो शोलापुर जानेवाली पहली बस मिल सकती है। मध्याह्न के पहले पुणे पहुँचने का इरादा था। गोपाल ने ऐसा ही कहा है। एहतियात के तौर पर शोभी ने रोटियाँ और सब्जी पोटली में बाँधकर साथ रख ली थीं। वही शोभी, जिसे चंदामाई 'पीठ पर धूप की गरमी पड़ने पर भी नहीं उठनेवाली' को फटकार सुनाती थी, आज खाना बनाने के लिए सुबह चार बजे उठी थी। उसकी थकान या दबावों की बातें चंदामाई के पल्ले नहीं पड़तीं। मुँह फुलाकर हरामखोर आदि गालियाँ देकर फटकार लगाती रहती है।

'मोबाइल ले लिया न?' खेत के बीच सूखे नाल को पार करते हुए, अब तक कई दफा दोहरा चुका वह सवाल एक बार फिर शोभी ने हनुमंता से पूछा तो जेब टटोलकर उसने हामी भरी और शोभी आश्वस्त हो गई।

'जरा होशियार रहना, बस में बारशी के पॉकेटमार होंगे। पता है न, कीमती चीज है।' शोभी बोली।

'पता है, मैं नहीं सोऊँगा। सावधान रहूँगा।' जेब को कसकर पकड़ते हुए हनुमंता ने वादा किया।

योगनिद्रा में उलटे लटकनेवाले चमगादड़ों से भरे पेड़ के नीचे थोड़ी देर उन्हें इंतजार करना पड़ा। इस बीच राम बापू के ढाबे में चाय पीनेवालों की भीड़ लग चुकी थी। दोनों ने मन-ही-मन दुआ माँगी। खुदा करे, उनमें अपनी जान-पहचान वाला कोई न हो। लेकिन तब तक तोते से पत्ता निकलवाकर भविष्य बतानेवाला लाखू बापा उन्हें देख चुका था।

'सुबह-सुबह कहाँ चले मियाँ-बीबी दोनों?' उसने पूछा।

'शोलापुर, कुछ कपड़े खरीदने हैं।' हनुमंता की जबान से यही झूठ निकला।

'दुर्दिन में कपड़े? क्या तेरी लॉटरी लगी है? या किसी का काला धन हाथ लगा है?'

हनुमंता को इस सवाल का जवाब नहीं देना पड़ा। तभी धूल उड़ाती हुई बस आ पहुँची और एक-दूसरे को उस दृश्य से ओझल कर दिया।

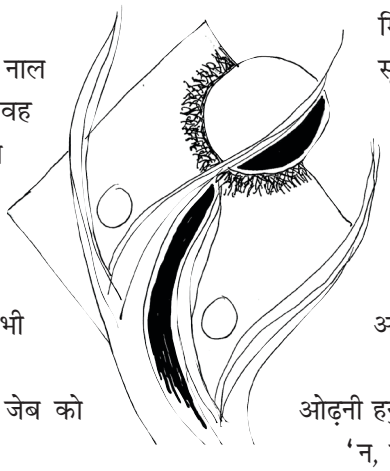

बस में ज्यादा भीड़ नहीं थी। बैठने के लिए जगह मिली। हनुमंता बाहर के दृश्यों को देखकर बैठा रहा। सूखे खेतों के ऊपर भय की चादर की तरह कुहरा छा गया था। पहले इन खेतों में गेहूँ और दाल की खूब खेती होती थी। इन्हीं खेतों में हनुमंता और शोभी साल भर काम करती थी। जो उनकी हँसी-खुशी और हर्ष का जरिया था। अपनी खुशियों का गला दबा देनेवाले अकाल का दृश्य देखकर हनुमंता ने आह भर ली।

'ठीक से ओढ़ ले, कहीं ठंड न लगे।' शोभी ने अपनी ओढ़नी हनुमंता को दी।

'न, मैंने अपने कान ढक लिए हैं।' हनुमंता ने सिरबंद को कानों के ऊपर खींच लिया।

बस ने रफ्तार पकड़ी और हवा तेज हो गई तो हनुमंता ने मोबाइल को छाती से लगाकर यों पकड़ा, मानो कागज के टुकड़े की तरह वह उड़ जाएगा।

'वह ऑफ है न?' शोभी ने फिर एक बार सवाल किया। वह

डरती थी कि कहीं चार्ज खत्म न हो जाए। उनके घर में बिजली नहीं थी। पास-पड़ोस में भी नहीं। गाँव की मंडी के पास प्रह्लाद के बारबर शॉप में ले जाकर चार्ज करना पड़ता था और इसके लिए वह दस रुपए चार्ज करता था। तकलीफ की उस दूरी का दाम शोभी को अच्छी तरह मालूम है।

पिछली बार गाँव आया तो गोपाल ने वह फोन उन्हें दिया था।

'पैसा किश्तों में देना। तुम्हारे जैसे लोगों को नए युग की ओर कदम रखते देखकर लगता है डिजिटल इंडियावाला सपना पूरे होने में अब देर नहीं लगेगी।' उसने कहा था।

'लेकिन इसमें फोटो खींचना मुझे आता नहीं है, गोपालजी।' हनुमंता ने अपनी विवशता जताई थी।

'हनुमंता, तू साइकिल चलाना जानता है, ट्रैक्टर चलाना जानता है, खेत में पानी भरनेवाला मोटर पंप चलाना जानता है, फिर मोबाइल क्या चीज है? दो घंटे में मैं तुझे इसका मास्टर बनाता हूँ, देख लेना।' उसने कहा था। मोबाइल का तकनीक हनुमंता ने बड़ी आसानी से सीख लिया। वही मोबाइल आज पंख न उगे चकुले की तरह उसकी जेब में दुबका पड़ा है।

शोलापुर में उन्हें देर तक इंतजार करना पड़ा। पुणे को जानेवाली जितनी बसें आईं, सबकी सब ज्यादा किरायावाली ए.सी. बसें थीं। टिकट का दाम सुनकर हनुमंता ने सोचा कि अकेले आना अच्छा था।

'वह कैसे? पाटील ने मुझे भी देखने की बात की है न? जाने दो। लौटते वक्त हमारी जेब मोटी होगी और हम ए.सी. बस में आराम से लौटेंगे।' शोभी ने हनुमंता को सांत्वना दी।

आखिर उन्हें कम दामवाली साधारण बस मिली, जो धीमी चाल से जाती थी और हर स्टॉप पर रुकती थी।

'क्या पता, जानी ने कुछ खाया होगा या नहीं!' बस में बैठकर शोभी ने आशंका प्रकट की।

'माँ सिर्फ तुम पर गुस्सा करती है। बिटिया को वह चाहती है।' हनुमंता ने हाथ पकड़कर शोभी को राहत दिलाई।

बिटिया को सासू माँ के पास छोड़ आना शोभी को पसंद नहीं था। लेकिन और कोई चारा भी नहीं था। क्या पता, आज लौट पाएँगे या नहीं? काम हो जाने पर भी देर रात होने का डर है। इसलिए बेटी को चार कदम पर रहती माँ के पास छोड़ आने को हनुमंता विवश हो गया था। जिस दिन हनुमंता शोभी को घर ले आया, उसी दिन से माँ नाराज है। बीज खरीदने और फसल बेचने के लिए हनुमंता चपल गाँव की मंडी में जाता था। शोभी की माँ उस मंडी में झाड़ू-बुहार का काम करती थी। मंडी साफ करने के लिए माँ के साथ शोभी भी आया करती थी। हनुमंता ने वहीं शोभी को पसंद कर लिया था। माँ के विचार में बुहारू लोग 'जाति में अपने नीचे' हैं। माँ उन्हें 'आवारा कुत्तों की जाति' कहती है।

'ऐसा कौन है माँ, जो हमसे भी नीचे है?' हनुमंता पूछता था।

'अरे अक्ल के अंधे, हमारी जाति की पंद्रह उपजातियाँ हैं। उनमें वे लोग सबसे निचले तबके के हैं। उनसे शादी करके हमारी क्या इज्जत रह जाएगी?' चंदामाई रो पड़ी थी, पर हनुमंता ने नहीं माना। उसने शोभी से शादी की, अपना अलग घर बसाया, दो बच्चे हुए, कई साल बीते, मगर चंदामाई का गुस्सा नहीं उतरा। उसी माँ के पास बेटी को छोड़ आए हैं। शोभी इसी वजह से परेशान हो रही है।

'अरे हनुमंता, बेटी को दादी माँ के पास क्यों ले जाता रे? कहीं जोरू के साथ आत्महत्या करने का इरादा तो नहीं?' गली में बच्चों के साथ खेलते मिस्त्री भींशा ने पूछा था।

'अभी नहीं भींशा। समय आने पर बताऊँगा। टी.वी. वालों को जरूर ले आना।' शोभी ने ईंट का जवाब पत्थर से दिया।

'अकाल यों जारी रहा तो सबका समय जल्दी आएगा।' भींशा ने स्वागत किया।

निश्चित समय पर वे पुणे नहीं पहुँच सके। बस अड्डे पर उतरने के बाद मोबाइल ऑन करके हनुमंता ने गोपाल को बुलाया। गोपाल ने उन्हें जी भर गाली दी।

'क्या तू सोचता है कि पाटील साब दो छछूँदरों के लिए पूरा दिन इंतजार करेगा? चंदामाई तुम्हें यों ही गाली नहीं देती। इसीलिए तुम लोग कभी जीवन में आगे नहीं बढ़ सकते।' गोपाल ने जो जी में आया, उसे सुनाया और उसने सब चुपचाप सुन लिया। आखिर 'मैं अभी पहुँचता हूँ' कहते हुए फोन बंद कर दिया।

थोड़ी देर बाद गोपाल बस अड्डे पर पहुँचा और दोनों को ऑटोरिक्शा में बिठाकर पाटील की दुकान पर ले गया। पाटील तीस के करीब उम्रवाला नौजवान था। मगर उसमें चालीस की धृष्टता, पचास की चालाकी और साठ का सयानापन था।

'पाटीलजी, मैंने इन्हीं लोगों के बारे में कहा था।' गोपाल ने उनका परिचय दिया।

'ऊपर जाके बैठ। मैं आता हूँ।' पाटील ने गंभीरता ओढ़कर उन्हें दुकान की छत पर भेजा। दोनों को बड़ी भूख लगी थी। पोटली खोलकर रोटी खाई।

'मैं जरा देखूँ?' उन्हें पीने के लिए पानी देने के बाद गोपाल ने मोबाइल के लिए हाथ बढ़ाया।

मलाबार क्रिस्टियन कॉलेज, कोझिक्कोड से हिंदी विभागाध्यक्षा के पद से सेवा निवृत्त। मौलिक लेखन के अलावा हिंदी और मलयालम में परस्पर अनुवाद। हिंदी में कहानी सूफी की जबानी, जिंदगी की किताब, शैतान की औलाद आदि अनूदित उपन्यास, वादियाँ बुलाती हैं हिमालय की नामक अनूदित यात्रा साहित्य, भक्ति आंदोलन और सामाजिक जागरण नामक मौलिक पुस्तक और अनेक अनूदित कहानियाँ प्रकाशित। अनुवाद के लिए देशीय पुरस्कार सहित कई पुरस्कार प्राप्त।

'नहीं गोपालजी, हमें शर्म आती है।' हनुमंता ने जेब को कसकर पकड़ा।

'नहीं भैया, अपने गाँव का कोई देख ले, तौहीन की बात है न? इसीलिए हम इतनी दूर सफर करके पुणे आए। वरना हम शोलापुर में ही कहीं बेच देते।' शोभी ने हनुमंता का समर्थन किया।

उसकी बेवकूफी पर यद्यपि गोपाल को हँसी आई, पर उसने अपनी हँसी को चेहरे पर प्रकट होने नहीं दिया।

'मुझसे क्या शरमाना, हनुमंता? पाटील साब से मनुहार करके चार रुपए ज्यादा दिलवाने के लिए मेरा देखना जरूरी है न?' इस सवाल के आगे हनुमंता की पकड़ ढीली हो गई। झिझकते हुए उसने मोबाइल गोपाल को दिया। शोभी ने अपना चेहरा रोटी की ओर झुका दिया।

तीन महीने पहले एक शाम को राम बापू के ढाबे में बैठकर हनुमंता धुआँ पी रहा था। पास आकर बैठते हुए गोपाल ने अपने मोबाइल की कुछ गुप्त तसवीरें उसे दिख दीं। गोपाल गाँव का एकमात्र पुलिसवाला चंदूलाल का बेटा है। गाँववालों में एक वही सबसे ज्याद पढ़ा-लिखा है। पुणे में जाने क्या-क्या बिजनेस चलाता है। हरदम उससे तंबाकू की बू निकलती है। कभी-कभार ही गाँव में आता है और कुछ दिन ठहरकर चला जाता है। ऐसा ही एक दिन था। तसवीरें देखकर हनुमंता दंग रह गया। उसने सुना था कि ऐसी तसवीरें देखने को मिलती हैं, मगर अब तक देखी नहीं थीं। गोपाल ने कुछ वीडियो दृश्य भी दिखा दिए।

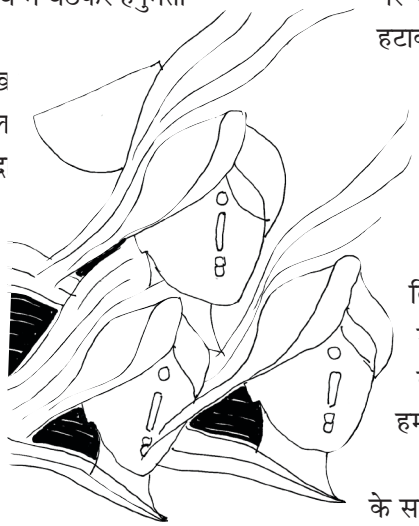

'ये सब कहाँ से मिलते हैं, गोपालजी?' डर के मारे हनुमंता का मुँह खुला का खुला रह गया।

'इंटरनेट में ये सब सलभ है रे! लेकिन यों गोरी-चिट्टी औरतों में आज ज्यादा दिलचस्पी नहीं। हम जैसे ठेठ गँवारों की माँग ज्यादा है। पता है, कितने रुपए मिलते हैं? पूरी जिंदगी खेत में मर-मिटने से जितना मिलता है, उतना एक तसवीर के लिए मिलेगा। धन कमाने की जिनकी चाह है, उनकी मदद के लिए मैं तो हूँ ही। लेकिन हिम्मत होनी चाहिए।' गोपाल ने स्वगत किया। हनुमंता इसे अनसुना करके, बिना जवाब दिए चाय पीकर उठा।

रात को उसे नींद नहीं आई। शोभी ने सोचा कि सब्जी खरीदने के लिए पैसा न होने के नाम पर हुए झगड़े की वजह से पति परेशान है। शोभी जानती थी कि जरा-जरा सी बात पर बेचैन होना हनुमंता की आदत है। इसलिए पति की छाती पर सिर रखकर उसने भरसक क्षमा माँगी और उसे सांत्वना भी देती रही। तभी हनुमंता ने गोपाल के मोबाइल पर देखी तसवीरों और वीडियो दृश्यों के बारे में शोभी को अवगत कराया। अपनी तसवीर देने को तैयार होनेवालों को मिलनेवाली मोटी रकम के बारे में भी बात बताई। उस रात शोभी भी नहीं सो सकी।

'कैमरावाला मोबाइल मेरे लिए खरीद लाना।' सप्ताह के आखिर में पुणे जाने के लिए बस के इंतजार में खड़े गोपाल से हनुमंता ने कहा। शोभी सलोनी है, हलकी मुसकान के साथ गोपाल ने उसे देखा। उसने सिर झुकाया। वह जेब से पैसा निकालने लगा तो गोपाल ने मना किया कि बाद में ले लेगा।

'बढ़िया! पाटील को पसंद आएगा, शर्तिया।' मोबाइल की तसवीरें और वीडियो देखने के बाद कनखियों से शोभी को देखते हुए गोपाल ने उत्साह के साथ राय दी। शोभी ने साड़ी के पल्लू से तन को पूरा ढक लिया।

थोड़ी देर बाद पाटील सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर आया। दोनों ने उठकर हाथ जोड़े। 'तुम दोनों ही अभिनेता हो न?' सवाल समझ में न आने पर भी हनुमंता ने 'हाँ' में सिर हिलाया। पाटील ने साड़ी हटाकर शोभी को सिर से पैर तक आँका।

'हाँ, नाक-नक्शा ठीक है। पास मार्क दिया जा सकता है। है न गोपाल?' सौंदर्य-प्रतियोगिता के जज की तरह पाटील ने गोपाल के कानों में फुसफुसाया। वह पाटील से सहमत हो गया।

'वीडियो के अभिनेताओं की सच्चाई जानने के लिए ही साक्षात्कार के लिए बुलाया। दूसरों के कमरों में कैमरा छिपाकर वीडियो बनानेवाले चालबाज भी बहुत हैं। आखिर पकड़ा गया तो अपलोड करनेवाले हम ही फँसेंगे।' पाटील ने हवा में बात छेड़ी।

'खैर, तुम्हारावाला देख लेता हूँ।' हनुमंता ने विनय के साथ मोबाइल पाटील के हाथ में थमा दिया।

'इसी में लिया था क्या? हो सकता है तसवीरें साफ नहीं हों। वे लोग एच.डी. माँगते हैं। कम-से-कम दस एम.पी. जरूरी है। वरना स्वीकार नहीं होगा।'

हनुमंता ने कुछ नहीं समझा। बस अनुमान लगाया कि कोई गड़बड़ जरूर है।

पाटील गैलरी खोलकर तसवीरें और वीडियो देखने लगा।

'मैंने कहा न गोपाल, तसवीरें साफ नहीं। मानो किसी काली गुफा में खींची गई हों। देखो गोपाल, यह आदमी सरकस के बूढ़े भालू की तरह ऊपर बैठकर कैसे हाँफ रहा है। कोई कॉमेड़ी वाला ही इसे खरीदेगा। यह देखो, किसी ने डरते-डरते खींचा हो जैसे देखो कैमरा कैसे काँप रहा है।' वीडियो और तसवीरों को देखकर पाटील उनकी आलोचना करने लगा।

'देखो गोपाल, यह औरत बार-बार कैमरे की ओर देखती है। यद्यपि स्वेच्छा से ली गई है, यह जताना जरूरी है कि गुप्त कैमरे से ली गई है। अरे! यह क्या? औरत के पेट पर कोई बदनुमा दाग! मानो किसी ने खंजर मारा है? मक्कार, क्या तू सोचता है कि कोई इज्जतदार मर्द इस वीडियो का मजा उठा सकेगा?' पाटील ने क्रुद्ध नजरों से हनुमंता को

देखा। हनुमंता का सिर झुक गया।

'हमने अपने गुरदे बेच दिए थे साब, उसी का निशान है।' शोभी ने कहा, 'तीन साल पहले तीन लाख देने का वादा करके एक एजेंट हमें ले गया। लेकिन काम हो जाने के बाद तीस हजार देकर विदा किया। हमारा बेटे शंभू को कैंसर हो गया था। हमने उस पैसे से उसे बचाने की बेकार कोशिश की। गुरदा, बेटा और पैसा तीनों ही नष्ट हो गए और यह बदसूरत दाग बाकी रह गया।' वह चेहरा ढाँपकर रो पड़ी।

'कर्ज बढ़ता जा रहा है, साब। इस अकाल में हम कैसे उतारेंगे अपना कर्ज। यह काम अपनी मर्जी से नहीं किया, साब।' हनुमंता रो पड़ा। मगर पाटील का दिल नहीं पसीजा।

'नहीं चाहिए, ले जा। शहर की कमसिन छोकरियों की बाथरूम सेल्फियों की कोई कमी नहीं।' पाटील बिगड़ता हुआ चला गया।

'गोपालजी, हमारी मदद कीजिए।' हनुमंता दौड़कर गोपाल के पैरों पर गिरा।

'पाटील साब ने सच कहा। यह किसने शूट किया। मुझसे कहा होता, मैं ठीक से कर देता। तसवीरें साफ नहीं हैं। खैर, मैं एक बार फिर कोशिश करता हूँ।' गोपाल पाटील के पीछे दौड़ा।

'उन्हें कुछ तो दे दीजिए साब, इतनी दूर से जो आए।'

पाटील ने आँख मारकर इशारा किया, 'चीज बढ़िया है। तुम चालाकी से मोबाइल ले लो और नाम के वास्ते कुछ रुपए देकर बिदा कर दो। तुमसे मैं बाद में मिलूँगा।'

गोपाल उनके पास पहुँचा। 'पाटील साब को बिल्कुल पसंद नहीं आई। मोबाइल वापस कर दो। उसका दाम नहीं लूँगा। इतनी दूर आए न? बस का किराया मैं दिलवा दूँगा बस।'

मोबाइल लेकर गोपाल सीढ़ियाँ उतर गया। हनुमंता और शोभी ने आँसू पोंछते हुए उसका पीछा किया।

'गोपालजी, मोबाइल की तसवीरें?' सीढ़ियों पर हनुमंता ने संदेह प्रकट किया।

'उसकी चिंता मत करो। मैं डिलीट कर दूँगा।' दोनों ने उस पर यकीन किया।

नीचे पहुँचने पर पाटील ने सौ के पाँच मैले-कुचैले नोट हनुमंता के हाथ में रख दिए।

'गोपाल ने कहा, इसीलिए देता हूँ। लो, यह मोबाइल भी रख लो। इसमें बढ़िया तसवीरें उतरती हैं। अकाल के खेत की तरह खुश्क तुम जैसों की तसवीरें नहीं, पास-पड़ोस की झोंपड़ियों की कमसिन छोकरियों की गुप्त तसवीरें ले आना। कर्ज चुकाने के लिए मुट्ठी भर रकम दूँगा।' हनुमंता ने चुचचाप मोबाइल लेकर जेब में रखा।

वापसी की बस जल्दी मिली। अँधेरे खेतों की तरफ देखकर बैठे हनुमंता के मन में जब-जब बेटी की तसवीर उभरती, आँखों में पानी भर आता था। शोभी की आँखों में भी आँसू थे।

धन्या, किलियनाड रोड
कोझिक्कोड-६७३००१ (केरल)
दूरभाष : ८५४७०६६८७८

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

भय बिनु होइ न प्रीति

• विनोद शंकर गुप्त

नवरस में एक रस है—भयानक रस। भयानक रस का स्थायी भाव भय है। भय कितना-कितना भयभीत करनेवाला, सभी जानते हैं। भय मनुष्य के जीवन में ही नहीं, जानवरों में भी उत्पन्न होता है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कभी-न-कभी भय अवश्य उत्पन्न हुआ होगा। भय के कारण अनेक हो सकते हैं, जैसे—हिंसक जंतु, भीमकाय पुरुष, अस्त्र-शस्त्र की आशंका, अनिष्ट और अप्रियता की आशंका आदि-आदि। आप कहीं अकेले रात्रि में, निर्जन वन में, श्मशान में, पर्वत में जाएँ तो डर लगने लगता है। आँधी-तूफान में कहीं फँस जाएँ तो भयभीत हो जाते हैं।

रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी रामचंद्रजी द्वारा कहलवाया है—

बिनय न मानत जलधि जड़, गए तीन दिन बीति।
बोले राम सकोप तब, भय बिनु होइ न प्रीति॥

कंस को भी भय सताता रहा कि देवकी के आठवें पुत्र द्वारा वह मारा जाएगा। केवट ने भी रामचंद्रजी को अपनी नाव में बैठाने से पहले उनके चरण धोए, क्योंकि उसे भी भय था कि जैसे रामजी के चरण के स्पर्श से पत्थर की शिला सुंदर स्त्री बन गई तो कहीं मेरी काठ की नाव भी स्त्री बन जाएगी।

छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई॥
तरनिउ मुनि धरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव उड़ाई॥
एहिं प्रतिपालउँ सबु परिवारू। नहिं जानउँ कछु अउर कबारू॥
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू। मोहि पद पदुम पखारन कहहू॥

राजा-महाराजा भी भयभीत रहते थे कि कोई दूसरे राज्य का राजा हमारे ऊपर आक्रमण न कर दे। आज भी ज्यादातर देश आतंकवादियों से भयभीत रहते हैं। एक देश दूसरे देश के सीमा-विवाद के कारण भयभीत रहता है। आजकल सभी शक्तिशाली व बड़े देशों के पास परमाणु बम हैं, अत: सब डरते हैं कि लड़ाई-झगड़े न हों। देश में राजनीतिक दल भी कम भयभीत नहीं रहते कि पता नहीं, आज सत्ता-शासन उनके पास है, कल रहेगा या नहीं।

ऋषि-मुनि पहले क्रोधित होने पर श्राप दिया करते थे और उनके श्राप से लोग भयभीत हो जाते थे। ऐसे ही विश्वमोहिनी स्वयंवर में जब भगवान् ने नारद मुनि को बंदर का रूप दिया तो वे क्रोधित हो गए और

जाने-माने साहित्यकार। 'बाबू गुलाबराय व्यक्तित्व और कृतित्व : एक झलक', 'जीवन पाथेय', 'बाबू गुलाबराय की हास्य-व्यंग्य रचनाएँ', 'बाबू गुलाबराय के विविध निबंध', 'मेरे मानसिक उपादान : बाबू गुलाबराय', 'मेरी कहानी मेरी जुबानी', 'बाबू गुलाबराय विचार-सार' (संपादित ग्रंथ) एवं विविध पत्र-पत्रिकाओं में सामाजिक व पुरातत्त्व विषय पर लेख प्रकाशित।

उन्होंने शिवजी के गणों को तथा भगवान् को भी श्राप दिया—

वेषु बिलोकि क्रोध अति बाढ़ा। तिन्हहि सराप दीन्ह अति गाढ़ा॥
बंचेहु मोहि जवनि धरि देहा। सोइ तनु धरहु श्राप मम एहा॥

किसी की बद्दुआ से भी हम भयभीत होते हैं। जब किसी के घर लड़का पैदा होता है या घर में शादी होती है तो किन्नर आते हैं, गा-बजाकर नेग-रुपया माँगते हैं; उनकी माँग भी बड़ी होती है। यदि उन्हें आप रुपया दे दें तो ठीक, नहीं तो बद्दुआ देते हैं। उनकी बद्दुआ से भयभीत होकर मजबूरन हम उन्हें मुँहमाँगा धन देकर छुटकारा पाते हैं। भय ऐसा भयानक है कि मनुष्य से सबकुछ करा लेता है। यह बड़ा बलवान है।

जो लोग ज्योतिष विद्या में विश्वास करते हैं, उन्हें भी भय बहुत सताता है। आपकी बेटी या बेटा मंगली है तो ज्योतिष विद्या के पंडित आपको भयभीत करते रहेंगे कि बेटी की शादी किसी मंगली लड़के से ही करें, अन्यथा अनर्थ हो जाएगा, या अपकी बेटी मंगली है तो उसकी शादी तब करें, जब वह २७ वर्ष की हो जाए, बेचारे माता-पिता इंतजार करते हैं कि जब बेटी २७ वर्ष की हो, तब लड़का तलाश करेंगे। लड़का भी मंगली हो, तभी ग्रह ठीक मिलेंगे। माता-पिता इन पंडितों के चक्कर में फँस जाते हैं। यदि उनकी बात न मानें तो भय बना रहता है कि कुंडली नहीं मिलाई तो शादी के बाद कहीं कुछ अनर्थ न हो जाए! ज्योतिषाचार्यजी कभी किसी को शनि की दशा बताकर भयभीत कर देते हैं तो कभी राहु-केतु की दशा। हम जीवन भर भयभीत बने रहते हैं।

हमारे घर में शेर-चीता तो नहीं आ सकता, पर कभी साँप-बिच्छू शायद आ जाए, उससे डर-भय लग सकता है; परंतु यदि घर में छिपकली आ जाए तो अवश्य कुछ लोगों को बहुत डर लगता है। रात को नींद भी

नहीं आती कि कहीं छिपकली हमारे ऊपर न गिर जाए। चलिए, छिपकली तो फिर भी बड़ी चीज है, लोक कॉक्रोच से भी डरते हैं। यदि आपके घर के पास गंदगी है, तालाब है, कोई नाला है तो मच्छरों से भी डर लगता है। पता नहीं, कौन सा मच्छर डेंगू का है या मलेरिया का! शहर में यदि लोगों को डेंगू या स्वाइन फ्लू हो गया तो डर लगने लगता है कि कहीं हमें भी न हो जाए।

वैसे कुत्ता तो बड़ा वफादार जानवर है। लोग घरों में अच्छी नस्ल के कुत्ते पालते हैं, नाम भी जिनके अंग्रेजी के होते हैं। परंतु कुत्ते सड़कों पर भी घूमते रहते हैं। आवारा कुत्तों से बड़ा डर लगता है; कौन जाने कब कहाँ किसको काट ले। मुझे भी तीन बार कुत्ते ने काटा है। डॉक्टर का कहना है कि जिस कुत्ते ने काटा है, यदि वह दस दिन जिंदा रहे तो वह पागल नहीं है या फिर कोई खतरा नहीं है। परंतु आवारा कुत्तों की रखवाली कौन करेगा? मुझे तीन बार पेट में १४ इंजेक्शन लगवाने पड़े थे। तो कुत्तों से, विशेषकर आवारा कुत्तों से भय बना रहता है। पागल कुत्ते के काटने और इलाज न कराने पर हाइड्रोफोबिया की बीमारी हो जाती है। यह रोग असाध्य हो जाता है। वह मनुष्य भी कुत्ते की तरह काटने को दौड़ता है।

बच्चा जब छोटा होता है, तब उसे भय से बचाने के लिए माता अपने बच्चे के पास चाकू रख देती हैं। जब हम बड़े होते हैं, यानी विद्यार्थी जीवन में तो मास्टरजी या मैडमजी से डरते हैं। यदि पुराने जमाने की (आज से ६०-७० वर्ष पहले की) बात करें तो टीचर विद्यार्थी को इतनी सजा देते थे कि सोच भी नहीं सकते। हमें बड़ा भय लगता था। हेडमास्टर एक-दो फीट का काले रंग का रोलर हाथ में लिये घूमते थे, जहाँ कहीं भी किसी विद्यार्थी ने कुछ शैतानी की तो उससे पिटाई करते थे। उनके रोलर को देखकर ही डर लगता था। गलती करने पर, पाठ याद न करने पर क्लास में बेंच पर खड़ा करते थे या खेल के मैदान में दौड़ लगानी पड़ती थी। हमारे संस्कृत के मास्टर साहब 'पंडितजी' तो हमसे ही कहते, ''जाओ, नीम की एक डंडी तोड़कर लाओ!'' और उसी डंडी से हम विद्यार्थियों की पिटाई होती थी। यह तो था हमारे स्कूल के जीवन में मास्टरजी का भय। कॉलेज में प्रोफेसर का वह भय नहीं रहता। जब स्कूल के विद्यार्थी थे तो अधिक खेलकूद में व्यस्त रहने पर माँ की मार का डर रहता था।

विद्यार्थी जीवन में एक भय और भी रहता है, वह है नंबरों का, डिवीजन का, ग्रेड का कि वह कम न हो। अच्छे नंबर नहीं आए तो इंजीनियरिंग या मेडिकल आदि की पढ़ाई के लिए कॉलेज में एडमीशन नहीं मिलेगा। इस भय के चक्कर में ही विद्यार्थी बेचारा दिन-रात एक करके पढ़ता है। स्पर्धा का जमाना है। पढ़ाई हो चाहे खेलकूद या कोई कला, सभी में स्पर्धा से गुजरना पड़ता है, भय लगा रहता है कि कहीं हम पीछे न रह जाएँ। इसलिए तो रामचरितमानस में कहा है, 'भय बिनु होइ न प्रीति।'

गृहस्थ जीवन में भी मनुष्य को भय सताता रहता है। बेटी युवा हो गई है तो उसे कहीं अकेले भेजने में माता-पिता को डर लगता है, क्योंकि आजकल रोज समाचार-पत्रों में छपता रहता है कि इस शहर में अज्ञात लोगों ने गैंग रेप किया। लड़कियाँ सुरक्षित नहीं हैं, भय लगा रहता है। कॉलेजों में तो लड़के-लड़कियाँ साथ-साथ पढ़ते हैं और जब कभी उनके घर आने में देर हो जाती है तो माता-पिता दुश्चिंता करने लगते हैं। गृहस्थ जीवन में लड़की के माता-पिता भयभीत रहते हैं कि बेटी ससुराल में सुखी है या नहीं! पहले के जमाने में शादियाँ जान-पहचान के परिवार में होती थीं, पर अब विज्ञापन देखकर या इंटरनेट पर देखकर रिश्ते किए जाते हैं तो पता नहीं होता कि परिवार कैसा है! आजकल की शादियाँ अंतरजातीय होती हैं, प्रेम-विवाह होते हैं, अत: एक-दूसरे के परिवार को अच्छी तरह जानते नहीं हैं तो शुरू में भय तो रहता ही है।

परिवार में बहू सास से डरती रहती है कि सासूमाँ कहीं मुझसे नाराज न हो जाएँ। और कहीं-कहीं सासूजी अपनी बहू से डरती हैं, जब वे वृद्ध हो जाती हैं और घर के काम नहीं कर पातीं कि बहू कहीं हमें वृद्धाश्रम न भेज दे। पुरुष भी अपनी पत्नी से डरते हैं। मेरे एक मित्र किसी बड़ी कंपनी में प्रेसिडेंट पोस्ट पर थे, हजारों आदमी उस फैक्टरी में काम करते थे। सब उनसे डरते थे। परंतु मैंने देखा था कि वे अपनी धर्मपत्नी से डरते थे, उनसे कुछ कहने की हिम्मत नहीं रखते थे। उनकी पत्नी ही घर में सब पर रोब जमाती थीं।

परिवार में बहू सास से डरती रहती है कि सासूमाँ कहीं मुझसे नाराज न हो जाएँ। और कहीं-कहीं सासूजी अपनी बहू से डरती हैं, जब वे वृद्ध हो जाती हैं और घर के काम नहीं कर पातीं कि बहू कहीं हमें वृद्धाश्रम न भेज दे। पुरुष भी अपनी पत्नी से डरते हैं। मेरे एक मित्र किसी बड़ी कंपनी में प्रेसिडेंट पोस्ट पर थे, हजारों आदमी उस फैक्टरी में काम करते थे। सब उनसे डरते थे। परंतु मैंने देखा था कि वे अपनी धर्मपत्नी से डरते थे, उनसे कुछ कहने की हिम्मत नहीं रखते थे। उनकी पत्नी ही घर में सब पर रोब जमाती थीं। मैंने अपने मित्र श्री रमेशजी से कहा कि आप इतने बड़े अधिकारी हैं, सारी फैक्टरी के लोग आपका आदर करते हैं एवं डरते हैं, पर आप अपनी पत्नी से क्यों डरते हैं? उन्होंने कहा कि भाईजान! यदि मैं अपनी पत्नी का हुक्म न मानूँ तो घर में असंतोष फैल जाएगा। उनकी पत्नी का नाम था संतोष। मैं घर में शांति चाहता हूँ।

नारी के विषय में विक्टर ह्यूगो ने लिखा है—''पुरुष नारियों के खिलौने हैं। किंतु स्वयं नारियाँ शैतान के खेलने के उपकरण हैं।''

जो वस्तु बचपन में भय का कारण होती है, वही यौवनावस्था में हमारे तिरस्कार व उपहास का विषय बन जाती है। बच्चों को भयरूपिया से भय लगता है, किंतु वह हमारे विनोद-मनोरंजन का कारण होता है। वन, जंगली पशु इत्यादि यद्यपि भयानक चीजें हैं, पर बहुत से लोग इसमें आनंद पाते हैं, जब वे चिड़ियाघर जाते हैं। हमारे देश में चिनार वाइल्ड लाइव सैंचुरी, पेरियर वाइल्ड लाइव सैंचुरी, जिम कॉर्बेट आदि जगह हैं,

जहाँ लोग शेर, चीते, हिरन, नीलगाय आदि हिंसक पशुओं को देखने जाते हैं। इनको देखकर भय भी लगता है और आनंद भी आता है।

जिससे हानि की शंका होती है, उसी से भय होता है। जिससे आप प्रेम करते हैं, उससे भय भी होता है कि कहीं वह दूर न चला जाए, हमसे रुष्ट न हो जाए! कभी-कभी ऐसा भी होता है कि घर के लड़ाई-झगड़ों में कोई अनुचित कदम न उठा ले, इसका भी भय रहता है।

भय का समाज में बहुत असर पड़ता है। दंड का भय समाज के लोगों को दुष्कर्म करने से बचाता है। लोकापवाद का दंड का सा भय होता है। भगवान् श्रीरामचंद्रजी ने भी सती सीता का परित्याग लोकापवाद के भय से किया था, किंतु जहाँ लोग समाज की परवाह नहीं करते, वहाँ भय काम नहीं करता। जब हम कुछ हटकर कुछ काम करते हैं तो भय लगा रहता है कि लोग क्या कहेंगे। यदि हम कुछ अच्छा भी काम करने जा रहे हैं तो नहीं कर पाते, क्योंकि भय लगा रहता है कि लोग क्या कहेंगे। दूसरों की आलोचना का भय भी काम करने में बाधा पहुँचाता है। हम कुछ नए फैशन के कपड़े पहनना चाहते हैं तो यही भय लगा रहता है कि कोई क्या कहेगा। हमें पूरे जीवन में बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक डर-डरकर जीना पड़ता है। व्यापारी है तो डर रहता है कि व्यापार में घाटा न हो जाए। ऑफिस में काम करते हैं तो अफसर से डर लगता है—उसकी फटकार का। घर में पत्नी का भय लगा रहता है कि कहीं वह नाराज न हो जाए। समय पर जागो नहीं, सोओ नहीं, अधिक टी.वी. न देखो, ऑफिस से टाइम से न आओ और उसके आदेशों का पालन न करो। और अंत में मृत्यु का डर तो सभी को होता है।

हमें कभी-कभी कुछ काम कराने या किसी को सुधारने के लिए भय दिखाना पड़ता है। प्रीति का भय अच्छा भय है। बच्चों व अशिक्षित लोगों को भूत-प्रेत का भय दिखाना कभी-कभी ठीक होता है, किंतु भय के द्वारा शिक्षा देना उनकी आत्मा को कमजोर बनाता है। स्वामी विवेकानंद ने कहा है, ''स्व भय से अधिक भयानक और कुछ नहीं होता।''

ए-३, ओल्ड स्टाफ कॉलोनी, जिंदल स्टैनलेस लि.
ओ.पी. जिंदल मार्ग, हिसार-१२५००५
दूरभाष : ९४१६९९५४२२

बाल-कविता

तन पे धोती, सिर पे चोटी

• हरीश कुमार 'अमित'

बंदरजी का बहाना

अपने जन्मदिवस की शाम
बढ़िया-सा इक जश्न मनाने,
बंदरजी होटल में पहुँचे,
बँदरिया को खाना खिलाने।
लेकिन रेट वहाँ के देख
छूटे बंदरजी के पसीने,
बोले, चलते हैं घर वापस,
उड़ा लिया मेरा पर्स किसी ने।

दादाजी के दाँत

दादाजी के दाँत निराले
दाँत नहीं ये असली वाले,
जब जी चाहें इन्हें लगाएँ
जब जी चाहें इन्हें निकालें।
ऐसा न हो दाँत किसी दिन
ले उड़े कोई चूहा आवारा,
बिन दाँतों के दादाजी को
रहना पड़े भूखा दिन सारा।

गीदड़ सुस्तराम

सुस्तराम गीदड़ सोए थे ताने चादर
तभी उठे जब आया सूरज सिर पर,
उठते ही लगे कहने वे माँ से
लाओ नाश्ता जल्दी, भूख लगी कसकर।
बोली माँ—नहीं बना आज कुछ

खाली पड़े हैं घर के सब कनस्तर,
छोड़ो सुस्ती, करो कोई काम
पहले लाओ पैसे कुछ कमाकर।

झपकी

टिड्डेरामजी जा पहुँचे
चूहे राजा के घर शाम को,
बड़ी देर में खुला दरवाजा
पूछा टिड्डे ने तब उनको।
भइयाजी, क्या हो गई बात
आवाज दे रहा हूँ कबकी,
झेंप के बोले चूहे राजा
आ गई थी जरा सी झपकी।

पंडित सालिगराम

तन पे धोती, सिर पे चोटी,
पाँव में पहनें खड़ाऊँ मोटी।
तीन पाव खा जाएँ हलवा,
बीस-तीस तो खा लें रोटी।
ऐसे हैं पंडित सालिगराम,
दिनभर करते रहें आराम।
बस खाने में रहते अव्वल,
और नहीं इनको कुछ काम।

३०४ ए एम.एस.४,
केंद्रीय विहार, सेक्टर ५६,
गुरुग्राम-१२२०११ (हरियाणा)
दूरभाष : ९८९९२२११०७

राजा लुई और विवाहित पुरुष

मूल : **मैरी टेल्स**

अनुवाद : **भद्रसैन पुरी**

फ्रांस का राजा लुई ग्यारहवाँ बगैने में रहता था, क्योंकि राज्य में गड़बड़ी चल रही थी। वह एक बार शिकार खेलने गया। उसकी मुलाकात केनन नामक व्यक्ति से हुई। केनन सामान्य व्यक्ति था। ऐसे व्यक्तियों में राजकुमार लोग प्राय: रुचि रखते हैं और उनसे मेल-मिलाप करके खुशी महसूस करते हैं।

शिकार के बाद राजा प्राय: केनन के घर जाता और उसके साथ प्रसन्नता से मूली खाया करता था।

कुछ समय बीत जाने के बाद जब राजा को घर लौटने और फ्रांस पर पुन: राज्य करने का अवसर मिला तो केनन की पत्नी ने केनन को परामर्श दिया कि वह बढ़िया किस्म की मूलियाँ ले जाकर राजा को दे आए और उसके दिमाग में यह बात डाल दे कि ये उसने घर पर स्वयं उगाई हैं। केनन ऐसा करने पर राजी नहीं हुआ।

''क्या मूर्ख औरत हो!'' उसने कहा, ''बड़े राजकुमार ऐसी छोटी-छोटी प्रसन्नताओं को याद नहीं रखते।''

परंतु ऐसा कहने के बावजूद उसको तब तक चैन नहीं आया, जब तक अच्छी तथा सुंदर नजर आनेवाली मूलियाँ लेकर केनन दरबार की ओर नहीं चल पड़ा, परंतु रास्ते में एक सबसे बड़ी मूली को छोड़कर केनन बाकी सब मूलियाँ खा गया।

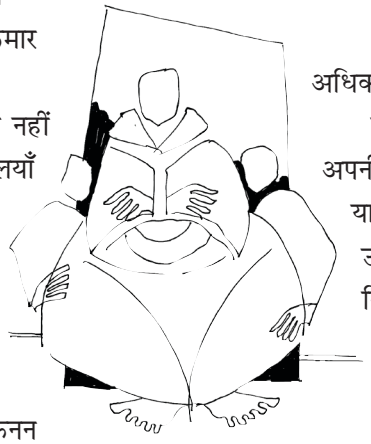

केनन दरबार में पहुँचा और उस स्थान पर खड़ा हो गया जिसके पास से राजा प्राय: गुजरा करता था। राजा आया और उसको पहचानकर अपने पास बुलाया। केनन ने आगे बढ़कर राजा को प्रसन्नतापूर्वक मूली भेंट की।

राजा ने उसे प्रसन्नता से ग्रहण किया और अनुचर को आदेश दिया कि वह मूली को उसके प्यारे रत्नों में रख दे; फिर केनन को अपने साथ भोजन करने का आमंत्रण दिया।

भोजन समाप्त हो गया तो राजा ने केनन को धन्यवाद दिया। जब राजा ने देखा कि केनन घर लौटने वाला है तो उसने मूली के बदले उसको सोने के एक हजार सिक्के दिए।

जब राजा के महल में इस बात का पता चला तो एक दरबारी ने राजा को एक प्यारा छोटा घोड़ा भेंट किया। राजा ने भाँप लिया कि यह घोड़ा उसको इसलिए दिया जा रहा है कि उसने केनन पर कृपा की है, फिर भी उसने उपहार को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया। उसने अपने मंत्रियों से बातचीत की कि घोड़े के बदले में क्या दिया जाए। घोड़ा वास्तव में बहुत ही अच्छा और प्यारा था।

घोड़ा भेंट करनेवाले ने आशा लगा रखी थी कि यदि उसे मूली का इतना अच्छा बदला दिया गया है, जबकि वह एक देहाती ने भेंट की थी, तब मैं तो एक दरबारी हूँ, इसलिए घोड़े का बदला और अधिक होगा।

जब इस मामले में राजा के पूछे जाने पर सब लोग अपनी-अप नी राय दे चुके तो अंत में राजा बोला, ''मुझे याद आ गया कि हमें इसको क्या देना चाहिए!'' उसने मंत्री को कान में आदेश दिया कि कमरे में सिल्क में लपेटकर रखी वस्तु लाई जाए। शीघ्र ही मूली लाई गई। राजा ने अपने हाथों से दरबारी को उसे देते हुए कहा—

''हमारा अनुमान है कि यह रत्न, जिसपर हमारे सोने के एक हजार सिक्के खर्च हुए हैं, तुम्हारे घोड़े का अच्छा बदला है।''

दरबारी अति प्रसन्न होकर अपने रास्ते पर चला गया। जब उसने उसे खोला तो देखा कि वह सड़ी-गली मूली थी।

बेंगलुरु में बीस दिन

● गोविंद सेन

मैं मूलत: यात्रा भीरू हूँ, घर के बाहर घर जैसा आराम कहाँ, जैसी मानसिकता वाला। पर एक ही जगह पर रहते हुए आदमी ऊब जाता है। आखिर एक जैसे मकान, एक जैसे रास्ते, एक जैसे पेड़-पौधे और चेहरे आदमी कब तक देखे। हर आदमी को नए रास्ते, नए मकान, नए पेड़-पौधे कुछ तो नया चाहिए। मुझे अनजानी जगहों पर जाना असुविधाओं को बुलावा देना लगता है। मैं अनजाने डर से घिर जाता हूँ। असहज हो जाता हूँ। पर अनजाने और नए का आकर्षण भी होता है—एक अदम्य आकर्षण। इससे बचा नहीं जा सकता। मैं भी इस आकर्षण की गिरफ्त में था। फिर जहाँ मुझे जाना था, वह भी मेरा अस्थायी ही सही, घर ही था। हाँ, उस शहर में पहली बार जा रहा था और पहली बार का आकर्षण रहता ही है।

बड़ा बेटा विनय बेंगलुरु में सॉफ्टवेयर इंजीनियर है। नवंबर, २०१८ में दीपावली के बाद उसने गूगल ज्वॉइन किया था। जब वहाँ एक सोसायटी में फ्लैट रेंट पर ले लिया और सामान सेटल कर लिया तो उसने हमारे लिए तीन एयर टिकट बुक करवा दिए—दो हम पति-पत्नी और हमारे छोटे बेटे निखिल के लिए।

इंदौर से उड़ान भरकर १ फरवरी, २०१९ की रात को हम बेंगलुरु के केंपेगौड़ा इंटरनेशनल एयरपोर्ट पर उतरे। बेल्ट से बैग उठाकर अच्छी तरह नाम चेक किए। यह चेक करना बहुत जरूरी लगा। पिछली बार इंदिरा गांधी इंटरनेशनल एअरपोर्ट दिल्ली में ट्राली बैग उठाने में गच्चा खा चुके थे। गफलत महँगी पड़ी थी। खैर, वह एक अलग कहानी है। चेक करने के बाद हम सामान लेकर बाहर निकले। निखिल ने मोबाइल के जरिए कैब बुलवाई। कैब कई मोड़ों, पुलों और अंडरपासों से गुजर रही थी। हम उत्सुकता से रोशनी में चमचमाते पेड़ों, फूलों और ऊँची इमारतों को देखते जा रहे थे। आखिर सोसायटी के गेट से होते हुए फ्लैट तक पहुँचे।

अगले ही दिन विनय हमें भारतीय जलपान गृह नाश्ते के लिए ले गया। इससे पहले सोसायटी के पास ही उसने हमें डी.आर.डी.ओ. क्षेत्र के गेट नंबर तीन से प्रवेश करवाकर भ्रमण करवा दिया था। सुझाव भी दिया था कि सुबह घूमने के लिए मैं इस क्षेत्र में आ सकता हूँ। वहाँ कतारबद्ध खड़े बड़े-बड़े मोटे तनेवाले ऊँचे छायादार सैकड़ों पेड़ हैं। पेड़ों

सुपरिचित लेखक। अब तक चुप्पियाँ चुभती हैं (गजल-संग्रह), अकड़ूभुट्टा, नकटी नाक (निमाड़ी हाइकु-संग्रह) नवसाक्षरों के लिए पाँच पुस्तिकाएँ, बिना पते का प्रशंसा-पत्र (व्यंग्य-संग्रह), खोलो मन के द्वार (दोहा-संग्रह), सफेद कीड़े (कहानी-संग्रह) प्रकाशित। पं. देवीदत्त शुक्ल स्मृति सम्मान, आंचलिक साहित्यकार सम्मान एवं अन्य सम्मान।

की शाखाएँ ऊपर मिलकर सायबान-सा बना रही थीं। पेड़ों पर तने की छाल पर उनकी क्रम संख्याएँ भी अंकित हैं। हर पेड़ को एक नंबर दिया गया था। हर पेड़ का एक नंबर था।

बेटा जॉब पर जहाँ-जहाँ रहा, वहाँ-वहाँ हमें बुलाता रहा। हैदराबाद, गुरुग्राम (गुड़गाँव) और अब बेंगलुरु। हैदराबाद में बड़े-बड़े गोल पत्थरों ने अचरज से भर दिया था। प्राकृतिक वातावरण के बीच अत्याधुनिक और सर्वसुविधा संपन्न माइक्रोसॉफ्ट के ऑफिस की बिल्डिंगें देख मन खिल उठा था। वह स्थान बहुत सुंदर था। वहाँ एक छोटे से तालाब के पास हरियाली में मोर को विचरण करते हुए देख तो सुखद आश्चर्य हुआ था। लग रहा था कि प्रकृति को कम-से-कम नुकसान पहुँचाकर उसे अधिकाधिक सुरम्य बनाया गया है। उसे देखते हुए मन बार-बार पूछ रहा था कि क्या जन्नत यहीं है। हर जगह के लोगों का मिजाज और मिट्टी का रंग अलग-अलग होता है। गुरुग्राम और दिल्ली के आसपास की मिट्टी पीले रंग की है, जबकि बेंगलुरु की मिट्टी का रंग लाल है।

बेंगलुरु में हर जगह दुकानों-कार्यालयों के साइन बोर्डों पर कन्नड़ और अंग्रेजी में लिखा हुआ है। केवल डी.आर.डी.ओ. कैंपस में स्थित केंद्रीय विद्यालय के बोर्ड पर ही कन्नड़ और अंग्रेजी के साथ हिंदी में लिखा हुआ मिला था। कन्नड़ की लिखावट बहुत आकर्षक और सुंदर लगी। लिखावट ऐसी कि जैसे चित्रों की शृंखला हो। कन्नड़ में कई गोलाइयाँ और हुकनुमा आकृतियाँ होती हैं। कोई वर्ण मुड़ी हुई भुजा-सा, कोई वर्ण अंग्रेजी के आठ अंक-सा किंतु आड़ा पड़ा हुआ। कोई वर्ण जैसे हाथी सूँड़ उठाए हुए। कोई वर्ण गरदन उठाए कमर की ओर मुख मोड़े चौकन्ने हिरण-सा।

तीन फरवरी की सुबह ही हम बेटे द्वारा चयनित एक उपहार गृह में लोहे की फेंस के पास ही कार पार्क कर नाश्ता कर रहे थे—इडली-सांभर-डोसा-दही बड़ा आदि। विनय ने अपने लिए फिल्टर कॉफी का ऑर्डर दे दिया था। तभी बदन पर एक सस्ती-मैली साड़ी लपेटे अधेड़ महिला कहीं से आई और हमसे भोजन दिलवाने की लगातार याचना करने लगी। वह धारा-प्रवाह अंग्रेजी में बोल रही थी, 'गीव मी सम फूड···पार्सल···आय एम हंगरी···आय हेव फोर्टी ईयर मेंटली रिटायर सन···आय'म लाइक योर मदर···प्लीज गीव मी फूड।' वह काफी देर तक मिन्नत करती रही। 'फूड-फूड' की रट लगाती जा रही थी। बहुत अजीब लग रहा था, पर हम उससे उलझे बिना अपना नाश्ता करते रहे। जब उसे लग गया कि हम उसे भोजन या नाश्ते का पार्सल दिलवाने वाले नहीं हैं, तब उसने याचक का चोला छोड़कर रणचंडी का रौद्र रूप धर लिया और एक निश्चित दूरी पर जाकर हम पर धुआँधार बरसने लगी। ललकारने लगी। वह बार-बार हमारे लिए···'यू कुड़ल्ली···यू कुड़ल्ली···' या ऐसा ही कुछ बके जा रही थी। कुड़ल्ली का कोई अर्थ पकड़ में नहीं आ रहा था, पर इतना जरूर समझ में आ रहा था कि वह हमें अपनी भाषा में शाप दे रही थी। यह स्थिति हमें विचलित और शर्मिंदा कर रही थी। मुझे 'रोटी' और 'रोटी, कपड़ा और मकान' जैसी फिल्मों की याद आने लगी। जीवन की पहली और मूल आवश्यकता है—रोटी। जब तक सभी की भूख नहीं मिटती, हम सुख से खा नहीं सकते। मुझे जगमग उजाले के भीतर का अँधेरा नजर आने लगा था। अखबारों के वे शीर्षक और टी.वी. की वे खबरें याद आने लगीं, जिनमें रखरखाव की लापरवाही के चलते बरसात में खुले में पड़ा कितना ही अनाज सड़ जाने का जिक्र होता है और ये खबरें हर साल बनी रहती हैं। इसके बाद जब हम कब्बन पार्क में गए थे, तब वहाँ भी एक आबनूसी रंग की वृद्ध महिला भीख माँगने के लिए हाथ आगे करके खड़ी थी। उसकी आँख-से-आँख मिलाना मुश्किल हो रहा था। उसकी आँखों में निरंतर एक असहनीय लाचारी टपक रही थी। उसके मुँह से एक शब्द भी निकल नहीं पा रहा था, पर आँखें इतनी बोल रही थीं कि उन बोलों को सह पाना मुश्किल था।

सोसायटी के पास मॉल और ठेले पर खुले में बिकनेवाली सब्जियाँ काफी महँगी होती हैं। के.आर. पुरम मार्केट के बारे में प्रियंका ने अवगत कराया। उसने बताया कि केआर पुरम मार्केट में मंगलवार को हाट पड़ता है, वहाँ सब्जी और फल वगैरह सस्ते मिलते हैं। हमने वहाँ जाकर सब्जियाँ और फल लाने का निश्चय किया। प्रियंका फ्लैट में बरतन, झाड़ू-पोंछा करने आती है। आठवीं तक पढ़ी है। पूछने पर कि आगे क्यों नहीं पढ़ी, बताया कि फैमिली में एक प्रॉब्लम आ जाने से आगे नहीं पढ़ पाई। उस प्रॉब्लम के बारे में पूछना मुझे अशोभनीय लगा, इसलिए नहीं पूछा। कन्नड़भाषी प्रियंका ठीक-ठाक हिंदी बोल लेती है। वहाँ स्कूल में कन्नड़, अंग्रेजी और हिंदी तीनों भाषाएँ पढ़ाई जाती हैं।

यहाँ की जगहों और सड़कों के नाम जल्दी जुबान पर नहीं चढ़ रहे थे। उन्हें याद करने के लिए तरकीब लगानी पड़ी। बैंगनाहल्ली, बायपन्नाहल्ली, वरथुर रोड, कागादास रोड। इनके हिज्जे यही सही हो, मैं कह नहीं सकता। यह हमारी समस्या अधिक थी। वहाँ के रहवासी कन्नड़भाषियों के लिए तो इनका उच्चारण सहज होगा। बहू अंकिता ने बताया कि यहाँ गाँव को 'हल्ली' कहते हैं। मैं समझ गया कि इसीलिए कई स्थानों के साथ 'हल्ली' लगा हुआ है। अनजाने में एक सूत्र पकड़ में आ गया। नगर जब महानगर बनते हैं तो आसपास के गाँवों को निगल जाते हैं, पर उनके नाम अकसर वैसे ही जीवित रहते हैं। जबान पर चढ़ा था—आरके स्टूडियो। इसे उल्टा करके याद रखना पड़ा। आरके का उल्टा केआर और उसके साथ में पुरम लगा दो तो हो गया आरके पुरम। बैंगनाहल्ली को बैंगन से याद रखना पड़ा। के.आर. पुरम जाने के लिए बैंगनाहल्ली बस स्टॉप से बस पकड़ना थी।

दस फरवरी को साहित्यकार मित्र आचार्य बलवंत से कब्बन पार्क में मिलना तय हुआ था। हालाँकि इस बीच हम लालबाग पार्क और कब्बन पार्क देख चुके थे। चूँकि यह पार्क हम दोनों के निवास के बीच में पड़ता था, इसलिए वहीं हमने मुलाकात तय की थी। इस तरह मुझे कब्बन पार्क दुबारा जाना पड़ रहा था। मैं मेट्रो से कब्बन पार्क स्टेशन पर पहुँचा। स्टेशन से जैसे ही बाहर हुआ बलवंतजी टैक्सी वाले से बात करते हुए मिल गए। तसवीरों से बाहर मैं पहली बार उनसे मिल रहा था। उनसे जब मोबाइल पर बात होती थी तो लगता था कि कोई बुजुर्ग होंगे। पर प्रत्यक्ष देखने पर सच सामने था। आबनूसी रंग के बलवंतजी मुझसे सात-आठ साल छोटे थे, पर कद उनका छह फुट था, मुझसे कोई छह-सात इंच अधिक। ये वे ही शख्स थे, जिन्होंने मेरी कहानी 'सुखदेव की सुबह' पर समीक्षा लिखी थी। उस पर बात कर उत्साहवर्धक प्रतिक्रिया तो दी ही थी। 'परिकथा' में छपी यह कहानी उन्हें बहुत पसंद थी। इससे पहले मेरा उनसे कोई परिचय नहीं था।

तेरह फरवरी को बारह बजे के आसपास जब लिफ्ट से नीचे उतरा तो बाहर धूप खिली हुई थी। सुबह आसमान पर बादल छाए हुए थे। हवा में ठंडक थी। इसीलिए यह खिली हुई धूप बहुत भली लग रही थी। मैं पैदल चलते हुए सोसायटी के गेट से बाईं ओर कागादास रोड की ओर मुड़ गया। मुझे इधर अधिक धूप मिलने की संभावना लग रही थी। घूमने के लिए मैं किसी भी रोड पर निकल पड़ता।

फुटपाथ पर कुछ आगे बढ़ा तो सामने से एक मुसलिम युवती काला बुरका पहने आ रही थी। उसने बच्चे का हाथ पकड़ रखा था। वे

दोनों माँ-बेटे ही होंगे। बच्चे ने सफेद रंग की नेकर पर सफेद रंग का हाफ आस्तीन का शर्ट पहन रखा था। बच्चा बहुत सलोना लग रहा था। उसे उसकी मम्मी लगभग खींचकर लिये जा रही थी, पर बच्चे का ध्यान तो कहीं और था। वह इधर-उधर देखे जा रहा था। उसके चलने और देखने में कोई सामंजस्य नहीं था। माँ उसे आगे चला रही थी, पर बाजार देखने का मोह उससे छूट नहीं पा रहा था। उसे देख मुझे अपना बचपन याद आ गया। मैं ऐसे ही देखने के चक्कर में मेले में गुम हो चुका था। मुझसे माँ का हाथ छूट गया था। फिर मेरे नाम का एनाउंस हुआ था। खिली हुई धूप में दो रंग थे एक काला और दूसरा सफेद। मैं उन्हें देख निहाल हो गया। काला अतीत का रंग था और सफेद भविष्य का। अतीत पर भविष्य की जिम्मेदारी थी। उसे भविष्य को बचाते हुए मंजिल तक ले जाना था।

चौदह फरवरी वेलेंटाइन डे की सुबह सर सी.वी. रमन बस स्टाप पर एक अजनबी युवक अनिरुद्ध वरखेड़े से परिचय हुआ। वह बस स्टैंड पर बैठकर कॉलेज जाने के लिए अपनी बस का इंतजार कर रहा था। मुझे सुखद आश्चर्य हुआ कि उसने ग्रैजुएशन में एक विषय मनोविज्ञान भी ले रखा था। वैसे मनोविज्ञान विषय कम ही विद्यार्थी लेते हैं। वह बढ़िया हिंदी बोल रहा था, जबकि वह वहीं का निवासी था और उसका परिवार हिंदीभाषी नहीं था। अच्छी हिंदी का कारण पूछने पर बताया कि वह केंद्रीय विद्यालय में पढ़ा है और वहाँ उसके स्कूल के कई दोस्त हिंदीभाषी थे। उन्हीं के साथ रहकर वह बढ़िया हिंदी बोलना सीख गया था। वैसे स्कूल में एक भाषा हिंदी थी ही।

उस दिन घूमकर जब फ्लैट पर वापस आया तो टी.वी. पर आतंकवादी हमले की खबरें चल रही थीं। पुलवामा में जम्मू-कश्मीर में हाईवे पर बड़ा आतंकी हमला हुआ था। इसे उड़ी से बड़ा हमला माना जा रहा था। तब उन्नीस जवान शहीद हुए थे और अब इस हमले में सी.आर.पी.एफ. के उनतालीस से अधिक जवान शहीद हुए। बस में इकतालीस जवान सवार थे। स्कारपीओ में करीब तीन सौ किलोग्राम विस्फोटक बताया जा रहा था। स्कीरपीओ जवानों की बस से टकराई थी। वेलेंटाइन डे के माथे पर इस आतंकी हमले का कलंक चिपक चुका था।

पंद्रह फरवरी की सुबह मैंने गौर किया कि मैं सोसायटी के गेट से घूमने के लिए जब दाहिनी ओर मुड़ता हूँ, तब चार कदम की दूरी पर ही बैठा हुआ एक बीमार कुत्ता डी.आर.डी.ओ. की कॉलोनी की बाउंड्री से सटे फुटपाथ पर मिल जाता है। एक बार भी ऐसा नहीं हुआ कि सुबह मैंने उसे वहाँ बैठा हुआ न पाया हो। कुत्ते का रंग भूरा था, जिस पर काली चित्तियाँ पड़ी हुई थीं। मैंने उसे भूरिया नाम दे दिया था। वह अपना मुँह टाँगों के बीच डाले दीन-हीन सिकुड़ी हुई मुद्रा में बैठा रहता था। वह कुछ दिनों का ही मेहमान लग रहा था। उसका बदन काँपता रहता था। उसकी जबान बाहर निकली हुई रहती थी। उसकी आँखों में दर्द और पसरी हुई उदासी को आसानी से पढ़ा जा सकता था।

उस दिन आखिर सँकरी और घुमावदार गलियों को पार करता हुआ मैं उस जगह पर पहुँच गया, जिसे नीचे की ओर हम आठवीं मंजिल की बालकनी से उत्सुकता देखा करते थे। मन में उस जगह पर पहुँचकर ऊपर बालकनी और फ्लैट को देखने की मेरी इच्छा बलवती थी। मुझे वहाँ पहुँचने में करीब आधा या पौन घंटा लगा होगा। पर वहाँ पहुँचकर मुझे किसी बच्चे जैसी खुशी महसूस हुई। मुझे लगा, अभी मेरे भीतर एक बच्चा जिंदा है, जिसे नई जगह देखकर खुशी होती है। मैंने सोसायटी की बाउंड्री से बाहर ऊपर नजरें उठाकर बी ब्लॉक की बहुमंजिला इमारत में अपने फ्लैट की बालकनी को ढूँढ़ मोबाइल के कैमरे से तड़ातड़ तीन-चार फोटो ले लिये। मैं वहाँ कब से पहुँचना चाहता था। ऊपर फ्लैट की बालकनी से नीचे बाउंड्री के पार की इमारतें और जमीन का एक खाली टुकड़ा तो दिखता था, पर उधर पहुँचने का कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा था। नीचे सोसायटी की बाउंड्री इतनी ऊँची थी कि वहाँ से उस पार देखना संभव नहीं था और उसे पार करना भी। फ्लैट की बालकनी से रोज नीचे की ओर हम अचरज से देखा करते थे। यहाँ हम से आशय मैं और जीवनसंगिनी सुलभा से है।

नीचे सोसायटी के उसी तरफ बाहर जमीन का बड़ा-सा टुकड़ा खाली था, जबकि आसपास एक-दूसरे से सटे चार-चार, पाँच-पाँच मंजिला मकान खड़े थे। उस खाली टुकड़े पर एक कोने में नींव खुदते देख अचरज हो रहा था। क्योंकि अब तो मकान बीम-कालम से बनते हैं, नींव वाले नहीं। वह अब पुराने जमाने की बात हो गई है। वहाँ एक छोटा-सा मकान आकार ले रहा था। उसकी दीवारें ईंटों की बजाय ब्लॉक्स से बन रही थीं। देखते-देखते उस मकान की दीवारें खड़ी हो गई थीं। मकान की ड्राइंग बहुत सरल थी—दो छोटे-छोटे कमरे और उसको जोड़नेवाला एक गलियारा। ऊपर पतरे भी चढ़ने लगे थे। इसी दौरान ऊपर मुँड़ेर पर पतरे रखते-रखते कारीगर नीचे गिर गया। हम धक्क रह गए। कुछ ही समय बाद जब फिर वही कारीगर ऊपर आकर के काम करने लगा, तब कहीं जाकर राहत मिली। शायद उसे कोई खास चोट नहीं आई थी।

हमारे ब्लॉक की यह इमारत चौदह फ्लोर की है और पूरी सोसायटी में ऐसे आठ ब्लॉक हैं, जिसमें सात सौ पचास फ्लैट हैं। यहाँ काम करनेवाली बाइयाँ ही एक सौ साठ हैं। अभी तो पूरे फ्लैट भरे भी नहीं हैं। आसपास की ऊँची इमारतों के बीच एक वह छोटा-सा सिर्फ दो कमरोंवाला एक मकान का आकार लेने की हिमाकत कर रहा था।

उसकी यह हिमाकत अच्छी लग रही थी।

सोलह फरवरी की सुबह मैंने वरथुर रोड पकड़ा। मैं उस पर आगे बढ़ता जा रहा था। यह सँकरा रोड कोई दो किलोमीटर के बाद खत्म हो गया था। इस रोड को आड़ा काटते हुए एक फोर या फोर से भी अधिक लेनवाली व्यस्त सड़क थी। ऐन सुबह ही उस सड़क पर तेज आवागमन का ऐसा शोर था कि लग रहा था कि जैसे कोई नदी बाढ़ से उफनती हुई चली जा रही हो। दिन में तो यह शोर और अधिक होता होगा। मैं वरथुर रोड के उसी मुहाने से वापस लौटने लगा। रास्ते में मैंने ड्राइविंग सिखानेवाली कई कारों को आते-जाते देखा।

सत्रह को रविवार था। रविवार का दिन मेरे लिए खास होता है। कुछ अच्छा-सा लगता है। इसी दिन अखबार में कहानी-कविताओं और रोचक लेखों से युक्त रविवारीय पृष्ठ आते हैं। बुक स्टाल पर रखी पत्र-पत्रिकाओं को मैं खड़ा रहकर गौर से देखता हूँ। मुझे बुक स्टाल पर सिवाय 'राजस्थान पत्रिका' के हिंदी का कोई अखबार नजर नहीं आया। बाकी के सारे अखबार और पत्रिकाएँ अंग्रेजी, कन्नड़, तमिल, तेलुगु और मलयालम भाषा के थे। बेटा विनय इंडियन एक्सप्रेस मँगवाता था। 'राजस्थान पत्रिका' पहले ही खासतौर से मेरे लिए विनय ने लगवा दिया था।

डी.आर.डी.ओ. के गेट से घुसकर केंद्रीय विद्यालय के गेट से निकला। फुटपाथ पर दीवार से सटा मेरा परिचित मरियल-सा कुत्ता भूरिया आगे की टाँगों के बीच अपना सिर टिकाए हुए बैठा था। वह रह-रहकर काँप जाता था। जैसे उसे हिचकी चल रही हो। आगे का रास्ता दो सड़कों में फट जाता है। मैं वर्थुर रोड छोड़कर सीधे बैंगनाहल्ली बस स्टॉप की ओर बढ़ जाता हूँ। रास्ते में कई दुकानें हैं। कुछ दुकानों में खाल उधड़े मुरगे और बकरे बिकने के लिए लटके हैं। बस स्टॉप पर तीन-चार आबनूसी रंग की औरतें रंगीन फूल-मालाओं को करीने से पल्ली पर सजाए बैठी थीं। वापस लौटकर मैं गेट नंबर तीन से अंदर घुसा। भीतर एक ऐसा बड़े-बड़े हरे पत्तोंवाला पेड़ था, जिसके पत्ते लाल होकर झड़ रहे थे। नीचे लाल पत्तों की एक चादर-सी बिछी थी।

शाम को सोसायटी वाकिंग ट्रेक पर एक कटे बालोंवाली लड़की बुची नाक, काले मुँह, छोटे पाँव और छोटी ही पूँछवाले कुत्ते को जंजीर से बँधे घूम रही थी। उसे देख सहसा कब्बन पार्क में देखी एक सुनहरे रंग की विदेशी युवती की याद हो आई, जिसका जूड़ा शंकर भगवान् की जटाओं जैसा बँधा था। बड़भागी बूची नाकवाले कुत्ते को देख भूरिया के भाग पर मन-ही-मन तरस आया।

अठारह फरवरी को डी.आर.डी.ओ. के गेट नंबर पाँच से घुसकर केंद्रीय विद्यालय के पासवाले गेट से निकल फिर दाहिनी ओर आगे बढ़ा। मुझे दाढ़ी सेट करवानी थी। इधर मैंने सैलून की चार-पाँच दुकानें देखी थीं। एक सैलूनवाले ने दाढ़ी की सेटिंग के लिए फिफ्टी रुपीज बताए। मैं आगे बढ़ा। अगला सैलूनवाला खाली भी था।

मैंने विनोद कुमार से दाढ़ी सेट करवाई। उससे कुछ बातचीत भी हुई। वह कन्नड़ में बोल रहा था। सबकुछ समझ में तो नहीं आ रहा था, पर कुछ-कुछ समझ रहा था। उसने बताया कि वह अपनी दुकान का किराया ६००० रुपए देता है। दाढ़ी सेट करवाने के बाद जब मैं उसे पैसे देने लगा तो पैसे न लेते हुए वह बार-बार 'राईटऽ-राईटऽ' कह रहा था। पहले तो मैं समझ नहीं पाया। कहीं अधिक पैसे तो नहीं माँग रहा। वैसे पहले ही पूछ लिया था, चालीस ही तो बताया था। वह मेरे दाएँ हाथ की ओर इशारा कर रहा था। आखिर में मुझे समझ में आ गया कि वह दाएँ हाथ से पैसे देने का कह रहा है। मैं उसे बाएँ हाथ से पैसे देने की कोशिश कर था। उसके लिए राइट ही राइट था और मेरे लिए राइट लेफ्ट दोनों बराबर थे।

उन्नीस फरवरी को मैं अखबार देख रहा था। इंडियन एक्सप्रेस में बेंगलुरु में मधुमक्खियों की समस्या पर विस्तार से लिखा था। मधुमक्खियों की समस्या को लेकर बी.बी.एम.पी. को पंद्रह-बीस शिकायतें रोज मिल रही थीं। बी.बी.एम.पी. समय पर सबकी मदद नहीं कर पा रही थी। लोग निजी तौर पर आदिवासियों को १००० रुपए तक देकर अपने निवास से मधुक्खियाँ हटवा रहे थे। मनुष्य बहुत खुदगर्ज है। उसने-अपने घर बनाने के लिए पशु-पक्षियों के घर उजाड़ दिए हैं। अब मूक पशु-पक्षी और ये मधुमक्खियाँ जाएँ तो जाएँ कहाँ। वहाँ सोसायटी में भी मधुमक्खियों का प्रकोप था। घूमते हुए मैंने एकाध जगह पर मरी हुई मधुमक्खियों के ढेर देखे।

बीस फरवरी को सोसायटी में ही बाहर तीन-चार राउंड लगा आया, आगे नहीं गया, क्योंकि ९ बजे तो मुझे तैयार होकर कैब से एअरपोर्ट निकलना था। अकसर उस ब्लाक के गार्ड से बात हो जाती थी। गार्ड उन्नीस-बीस साल का लड़का ही था। वह नॉर्थ-ईस्ट असम से था। वहाँ अधिकतर गार्ड नॉर्थ-ईस्ट के ही थे। लड़के ने बताया कि उसका भाई उसे यहाँ लाया था। हैंडीमेन कंपनी ने उसे यहाँ गार्ड का काम दिया है। उसकी नीली वर्दी पर कंपनी का मोनो लगा रहता था। वह चार साल से घर नहीं गया था। बता रहा था कि यहाँ रात को मच्छर बहुत काटते हैं।

नौ बजे के करीब टैक्सी में बैठा। चुपचाप बैठने की बजाय मैंने टैक्सी ड्राइवर से बात करने की सोची। जानने की इच्छा हुई कि बेंगलुरु एअरपोर्ट के नाम के साथ केंपेगौड़ा क्यों जुड़ा है। केंपेगौड़ा आखिर कौन हैं? टैक्सी ड्राइवर कृष्णा ने बताया कि कोई पाँच सौ साल पहले केंपेगौड़ा ने बेंगलुरु को बसाया था। उन्हीं के नाम पर स्टेशन का बेंगलुरु के हवाईअड्डे का नाम केंपेगौड़ा अंतरराष्ट्रीय हवाईअड्डा पड़ा।

अंत में डॉ. हंसा दीप का जिक्र जरूरी है, जिनके कारण यह यात्रा-संस्मरण संभव हुआ। जब हंसाजी को पता लगा कि मैं बेंगलुरु में हूँ तो उन्होंने लिखा कि बेंगलुरु एक खूबसूरत शहर है। यहाँ की जलवायु बहुत अच्छी है। इतने अच्छे शहर में हो तो एक यात्रा-संस्मरण तो बनता है। यह संस्मरण उसी आग्रह का परिणाम है। उनका बहुत-बहुत धन्यवाद।

सा.अ.

राधारमण कॉलोनी, मनावर-४५४४४६,
जिला-धार (म.प्र.)
दूरभाष : ९८९३०१०४३९

बाल-गीत

बाल अंत्याक्षरी गीत

• होड़िल सिंह 'मधुर'

सुपरिचित कवि-लेखक। कई उपन्यास, बाल-साहित्य की कई पुस्तकें एवं अध्यात्म पर एक-दो काव्य पुस्तकें प्रकाशनाधीन एवं हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। अध्यापक पद से सेवा-निवृत्त होकर अब साहित्य-सेवा में संलग्न।

एक समय में खेलना और पढ़ने का काम।
खेल कभी रुकता नहीं, कविता पढ़ें तमाम॥

मन से अगर पढ़ेंगे तो हम, आगे बढ़ते जाएँगे।
डॉक्टर, इंजीनियर, प्रशिक्षक या सैनिक बन जाएँगे॥

गंगा, गौ, गायत्री, गीता और गुरु की सेवा करना।
ये सब कार्य भलाई के हैं, इनसे कभी नहीं है डरना॥

नहीं करेंगे काम कि जिससे, अपना नाम कलंकित हो।
भारत माँ को रहें समर्पित, नाम स्वर्णाक्षरांकित हो॥

होड़िल सिंह 'मधुर' कविता लिख, सबको सन्मार्ग बताता चल।
नेक बनो और एक रहो, मत करो किसी से तुम छलबल॥

लड़की, लड़का सभी बराबर, यह रुझान अपनाएँ अगर।
कन्या भ्रूण-हत्या करने से पहले सोच लें मगर॥

रुक जाएगा उत्पीड़न नारी का कुछ सीमा तक तब।
लड़का-लड़की रहें बराबर भेद खतम हो जाए जब॥

बेटी क्यों अभिशाप बनी है, इसका मतलब जानो जी।
सुता-पिता ही शादी में, सब खर्च करे यह मानो जी॥

जीवन भर की सारी पूँजी, दानव दहेज की भेंट चढ़े।
बहना का भाई फिर कैसे, पढ़े-लिखे आगे को बढ़े॥

ढेर सा कर्ज बैंक से लेकर, शादी में है खर्च किया।
रोती कहती घर घरवाली, परदेशों को जाओ पिया॥

यदि दानव दहेज समाज में, रोके से भी नहीं रुका।
भ्रूण-हत्या नहीं रुके या शीश शर्म से रहा झुका॥

कल का काम आज ही कर लो, आगे कदम बढ़ा ऐसे।
लापरवाही-आलस से ही, बिगड़े काम बने जैसे॥

सेवा मात-पिता की करना, सबसे बढ़िया गीत।
रहें संगठित सभी कुटुंब में, माँ पितु भाई मीत॥

तुम सब जब जहाँ भी मुँह खोलो, मीठी वाणी बोलो भाई।
मृदु भाषण से आदर मिलता, सबसे बढ़िया नेक कमाई॥

आदमी बनाया श्रेष्ठ जीव, बुद्धिमान, ज्ञान समयानुरूप।
इसलिए सृष्टि में राज करे, सब जीवों पर बन करके भूप॥

पढ़ा-लिखा इनसान अगर हो, उसको कहीं न कुछ दुर्लभ।
अनहोनी को होनी कर दे, मार्ग होता सभी सुलभ॥

भार चहे कितना हो सिर पर, भूल न जाना कर्तब पथ।
रहो समर्पित सदा देश को, त्याग न देना संत का पथ॥

थलचर, जलचर, नभचर और उभयचर होते सारे प्राणी।
अलग-अलग तन और बनावट, होती अलग सभी की वाणी॥

ण, ञ और ङ में क्रमशः भूल करें पढ़ने में बच्चे।
समझाने पर समझ भी जाते, होते हैं तन-मन के सच्चे॥

चली जा रही संस्कृति, और नैतिकता तंत्र।
बैठा जग बारूद पर, गढ़े भयानक यंत्र॥

त्रिकालजयी विरला कोई, तन को राखे साधि।
योगी वह कहलाए नर, तन-मन लगे न व्याधि॥

धन-बल, जन-बल, बुद्धि हूँ, होइ न मृदु उपदेश।
तो सब ही बेकार हैं, क्या घर, क्या परदेश॥

श्वेत रंग बक मूँदि दृग, भजन करे नित दुष्ट।
मीन पकरि ऊपर झटकि, गटक जाए वह झट्ट॥

टाल-मटोल न करि 'मधुर', समय न कर बरबाद।
समय चूक से बच गया, रहो सदा आबाद॥

दवा मिले यदि रोग की, मन आवे संतोष।
रोग जाई तन सों 'मधुर' तन को खूब प्रपोष॥

षट ऐश्वर्य प्रधान जो, वह महान कहलाइ।
आदर मिले समाज में, 'मधुर' सदा हरषाइ॥

इधर-उधर और व्यर्थ की, बातों से जावे साख।
लकड़ी जलि दे ऊष्मा, फिर हो जावे राख॥

खड़ा-खड़ा क्या देखता, नहिं आता तो पूछ।
अंत्याक्षरी में जीतने, आया ताने मूँछ॥

छदाम हाथ में है नहीं, आया लेने झाँझ।
घूमता फिरे बाजार में, सुबह से हो गई साँझ॥

झाड़ू बँधकर सूत्र में, करता घर को साफ।
खुल जाए कूड़ा बने, फिंकता होई न माफ॥

फल खाओ चाहे कभी, फागुन हो या माघ।
रोग भगे तन पुष्ट हो, सुझा गए कवि घाघ॥

घर-आँगन और खेत में, खूब लगाओ पेड़।
प्रदूषण सब दूरि कर, अपनी राखें मेंड़॥

डाँट-डपट से बाल-मन, हो जाता है ठूँठ।
प्रीति सहित समझाइए, 'मधुर' न बोले झूठ॥

ठग, लंपट, झूठा कबहुँ, 'मधुर' लेहु मति देउ।
बचके रहिए सदा ही, कहो न जीउ को भेउ॥

उत्तम सुत जाने सदा, मात-पिता मन भाव।
सेवा में तत्पर रहे, करे न कभी दुराव॥

वेद, शास्त्र सबका कहना है, सत्पथ धर्म निभाओ।
जहाँ जैसा भी कर्म करोगे, वैसा ही फल पाओ॥

ओला ठोस पदार्थ, गले तब द्रव बन जाए।
द्रव को मिलता ताप, शीघ्र वह गैस कहाए॥

ऐसे पानी जानिए, तीनों रूप प्रत्यक्ष।
ठोस अडिग, द्रव बह गया, गैस से भरता कक्ष॥

क्षात्र धर्म निर्वहन कर, जग में नाम कमाओ।
शेखर, भगत, हमीद हू, नाम अमर पद पाओ॥

औरत माता-बहन है, और सुता सर्वज्ञ।
नारी जब पत्नी बिना, पूर्ण होइ नहिं यज्ञ॥

ज्ञानी जन और संत सुभाऊ।
सुख बाँटें दुख देहिं न काऊ॥

ऊधम सिंह क्रांतिकारी की, भारत को बहुत जरूरत है।
खट्टे दाँत करो दुश्मन के, देखो नहीं मुहूरत है॥

अंत्याक्षरी यह गीत लिख, 'मधुर' मनहि हर्षाए।
जहाँ जैसी जो भूल हो, विद्वज्जन कहें सुझाए॥

गाँव-मुहम्मदपुर, डाकघर-ढोलना
जनपद-कासगंज (उ.प्र.)
दूरभाष : ९५६८८९५२२१

बाल-कविता

नाक

• वंदना मुकेश

कुछ के नथुने उठे हुए
कुछ की धार नुकीली,
कुछ नौका से तने हुए
तो कुछ की काट कठीली।

किसी-किसी की मालपुए-सी
किसी की नरम पकौड़ी,
तीखी नाक सभी कहते पर
कोई न कहता मीठी।

रूठ गए तो नाक चढ़ा ली
ना माने तो नाक कटा दी,
मान गए तो रख ली नाक
और जमा ली सब पर धाक।

नापसंद कर नाक में दम
नाक फुलाकर बैठी जिज्जी,
नाक रगड़ ली कितनी फिर भी
नाराजी रहती हरदम।

कोई घोर आलसी इतना
नहीं उड़ाता नाक की मक्खी,
कोई इतना सजग चतुर
न बैठन दे मक्खी।

बड़ी किसी की, किसी की छोटी
किसी की पतली किसी की मोटी,
और किसी ने अति क्रोध में
ली काट नाक औ चोटी।

नाक कटी पर घी तो चाटा
निर्लज्जों का मान कहाँ था,
खूब सिकोड़ी नाक-भौं फिर भी
रही नाक के बाल-सी यारी।

नाक पर इन मुहावरों ने
किया नाक में मेरे दम,
नाक रगड़कर शिक्षक जी
से नाक लगाती मैं हरदम।

vandanamsharma@hotmail.co.uk
दूरभाष : 00447886777418

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' के सितंबर अंक का संपादकीय बहुत अच्छा व सारगर्भित लगा। प्रतिस्मृति में 'काऊ बेल्ट की उपकथा' पढ़कर धर्मवीर भारती और धर्मयुग की याद आ गई। भारतीय परिवेश, संस्कृति को बढ़ावा देती 'साहित्य अमृत' पत्रिका वास्तव में लाजवाब है। सितंबर अंक में राष्ट्रभाषा हिंदी से संबंधित कम-से-कम चार-पाँच आलेख तो अवश्य होने चाहिए थे। पत्रिका की प्रगति, प्रतिष्ठा की शुभकामनाएँ।

—विजयपाल सेहलंगिया, महेंद्रगढ (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' के अक्तूबर अंक के संपादकीय में 'दादाभाई नौरोजी कौन थे' पर जानकारी, पत्रिकाओं पर चर्चा, राजनीति पर चर्चा और धारा ३७० के हटाए जाने पर चर्चा हमें खूब पसंद आई। लेख 'ब्रह्मचर्य' भी हमें खूब पसंद आया। 'दीपक तेरे कितने रूप', 'दीर्घायु देनेवाला करवाचौथ व्रत' बहुत रुचिकर लगे। कहानी 'मास्टर किशोरी लाल' और बाल-कहानी 'झिलमिल दीपावली' बेहद दिलचस्प लगीं। मुखपृष्ठ खूब प्यारा लगा।

—बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान', गोरखपुर

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक समय पर मिला। सभी रचनाएँ ऊँचे स्तर की हैं। रामदरश मिश्र कृत 'तुम्हारी माँ कहाँ है ?' को आज के समय का वीभत्स सत्य कहना गलत न होगा। अंग्रेजी को मेधा का पर्याय मानना, झूठ और न्यस्त स्वार्थ वाले वर्गों का कुत्सित षड्यंत्र ही अब तक रहा है। इस मानसिक गुलामी से विकास अवरुद्ध हो रहा है। काफी लंबे अंतराल के बाद ऋता शुक्लजी की रचना का पठन हुआ; परिपक्व भाषा और वाक्यों का लंबा आकार पाठकों को विवश कर देता है कि वे इस कहानी का पुनर्पाठन करें। गिरिराजजी की रचना 'युद्ध कब रुकता है' बहुत सुंदर एवं सामयिक वातावरण के अनुकूल लगी।

—बी.डी. बजाज, दिल्ली

'साहित्य अमृत' के अक्तूबर अंक में श्री रामदरश मिश्र की कहानी 'तुम्हारी माँ कहाँ है' में हिंदी की उपेक्षा का सुंदर वर्णन किया है। रेखा लोढ़ा स्मित की कहानी 'मास्टर किशोरी लाल' में भी आज के हालात का वर्णन किया है कि घर का मुखिया सारी जिंदगी घर-परिवार, पत्नी, बेटे-बेटी के लिए करता हुआ मरने को मजबूर हो जाता है। परिवार का कोई भी सदस्य उसके अंदर के दर्द को, मर्म को, संवेदना को समझने की कोशिश नहीं करता; केवल अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर उससे रिश्ता रखते हैं। इसके लिए वे साधुवाद की हकदार हैं। 'कंप्यूटर के सामने बैठा आदमी' तथा 'अब अभिमन्यु नहीं मरेगा' लता कादंबरी की दोनों लघुकथाएँ अच्छी हैं। 'साहित्य अमृत' पत्रिका इन्हीं कहानियों, कविताओं तथा लेखों के दम पर हिंदी साहित्य में अपना एक विशेष स्थान रखती है।

—ब्रजमोहन जैन, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक हर उपयुक्त सामग्री से परिपूर्ण लगा। शिवानंद सिंह सहयोगीजी की बाल कविताएँ बच्चों का अच्छा मनोरंजन करनेवाली हैं। लेखक बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान' का आलेख 'भारत में विदेशी हिंदी रेडियो प्रसारण' में विस्तृत एवं अज्ञात जानकारियों से अवगत कराना लेखक की लेखन-क्षमता प्रदर्शित करती है। लघुकथाएँ भी ठीक लगीं। संस्मरण 'मेरे उत्प्रेरक मास्साब' ने मेरे भी अपने अतीत के शिक्षा अध्ययन समय के अध्यापकों के गुणों को ताजा कर दिया। सच में संस्मरण के लेखक प्रेमपाल शर्मा ने पहली कक्षा से आठवीं कक्षा तक के श्रेष्ठ अध्यापकों की प्रकृति एवं व्यवहार का वर्णन किया है, जो वर्तमान के पाठकों एवं अध्यापकों के चरित्र में अच्छा परिवर्तन लाएगा।

—कुलभूषण सोनी, दिल्ली

सबसे प्यारी, सबसे न्यारी, 'साहित्य अमृत' पत्रिका हमारी।
इसका हर अंक लाजवाब, जैसे हो फूलों में गुलाब।
एक-एक स्तंभ कहे कहानी, सुनो आज मेरी जुबानी।
संपादकीय में ज्वलंत मुद्दे, विषय नहीं होते बेहूदे।

गीत, दोहे, गजल, कविता, ज्ञानगंगा की बहाएँ सरिता।
ललित-निबंध, यात्रा-वृत्तांत, जीवन के दो असली दृष्टांत।
पत्नी लक्ष्मी ने भी मानी, सुंदर इसकी हर कहानी।
बाल-संसार व वर्ग पहेली, बेटी खुशी के बने सहेली।

साहित्य का विश्व परिपार्श्व, पठनीय, सराहनीय और ऊर्ध्व।
आलेख तो हैं इसकी जान, पढ़कर मिलता इनसे ज्ञान।
'राम झरोखे···' में गोपाल, करते हैं क्या खूब कमाल।
पाठकों की प्रतिक्रियाएँ, लोकप्रियता से रूबरू करवाएँ।

—ब्रह्मानंद खिच्ची, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' के अक्तूबर अंक के संपादकीय में 'दादाभाई नौरोजी कौन' के विषय में जानकारियाँ मिलीं। मोदीजी के सौ दिन में उनके कार्यों का उल्लेख है। गांधीजी द्वारा लिखित ब्रह्मचर्य लेख तथा गांधीजी पर 'महात्मा गांधी को समझें' में लेखक ने समझाने का कार्य किया है उनके कार्यों को, आदेश को, उनकी महानता को। एक पृष्ठ पर गांधीजी को कार्टूनों में दिखाया है। यह गांधीजी को अच्छी श्रद्धांजलि है। आलेख 'दुर्गापूजा की एक आनंदमयी प्रथा : सिंदूर खेला' में दुर्गाजी को दशहरे पर विदा करते समय सिंदूर से पूजा व लोग एक-दूसरे को लगाकर विसर्जन करते हैं। 'दीर्घायु देनेवाला करवाचौथ व्रत' में श्रीमती सविता पांडेय ने कुछ नई जानकारी दी है। 'ज्योति पर्व दीपावली' में श्री दादूराम शर्मा ने समझाया है लक्ष्मीजी का वाहन गरुड़ है। संस्मरण में दीये के बहाने दीपावली की प्रथा का वर्णन है। 'राजमाता से लोकमाता तक' में ग्वालियर की महारानी को उनकी जन्मशती पर याद किया है। गोपाल चतुर्वेदी के व्यंग्य नए होते हैं, 'कॉफी हाउस की बहस और कट मनी' इसमें भी वही देश में भ्रष्टाचार कहाँ तक लोगों के खून में दरशाया है। श्री अश्विनी कुमार ने व्यंग्य 'पाठ्यक्रम में रचनाओं का चयन' में बहुत कटु सत्य लिखा है।

—विनोद शंकर गुप्त, हिसार

वर्ग पहेली (१७०)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ नवंबर, २०१९ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते जनवरी २०२० अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली**', **साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१६८) का शुद्ध हल

१ मु	शा	२ य	३ रा	■	४ द	५ म	क	६ ल
ज	■	७ दु	ख	दा	य	क	■	गा
८ रि	९ सा	व	■	■	१० नी	र	११ व	ता
१२ म	ह	र	म	■	य	■	१३ शी	र
■	ब	■	■	■	■	■	क	■
१४ स	जा	■	१५ का	■	१६ बे	१७ प	र	१८ दा
१९ हि	दा	२० य	त	■	■	२१ र	ण	न
ष्णु	■	२२ व	र	ग	२३ ला	ना	■	दी
२४ ता	ली	न	ता	■	२५ ज	ना	चा	र

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री सत्यप्रकाश सिंह 'बनाफर'**
म.नं. २३२/३/ए, वार्ड नं. २९
पोड़ी बहार, कोरबा (छ.ग.)
दूरभाष : ९९८१४४१५४०

२. **श्री बी.डी. बजाज**
ए-८३, गुजरांवाला टाउन
देहली-११०००९
दूरभाष : ९८९९२६३०३०

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १६८ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं— सर्वश्री देवाशीष, अंकिता, ब्रह्मानंद 'खिच्ची' (महेंद्रगढ़), विजयपाल सेहलंगिया (सेहलंग), गिरधारीलाल अग्रवाल (पुसद), रुक्मणी संगल (पटियाला), अलकेश्वरी गौतम (अर्की), अनुपमा वशिष्ठ (परवाणु), जगदीश राम गर्ग (मानसा), मोहन उपाध्याय (अजमेर), विनीता सहल (मुंबई), वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), सरला लोढ़ा (उदयपुर), सतीश जोशी (रतलाम), दिनकर सहल, सुभाष शर्मा, रत्ना वार्ष्णेय, प्रमोद कुमार (दिल्ली)।

बाएँ से दाएँ—

१. खेद, दुःख (४)
४. अत्यंत अप्रिय एवं कटुभाषी, विषयुक्त (४)
७. ऋण, उधार (७)
८. अनाज आदि की पैदावार (३)
१०. राजा का मुकुट (२)
११. लिखा हुआ बयान, शपथपत्र (५)
१३. चिंतायुक्त होने की अवस्था (३)
१५. चाह, इच्छा (३)
१७. जो सही या ठीक न हो, अनुचित (३)
१८. अनुकरण (३)
१९. आड़ करने के लिए लटकाया हुआ कपड़ा (३)
२१. धन, संपत्ति, दौलत (३)
२३. किसी के अधीन होना (२,३)
२६. कम गति वाला (२)
२८. वाद्ययंत्र को बजाने वाला (३)
२९. प्राणों के समान परम प्रिय (२)
३०. स्नान कराना (४)
३१. वह व्यक्ति, जो कूटनीतिक संबंध स्थापित करने के लिए भेजा जाता है (४)

ऊपर से नीचे—

१. एकदम से, एकाएक (४)
२. कर्तव्य (२)
३. जिसने उद्देश्य सिद्ध कर लिया हो (३)
४. आग प्रज्वलित होना (३)
५. खाली (२)
६. जिसकी किसी से तुलना न हो सके (४)
९. यात्रा करना (३)
११. सेना का एक छोटा अधिकारी (५)
१२. हराना (२,३)
१४. नगरवासी, नागरिक (३)
१६. तीव्र इच्छा, चाहत (३)
१९. ओट, आड़ (३)
२०. तादाद की गिनती (३)
२२. चुना हुआ (४)
२४. किसी को गाने की क्रिया में प्रवृत्त कराना (३)
२५. एक छोटा नर चौपाया (३)
२७. महीना (२)
२९. हाथ की सफाई (२)

वर्ग पहेली (१७०)

१	२		३	■	४		५	६
७		■	८	९		■	१०	
	■	११				१२	■	
१३	१४		■		■	१५	१६	
■	१७			■	१८			■
१९			■	२०	■	२१		२२
	■	२३	२४		२५		■	
२६	२७	■	२८			■	२९	
३०				■	३१			

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

वर्ग पहेली (१६९) का हल अगले अंक में।

'भारत कैसे हुआ मोदीमय' पुस्तक लोकार्पित

५ अक्तूबर को नई दिल्ली के डॉ. आंबेडकर इंटरनेशनल सेंटर में वरिष्ठ पत्रकार श्री संतोष कुमार द्वारा लिखित एवं प्रभात प्रकाशन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'भारत कैसे हुआ मोदीमय' का लोकार्पण भाजपा के राष्ट्रीय महासचिव श्री राम माधव के करकमलों से प्रख्यात पत्रकार व इंडिया टी.वी. के एडिटर-इन-चीफ श्री रजत शर्मा के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ। इस अवसर पर श्री राम माधव ने कहा कि भाजपा की जीत में पीएम मोदी के करिश्मे के साथ सरकार के प्रदर्शन व संघ परिवार की अहम भूमिका रही। पाँच साल में मोदी सरकार ने ५३० योजनाएँ शुरू कीं, जिनके २३ करोड़ लाभार्थी बने। श्री रजत शर्मा ने चुनाव के दौरान अपने एक इंटरव्यू का हवाला देते हुए कहा कि नरेंद्र मोदी ने कहा था कि मैं इधर जा रहा था तो कांग्रेस उधर फायरिंग कर रही थी। लेखक श्री संतोष कुमार ने कहा कि भाजपा की २०१९ की जीत पुलवामा बालाकोट का नतीजा नहीं थी, बल्कि यह पार्टी के पाँच साल के महामंथन का नतीजा थी। पार्टी माइक्रो नहीं, बल्कि नैनो स्ट्रेटेजी से काम करती है। □

'जयप्रकाश तुम लौट आओ' कृति लोकार्पित

१२ अक्तूबर को पटना के राजभवन दरबार हॉल में आयोजित कार्यक्रम में बिहार के माननीय राज्यपाल श्री फागू चौहान ने प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती ममता मेहरोत्रा की पुस्तक 'जयप्रकाश तुम लौट आओ' को लोकार्पित किया। माननीय राज्यपाल ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि जयप्रकाशजी तब स्वत: लौट आएँगे, जब उनके विचारों और दर्शन को हम अपने भीतर उतार लेंगे; तब वे जीवंत हो उठेंगे। □

गोपालराम गहमरी की पुस्तक लोकार्पित

१२ अक्तूबर को राँची में प्रभात प्रकाशन के सभागार में श्री संजय कृष्ण द्वारा संपादित एवं प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'गोपालराम गहमरी की जासूसी कहानियाँ' का लोकार्पण संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि वरिष्ठ पत्रकार श्री बलबीर दत्त ने कहा कि भूली-बिसरी पुस्तकों को फिर से प्रकाशन करना बेहतर काम है। नई युवा पीढ़ी को इससे नई जानकारियाँ मिलेंगी। सर्वश्री अशोक प्रियदर्शी, पंकज मित्र, अरुण कुमार और पी.के. झा ने भी अपने विचार रखे। संचालन श्री हरेंद्र सिन्हा ने किया। □

'संविधान' पर दो पुस्तकें लोकार्पित

११ अक्तूबर को नई दिल्ली के इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के कलानिधि विभाग तथा एकात्म मानवदर्शन एवं विकास प्रतिष्ठान के संयुक्त तत्त्वावधान में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के प्रेक्षागृह में केंद्रीय विधि एवं न्याय तथा संचार, इलेक्ट्रॉनिक एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री श्री रविशंकर प्रसाद ने 'हमारा संविधान : एक पुनरावलोकन' तथा 'रीविजिटिंग अवर कॉन्स्टीट्यूशन' पुस्तकों का लोकार्पण किया। वरिष्ठ पत्रकार श्री रामबहादुर राय एवं 'मंथन' के संपादक डॉ. महेश शर्मा द्वारा संपादित ये पुस्तकें वस्तुत: शोध त्रैमासिक 'मंथन' के हाल ही में आए भारतीय संविधान विशेषांक का पुस्तकाकार रूप हैं। प्रभात प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित इन पुस्तकों के लेखकों में स्वयं केंद्रीय मंत्री श्री रविशंकर प्रसाद, पूर्व लोकसभा अध्यक्ष श्रीमती सुमित्रा महाजन, शांति निकेतन के कुलपति प्रो. बिद्युत चक्रवर्ती, चौधरी देवीलाल विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. विजय के. कायत, वरिष्ठ पत्रकार श्री जवाहरलाल कौल, संविधानविद् श्री ब्रजकिशोर शर्मा, डॉ. चद्रशेखर प्राण, डॉ. ओ. पी. शुक्ला, श्री डी.पी. त्रिपाठी, पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त श्री एस.वाई. कुरैशी, राज्यसभा सदस्य डॉ. विनय सहस्रबुद्धे आदि शामिल हैं। श्री प्रसाद ने कहा कि स्वतंत्र प्रेस, स्वतंत्र न्यायपालिका, शक्तिशाली विधायिका, सजग आमजन और सभ्य समाज, ये सभी साथ मिलकर चलेंगे, तभी लोकतंत्र और देश मजबूत होगा।

लोकनायक जयप्रकाश नारायण एवं भारत रत्न नानाजी देशमुख का जन्मदिन होने के कारण इस क्रम में इनके चित्रों पर पुष्पांजलि भी अर्पित की गई। डॉ. महेश चंद्र शर्मा ने सभी लेखकों का परिचय दिया। उन्होंने संविधान सभा का जिक्र करते हुए कहा कि उसमें शामिल एक भी ऐसा वक्ता नहीं है, जिसने सभा के तात्कालिक स्वरूप पर असंतोष व्यक्त न किया हो। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. योगेश त्यागी ने कहा कि संविधान सभा जिन परिस्थितियों में बनी, वह बुनियाद और प्रक्रिया सच्चे अर्थों में लोकतांत्रिक नहीं थी। □

दो पुस्तकें लोकार्पित

विगत दिनों पर्थ (ऑस्ट्रेलिया) की अग्रणी साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'संस्कृति' तथा हिंदी समाज ऑफ पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के संयुक्त सत्त्वावधान में आयोजित एक सुरुचिपूर्ण आयोजन में भारत से आए सुपरिचित लेखक डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल की सद्य: प्रकाशित दो पुस्तकों 'समय की पंचायत' और 'जो देश हम बना रहे हैं' का लोकार्पण हिंदी समाज के अध्यक्ष श्री अनुराग सक्सेना, प्रतिनिधि सुश्री रीता कौशल, ट्रस्टी सुश्री राज्यश्री मालवीय और प्रो. प्रेम स्वरूप माथुर ने किया। कार्यक्रम का संचालन किया सुश्री राज्यश्री मालवीय ने। □

'नैना' खंड काव्य लोकार्पित

विगत दिनों देवनागरी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था आगरा के तत्त्वावधान में आयोजित कार्यक्रम में डॉ. यशोयश के खंड-काव्य 'नैना' का लोकार्पण सांसद प्रो. एस.पी. सिंह बघेल, डॉ. राजेंद्र मिलन, श्री पवन आगरी, डॉ. शशि तिवारी, डॉ. हृदयेश चौधरी, डॉ. नीति चौधरी, अशोक अश्रु आदि के करकमलों द्वारा किया गया। □

पुस्तक लोकार्पित

विगत दिनों तुलसी साहित्य अकादमी द्वारा स्वराज भवन भोपाल में संपन्न एक समारोह में वरिष्ठ पत्रकार एवं पर्यावरणविद् श्री श्रीराम माहेश्वरी की पुस्तक 'मानव जीवन और ध्यान' का लोकार्पण सर्वश्री देवेंद्र दीपक, प्रेम भारती, युगेश शर्मा, घनश्याम सक्सेना, मोहन तिवारी, ओमप्रकाश गुप्ता द्वारा किया गया। □

भाऊराव देवरस स्मृति व्याख्यान संपन्न

विगत दिनों दिल्ली के मावलंकर ऑडिटोरियम में भाऊराव देवरस

सेवा न्यास का २६वाँ भाऊराव देवरस स्मृति व्याख्यान 'पर्यावरणीय संकट और जनजीवन के लिए चुनौतियाँ' विषय पर संपन्न हुआ। मुख्य वक्ता श्री भगवती प्रकाश शर्मा (कुलपति, गौतमबुद्ध विश्विद्यालय) व मुख्य अतिथि श्री गजेंद्र सिंह शेखावत (केंद्रीय मंत्री, जल शक्ति मंत्रालय, भारत सरकार) थे। श्री भगवती प्रकाश शर्मा ने कहा कि जीव सृष्टि निराली है और इस जीव सृष्टि की विशेषताओं को समझे बगैर पर्यावरण की बात करना ठीक नहीं है। श्री गजेंद्र सिंह शेखावत ने कहा कि जल, धरती, वायु के प्रदूषित होने का मुख्य कारण इनसानों के मन का प्रदूषण है; २१वीं सदी में भारत पर्यावरण रक्षा को लेकर विश्व का प्रतिनिधित्व करेगा। संचालन श्री अनीश किला ने किया। न्यास के सह सचिव श्री राहुल सिंह ने धन्यवाद ज्ञापित किया। □

गांधी विषयक राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

१-२ अक्तूबर को महात्मा गांधी की १५०वीं जयंती के अवसर पर राजीव गांधी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग, उत्तर प्रदेश भाषा संस्थान, लखनऊ, भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद्, पूर्वोत्तर क्षेत्रीय कार्यालय, शिलांग ने संयुक्त रूप से एक संगोष्ठी आयोजित की, जिसका विषय था, 'साहित्य एवं लोक-साहित्य में गांधी और गांधीवाद'। प्रो. चंदन कुमार ने बीज-वक्तव्य दिया। उद्घाटन सत्र में कुलपति प्रो. साकेत कुशवाहा, डॉ. राकेश कुमार उपाध्याय तथा प्रो. हरीश कुमार शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। □

परिसंवाद संपन्न

२ अक्तूबर को साहित्य अकादेमी द्वारा महात्मा गांधी की १५०वीं जयंती के अवसर पर आयोजित एक दिवसीय परिसंवाद 'गांधी दृष्टि और पर्यावरण विमर्श' का उद्घाटन वक्तव्य प्रख्यात संस्कृत विद्वान श्री सत्यव्रत शास्त्री ने दिया। प्रख्यात लेखक श्री आबिद सुरती विशिष्ट अतिथि थे। अध्यक्षता श्री माधव कौशिक ने की। अतिथियों का स्वागत श्री के. श्रीनिवासराव द्वारा गांधी माला और पुस्तकें भेंट करके किया गया। दूसरे सत्र की अध्यक्षता पत्रकार श्री बनवारी ने की और सर्वश्री सुशील त्रिवेदी, उषा उपाध्याय, शंभु जोशी और अरुण तिवारी ने अपने आलेख प्रस्तुत किए। अगले सत्र की अध्यक्षता सुपर्णा गुप्तू ने की और सर्वश्री अजीज आजिनी और कन्हैया त्रिपाठी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अनुपम तिवारी ने किया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

विद्याश्री न्यास के सांवत्सर उपक्रमों में से एक 'राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं भारतीय लेखक शिविर' का आयोजन १२-१४ जनवरी-२०२० में महात्मा गांधी और हिंदी सृजन-संदर्भ पर केंद्रित होगा, जिसके अकादमिक सत्रों में—(१) भाषा का प्रश्न और गांधी, (२) हिंदी पत्रकारिता और गांधी, (३) हिंदी कविता और गांधी, (४) हिंदी कथा-साहित्य और गांधी, (५) हिंदी का कथेतर गद्य और गांधी आदि बिंदुओं पर विचार किया जाएगा। संगोष्ठी के केंद्रीय विषय तथा विभिन्न अकादमिक सत्रों के उपविषयों से संबंधित शोध-आलेख नीचे दिए पते अथवा ईमेल पर भेज सकते हैं। चयनित शोध-पत्रों के वाचन का अवसर रहेगा। अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें : सचिव, विद्याश्री न्यास, अभिलाषा कॉलोनी, निकट एक्सेल टावर, वरुणा पुल, नदेसर, वाराणसी; दूरभाष : ९४१५७७६३१२ □

रामधारी सिंह दिनकर जयंती संपन्न

२५ सितंबर को हिंदी भवन, नई दिल्ली में मैथिली-हिंदी की कवयित्री श्रीमती कुमकुम झा द्वारा दिनकरजी की जयंती पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री श्याम सिंह शशि स्वागता सेन पिल्लई, सुशील गुप्त, रवींद्र नाथ झा, कामेश्वर चौधरी, ज्ञान सुधा मिश्रा आदि ने दिनकरजी पर अपने विचार व्यक्त किए। □

कार्यक्रम संपन्न

३० सितंबर को हैदराबाद में कवियों की संस्था 'गीत चाँदनी' और गोलकोंडा दर्पण विचार मंच के संयुक्त तत्त्वावधान में श्री अशोक सिंह सत्यवीर के सम्मान में 'कविता की एक शाम अशोक सिंह सत्यवीर के नाम' कार्यक्रम संपन्न हुआ। अध्यक्षता डॉ. प्रेमलता श्रीवास्तव ने की और संचालन कवि श्री गोविंद अक्षय ने किया। □

हिंदी कर्मशाला संपन्न

हिंदी दिवस के अवसर पर जयपुर में 'राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान' (एन.आई.टी.) उत्तराखंड की ओर से 'मदनमोहन मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान' के सभागार में आयोजित पंचदिवसीय 'समग्र हिंदी भाषा-मंथन' कर्मशाला का उद्घाटन मुख्य अतिथि डॉ. पृथ्वीनाथ पांडेय ने किया। इसी अवसर पर सिद्धो-कान्हू-मुर्मू विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. अजय शुक्ल द्वारा डॉ. पृथ्वीनाथ पांडेय के व्यक्तित्व-कृतित्व पर आधारित शोध प्रबंध 'सूर्यधर्मी साहित्यकार और अग्निधर्मी पत्रकार डॉ. पृथ्वीनाथ पांडेय' का लोकार्पण किया गया। संयोजन डॉ. अजय कुमार चौबे ने किया। □

मासिक काव्य-गोष्ठी संपन्न

२८ सितंबर को भोजपाल साहित्य संस्थान, भोपाल की मासिक साहित्यिक गोष्ठी श्री सुदर्शन सोनी की अध्यक्षता व श्री अशोक व्यास के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुई। सर्वश्री अशोक व्यास, दुर्गारानी श्रीवास्तव, के.के. दुबे, जयपाल सिंह, सरिता, चंद्रभान राही आदि उपस्थित थे। संचालन श्री चंद्रभान राही व आभार श्रीमती दुर्गारानी श्रीवास्तव ने व्यक्त किया। □

संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों भोजपुरी अध्ययन केंद्र, काशी हिंदू विश्वविद्यालय और 'सोच-विचार' पत्रिका के संयुक्त तत्त्वावधान में 'आज का समय और लोक भाषाओं का महत्त्व' विषयक संगोष्ठी की अध्यक्षता प्रो. अर्जुन तिवारी ने की। मुख्य वक्ता प्रो. रामदेव शुक्ल थे। इस अवसर पर 'सोच-विचार' पत्रिका के 'हिंदी की बोलियों' पर केंद्रित अंक का लोकार्पण भी किया गया। सर्वश्री राजा वशिष्ठ त्रिपाठी, नीरजा माधव, दयानिधि मिश्र ने अपने विचार रखे। संचालन डॉ. जितेंद्र नाथ मिश्र ने तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री हिमांशु उपाध्याय ने किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

विगत दिनों अखिल भारतीय साहित्य परिषद, मुरादाबाद ने 'हिंदी पर्वोत्सव एवं सम्मान-अर्पण कार्यक्रम' का आयोजन किया। जिसकी अध्यक्षता श्री काव्य सौरभ रस्तोगी ने की। मुख्य अतिथि डॉ. अंजू लोचब एवं विशिष्ट अतिथि अजय अनुपम व सरिता लाल थे। संचालन प्राचार्या

डॉ. मीना कौल ने किया। श्री राजवी 'प्रखर' को 'साहित्य दीप सम्मान' से सम्मानित किया गया। डॉ. प्रेमवती उपाध्याय ने आभार व्यक्त किया। ☐

गांधी-१५० पर संगोष्ठी संपन्न

२२ सितंबर को दिल्ली पुस्तक मेला-२०१९ में ऑथर्स गिल्ड ऑफ इंडिया द्वारा 'गांधी-१५०' के अवसर पर आयोजित संगोष्ठी और कवि सम्मेलन की अध्यक्षता नागरी लिपि परिषद के महामंत्री डॉ. हरिसिंह पाल ने की। मुख्य अतिथि डॉ. रमेश भारद्वाज थे। समारोह में डॉ. सुषमा सिंह की पुस्तक 'बूँद-बूँद से घट भरे', डॉ. विनोद बब्बर की 'जलियाँवाला बाग की गूँज', डॉ. रघुनंदन प्रसाद तिवारी की 'बीहड़ के पत्थर', डॉ. सुरेश शर्मा की 'अब लौट चले गाँव', डॉ. रजनी सिंह की 'अतुल व्यक्तित्व : अटलबिहारी वाजपयी', डॉ. संदीप शर्मा की 'प्रकृति की ओर प्रकृति का विज्ञान', प्रदीप कुमार शर्मा की 'डेस्टिनी अनफोल्डेड', डॉ. जनकराज जय की 'द पावर ऑफ द बेलेट' पुस्तकों और नागरी लिपि परिषद की मुखपत्रिका 'नागरी संगम' के 'गांधी-१५० विशेषांक' का लोकार्पण अतिथियों द्वारा किया गया। सर्वश्री दयाप्रकाश सिन्हा, विनोद बब्बर, दिविक रमेश, सविता चड्ढा, रजनी सिंह, जंगबहादुर सिंह राणा, संदीप शर्मा, अरुण कुमार पासवान, निर्मला सिंह, शारदा शरण सैदपुरी, सुदेश गोगिया, उपेंद्र कुमार एवं अन्य लोगों ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

श्री पीटर हंडके को साहित्य का नोबेल पुरस्कार घोषित

साहित्य में नोबेल पुरस्कार खत्म करने जैसा बयान देनेवाले ऑस्ट्रिया के साहित्यकार पीटर हंडके का नाम साहित्य के नोबेल पुरस्कार के लिए घोषित किया गया है। ऑस्ट्रिया की मीडिया से २०१४ में उपन्यासकार, नाटक लेखक, कवि और अनुवादक हंडके ने कहा था कि यह पुरस्कार विजेता को 'झूठी महानता और एक क्षण के आदर-सत्कार' दिलाता है। ☐

डॉ. नागेश पांडेय 'संजय' सम्मानित

विगत दिनों प्रसिद्ध बाल साहित्यकार डॉ. नागेश पांडेय 'संजय' को उनके बाल उपन्यास 'टेढ़ा पुल' के लिए राँची में झारखंड का प्रतिष्ठित स्पेनिन साहित्य गौरव सम्मान प्रदान किया गया, जिसके अंतर्गत सर्वश्री अशोक प्रियदर्शी और कुमार संजय ने ग्यारह हजार एक रुपए की धनराशि, अंगवस्त्र और प्रशस्ति-पत्र भेंट किया। ☐

प्रवासी मंच कार्यक्रम संपन्न

२५ सितंबर को साहित्य अकादेमी दिल्ली द्वारा आयोजित प्रवासी मंच कार्यक्रम में ओस्लो (नॉर्वे) से पधारे लेखक श्री सुरेश चंद्र शुक्ल ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। कार्यक्रम के आरंभ में उन्होंने नॉर्वे में हिंदी की स्थिति के बारे में विस्तार से बताया। उन्होंने वहाँ से निकलनेवाली हिंदी पत्र-पत्रिकाओं का विशेष तौर पर उल्लेख किया। साहित्य अकादेमी के सचिव डॉ. के. श्रीनिवासराव ने पुस्तकें भेंट कर उनका स्वागत किया। संचालन श्री अनुपम तिवारी ने किया। ☐

संगोष्ठी संपन्न

अमृतसर के डी.ए.वी. बालिका महाविद्यालय में दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी, संस्कृति मंत्रालय द्वारा जलियाँवाला बाग नरसंहार के १०० वर्ष पूरे होने पर आयोजित एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का उद्घाटन कुलाधिपति श्री हरिमेंदर सिंह बेदी ने किया। अध्यक्षता दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड के अध्यक्ष श्री रामशरण गौड़ ने की। सर्वश्री महेश चंद शर्मा, मालती, प्रशांत गौरव, सौरभ कुमार, अरुणा राजेंद्र शुक्ला, गौरांगशरण देवाचार्य, देवेंद्र कुमावत, जमनादेवी, महेशचंद्र गुप्त ने अपने विचार व्यक्त किए। मुख्य अतिथि डॉ. लक्ष्मी कांता चावला थीं। ☐

सम्मान समारोह संपन्न

३० सितंबर को दिल्ली सरकार की हिंदी अकादमी के सम्मान समारोह में उप मुख्यमंत्री श्री मनीष सिसोदिया, हिंदी अकादमी के उपाध्यक्ष प्रसिद्ध कवि श्री सुरेंद्र शर्मा और दिल्ली सरकार के कला, संस्कृति एवं भाषा विभाग की सचिव सुश्री मनीषा सक्सेना ने पुरस्कार वितरित किए। शलाका सम्मान श्रीमती विश्वनाथ त्रिपाठी को, शिखर सम्मान श्रीमती शीला झुनझुनवाला को, विशिष्ट योगदान सम्मान श्री सुधाकर बाबू पाठक को, काव्य सम्मान श्री माणिक वर्मा को, गद्य विधा सम्मान डॉ. श्योराज सिंह बेचैन को, ज्ञान प्रौद्योगिकी सम्मान डॉ. यतीश अग्रवाल को, बाल साहित्य सम्मान श्री घमंडी लाल अग्रवाल को, नाटक सम्मान डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी को, हास्य-व्यंग्य सम्मान श्री वरुण ग्रोवर को, अनुवाद सम्मान श्री हरजेंद्र चौधरी को, पत्रकारिता सम्मान श्री सुप्रिय प्रसाद को, हिंदी सेवा सम्मान श्री सलिल चतुर्वेदी और सहभाषा सम्मान डॉ. पृथ्वी सिंह को दिया गया। शलाका सम्मान के अतिरिक्त पुरस्कार स्वरूप पाँच लाख रुपए की राशि प्रदान की गई, जबकि शिखर सम्मान के अंतर्गत दो लाख रुपए व अन्य सम्मानों के अंतर्गत एक-एक लाख रुपए दिए गए। ☐

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

साहित्य सदन भोपाल द्वारा राष्ट्रीय ख्याति के बाईसवें अंबिका प्रसाद दिव्य स्मृति प्रतिष्ठा पुरस्कारों हेतु साहित्य की अनेक विधाओं में पुस्तकें आमंत्रित हैं। उपन्यास, कहानी, कविता, व्यंग्य, निबंध एवं बाल साहित्य विधाओं में, प्रत्येक विधा के लिए इक्कीस सौ रुपए राशि के साहित्य-पुरस्कार प्रदान किए जाएँगे। दिव्य-पुरस्कारों हेतु पुस्तकों की दो प्रतियाँ, लेखक के दो छायाचित्र एवं प्रत्येक विधा की प्रविष्टि के साथ दो सौ रुपए प्रवेश शुल्क भेजें। हिंदी में प्रकाशित पुस्तकों की मुद्रण अवधि १ जनवरी, २०१५ से लेकर ३१ दिसंबर, २०१८ के मध्य होनी चाहिए। पता है—श्रीमती राजो किंजल्क, साहित्य सदन, १४५-ए, साईंनाथ नगर, सी-सेक्टर, कोलार रोड, भोपाल-४६२०४५, पुस्तकें प्राप्त होने की अंतिम तिथि है ३० दिसंबर, २०१९। ☐

कविता-संगोष्ठी संपन्न

३ अक्तूबर को क्षितिज संस्था इंदौर द्वारा आयोजित कविता संगोष्ठी की अध्यक्षता श्री सूर्यकांत नागर ने की, मुख्य अतिथि वरिष्ठ श्री महेश दुबे थे। सर्वश्री आशीष कंधवे, बृजेश कानूनगो, सतीश राठी, बी.एल. पानेरी, आर.एस. माथुर, अश्विनी कुमार दुबे, कविता वर्मा, सुरेश उपाध्याय, अशोक शर्मा भारती, मोहन बैरागी, मनोहर लाल यादव आदि ने भी कविताएँ सुनाईं। संचालन श्री सतीश राठी ने एवं आभार श्री अशोक शर्मा भारती ने माना। ☐

श्रीमती रेखा लोढ़ा 'स्मित' को 'सुरभि पुरस्कार'

विगत दिनों आर.सी.ए. गर्ल्स डिग्री कॉलेज, मथुरा में आयोजित सजल सर्जना समिति, मथुरा के तृतीय वार्षिक सजल महोत्सव-२०१९ में स्व. रामदेवी गहलौत स्मृति सजल सुरभि पुरस्कार वर्ष-२०१९ से श्रीमती

रेखा लोढ़ा स्मित को उनकी कृति 'रोशनी है दाँव पर' के लिए पुरस्कृत किया गया। सम्मान में शॉल, कंठहार, स्मृति चिह्न, सम्मानोपाधि के साथ पाँच हजार एक सौ एक रुपए की नकद राशि प्रदान की गई। ☐

सम्मान समारोह संपन्न

१४ सितंबर को श्रीडूँगरगढ़ में साहित्यिक संस्था राष्ट्रभाषा हिंदी प्रचार समिति की ओर से हिंदी दिवस के अवसर पर सृजन पुरस्कार समारोह का आयोजन किया गया। इसमें संस्था की सर्वोच्च उपाधि 'साहित्यश्री से डॉ. प्रेम जनमेजय एवं डॉ. नंदलाल महर्षि को, 'पं. मुखराम सिखवाल स्मृति राजस्थानी साहित्य सृजन' से श्री लालित्य व श्रीमती बृजरानी भार्गव को, 'युवा साहित्य पुरस्कार' से श्री बसंती पवार व श्री माधव राठौड को अलंकृत किया गया। इस अवसर पर वैश्विक फलक पर हिंदी विषय पर संगोष्ठी भी हुई। समारोह की अध्यक्षता डॉ. उमाकांत गुप्त ने की, मुख्य अतिथि डॉ. चेतन स्वामी थे। ☐

संगोष्ठी संपन्न

१४ अक्तूबर को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा गिरिजा कुमार माथुर जन्मशतवार्षिकी के अवसर पर 'गिरिजा कुमार माथुर : व्यक्तित्व और कृतित्व' विषयक द्विदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। उद्घाटन वक्तव्य प्रसिद्ध आलोचक श्री विश्वनाथ त्रिपाठी ने दिया। सर्वश्री चित्तरंजन मिश्र, अजय तिवारी, माधव कौशिक ने अपने विचार रखे। इस अवसर पर गिरिजा कुमार माथुर रचना-संचयन (संपादक : पवन माथुर) का लोकार्पण भी किया गया। ☐

कवि-सम्मेलन संपन्न

२० सितंबर को कानपुर के मर्चेंट हॉल में अनमोल रत्न संस्था द्वारा हिंदी पखवाड़ा तथा रजत जयंती एवं पंडित दीनदयाल उपाध्याय जयंती के उपलक्ष्य में विराट अखिल भारतीय कवि सम्मेलन, सम्मान एवं पुस्तक विमोचन का कार्यक्रम संपन्न हुआ। अध्यक्षता कानपुर के महामंडलेश्वर श्री प्रखरजी महाराज ने की। कवि सममेलन में सर्वश्री रामेंद्र त्रिपाठी, शिवओम अंबर, राजकुमार रंजन, चंद्रपाल मिश्र 'गगन', प्रशांत उपाध्याय, राकेश सक्सेना, सत्येन वर्मा, रणजीत राणा, लाल बत्ती, व्याख्या मिश्रा, सोनी सुगंधा आदि ने काव्यपाठ किया। डॉ. राधेश्याम मिश्रजी के गीत संग्रह 'जिंदगी चलती डगर है' का भव्य विमोचन हुआ। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि केंद्रीय मंत्री श्री महेंद्रनाथ पांडेय एवं अतिविशिष्ट अतिथि उत्तर प्रदेश सरकार में कैबिनेट मंत्री श्री सतीश महाना थे। उ.प्र. सरकार में मंत्री श्रीमती कमल रानी और श्रीमती नीलिमा कटियार ने भी कार्यक्रम में सहभागिता की। ☐

'मेरे झरोखे से' कार्यक्रम संपन्न

१६ अक्तूबर को साहित्य अकादेमी, दिल्ली द्वारा प्रतिष्ठित कार्यक्रम 'मेरे झरोखे से' में आलोचक श्री रवल सिंह ने प्रख्यात पंजाबी कवि और विद्वान श्री सुतिंदर सिंह 'नूर' पर व्याख्यान में उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के कई पक्षों पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम का संचालन अकादेमी के हिंदी संपादक श्री अनुपम तिवारी ने किया। ☐

दो दिवसीय महोत्सव संपन्न

विगत दिनों राष्ट्रभाषा स्वाभिमान न्यास एवं भागीरथ सेवा संस्थान के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित २७वाँ अ.भा. हिंदी साहित्य सम्मेलन 'गाजियाबाद महोत्सव' के उद्घाटन सत्र में सर्वश्री कृष्ण मित्र, राजकुमार सचान 'होरी', अशोक श्रीवास्तव, विजयपाल वघेल, अमिताभ सुकुल आदि ने गाजियाबाद के विभिन्न पक्षों पर अपने विचार प्रस्तुत किए। दूसरे सत्र में 'आपातकाल की साहित्य सर्जना' विषयक संगोष्ठी में डॉ. ओंकारनाथ द्विवेदी की अध्यक्षता में सर्वश्री राजकुमार सचान 'होरी', अशोक कुमार ज्योति, कल्पना पांडेय, रीतू जैन, मोनिका जायसवाल ने अपने आलेख प्रस्तुत किए। दूसरे दिन नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में राष्ट्र-चेतना' विषयक गोष्ठी डॉ. ललित बिहारी गोस्वामी की अध्यक्षता में हुई। इसमें सर्वश्री नरेश कुमार, एन.एल. गोसाईं, विनय दास, सर्वज्ञ शेखर गुप्ता और रमेश कटारिया 'पारस' ने अपने शोध-आलेख प्रस्तुत किए। संचालन एनबीटी के संपादक श्री पंकज चतुर्वेदी ने किया। दूसरे सत्र में विभिन्न लेखकों की ११ पुस्तकों का लोकार्पण हुआ। संचालन श्री उमाशंकर मिश्र ने तथा श्री अमिताभ शुक्ल ने धन्यवाद दिया। ☐

कवि-गोष्ठी संपन्न

१६ अक्तूबर को हैदराबाद के श्री सतनाम आधार कबीर डेरा के तत्त्वावधान में कबीर चिंतन की २०६वीं मासिक कवि-गोष्ठी और कबीर चिंतन का साहित्यिक कार्यक्रम कबीर डेरा में संपन्न हुआ। संयोजक श्री डी. लक्ष्मण ने सभी का स्वागत किया। ठाकुर लक्ष्मण सिंह आर्य ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की और कवि श्री गोविंद अक्षय ने संचालन किया। सर्वश्री गजानन पांडेय, प्रदीप देवीशरण भट्ट एवं सुहास भटनागर ने अपने विचार रखे। आध्यात्मिक कवि-गोष्ठी में आध्यात्मिक कविताओं का पाठ किया गया। ☐

हिंदी पखवाड़ा मनाया

१६ से ३० सितंबर तक आईडीबीआई बैंक, दिल्ली अंचल कार्यालय में हिंदी पखवाड़ा मनाया गया। इसका शुभारंभ मुख्य महाप्रबंधक श्री राजीव शर्मा के प्रेरक हिंदी संदेश से किया गया। इसके साथ ही माननीय केंद्रीय गृह मंत्री तथा प्रबंध निदेशक एवं मुख्य कार्यपालक अधिकारी के हिंदी संदेश जारी किए गए। हिंदी पखवाड़ा मुख्य समारोह में विजित स्टाफ-सदस्यों के बीच उन्हें प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से मुख्य अतिथि तथा मुख्य वक्ता द्वारा पुरस्कार प्रदान किए गए। हिंदी निबंध लेखन प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा सांत्वना पुरस्कार क्रमशः श्री सुशील कुमार गुप्ता, श्री नीरज सिंह, सुश्री अर्चना भारद्वाज तथा सुश्री प्रीति गोयल को मिला। 'अंचल समग्र हिंदी टिप्पण-प्रारूपण' लेखन प्रतियोगिता में श्री गौरव जायसवाल, श्री सुशील कुमार गुप्ता, सुश्री ऋचा हेमराजानी तथा सुश्री रिया अग्रवाल क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा सांत्वना पुरस्कार विजेता रहे। प्रोत्साहन की दृष्टि से सर्वश्री जितेंद्रपाल सिंह यादव, जितेंद्र मीणा, पंकज माथुर, आदित्य जय सिंह, प्रिंस जिंदल तथा सर्वसुश्री रजनी पांडेय व सुनैना रेड्डी को प्रतिभागिता पुरस्कार दिए गए। समारोह की अध्यक्षता श्री राजीव शर्मा ने की। मुख्य अतिथि डॉ. देवेंद्र चौबे एवं मुख्य वक्ता श्री शैलेश कुमार सिंह थे। संचालन तथा स्वागत-भाषण डॉ. रवींद्र प्रसाद सिंह ने दिया। श्री संदीप कुमार शर्मा ने आभार व्यक्त किया। ☐

उ.प्र. हिंदी संस्थान के सम्मान घोषित

२० सितंबर को उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के वर्ष २०१८ के सम्मानों/पुरस्कारों का सर्वसम्मति से चयन किया गया तथा वर्ष २०१८ में प्रकाशित पुस्तकों पर सम्मान और पुरस्कार घोषित किए गए। वर्ष २०१८ के लिए 'भारत-भारती सम्मान' पाँच लाख रुपए, डॉ. उषा किरण खान; डॉ. मनमोहन सहगल को 'लोहिया साहित्य सम्मान', डॉ. बदरीनाथ कपूर को 'हिंदी गौरव सम्मान', श्री श्रीभगवान सिंह को 'महात्मा गांधी साहित्य सम्मान', डॉ. ओमप्रकाश पांडेय को 'दीनदयाल उपाध्याय साहित्य सम्मान', श्रीमती कमल कुमार को 'अवंतीबाई साहित्य सम्मान', मणिपुर हिंदी परिषद को 'राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन सम्मान'—इन सबको चार लाख रुपए की राशि सम्मानस्वरूप प्राप्त होगी; 'साहित्य भूषण सम्मान' सर्वश्री जगत्गुरु रामानंदाचार्य (स्वामी रामभद्राचार्य), सुरेश प्रकाश शुक्ल, रामदेव लाल 'विभोर', आद्या प्रसाद द्विवेदी, पूरन चंद टंडन, सुरेश बाबू मिश्र, वीरेंद्र आस्तिक, प्रताप नारायण मिश्र, रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर', सूर्यपाल सिंह, चंद्रिका प्रसाद कुशवाहा, इंदीवर पांडेय, शशि तिवारी, नवनीत मिश्र, जगदीश तोमर, बद्री प्रसाद पंचोली, भगवान शरण भारद्वाज, उषा चौधरी, श्यामसुंदर दुबे, अशोक अग्रवाल को दो लाख रुपए की सम्मान राशि दी जाएगी; डॉ. शांति जैन को 'लोक भूषण सम्मान', श्री मनोज कुमार सिंह को 'कला भूषण सम्मान', प्रो. जगमोहन सिंह राजपूत को 'विद्या भूषण सम्मान', डॉ. प्रेमचंद्र स्वर्णकार को 'विज्ञान भूषण सम्मान', डॉ. रमेश चंद्र त्रिपाठी को 'पत्रकारिता भूषण सम्मान', डॉ. उदय नारायण गंगू को 'प्रवासी भारतीय हिंदी भूषण सम्मान', डॉ. बंडार मेणिके विजयतुंग को 'हिंदी विदेश प्रसार सम्मान', डॉ. भैरूंलाल गर्ग, सूर्यकुमार पांडेय, संजीव जायसवाल 'संजय' को 'बाल साहित्य भारती सम्मान', डॉ. वेदप्रकाश पांडेय को 'मधु लिमये साहित्य सम्मान', रणविजय सिंह को 'पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी साहित्य सम्मान', ब्रजकिशोर शर्मा को 'विधि भूषण सम्मान' के साथ-साथ सर्वश्री सुनील देवघर, एच.एम. कुमारस्वामी, आजाद मिश्र, टी.सी. वसंता, राजेंद्र सिंह टोकी, अहिल्या मिश्र, पी. लता, अलमेलू कृष्णन, वेद कुमार घई, चंद्रशेखर, राधाकांत मिश्र, अग्निशेखर, बंशीधर शर्मा, भूपेंद्र राय चौधरी, ज्ञानप्रकाश टेकचंदानी 'सरल' को दो लाख रुपए की राशि तथा 'मदन मोहन मालवीय विश्वविद्यालय स्तरीय सम्मान' के तहत सर्वश्री डॉ. विजय कर्ण तथा डॉ. रश्मि कुमार को एक लाख रुपए की राशि दीजाएगी।

पुस्तकों पर सर्वश्री देवेंद्र 'देव' मिर्जापुरी को 'तुलसी पुरस्कार', प्रताप नारायण सिंह को 'जयशंकर प्रसाद पुरस्कार', अमित कुमार मल्ल को 'विजयदेव नारायण साही पुरस्कार', शिवानंद सिंह 'सहयोगी' को 'निराला पुरस्कार', अशोक रावत को 'दुष्यंत कुमार पुरस्कार', चंद्रपाल शर्मा को 'महावीर प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार', अनिल मिश्र एवं शीला मिश्र को 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', सुधीर निगम को 'प्रेमचंद पुरस्कार', सोनी पांडेय को 'यशपाल पुरस्कार', क्षमा शंकर पांडेय को 'रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार', राकेश तिवारी को 'सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' पुरस्कार', कृष्ण बिहारी पांडेय को 'पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' पुरस्कार', संजय सिंह को 'हरिशंकर परसाई पुरस्कार', राम लखन शुक्ल को 'मलिक मुहम्मद जायसी पुरस्कार', भोजराज सिंह 'भोज' को 'श्रीधर पाठक पुरस्कार', कमलेश राय को 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार', राधाचरण गुप्त 'चरण' को 'मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार', सुनीता सिंह को 'सूर पुरस्कार', ओम प्रकाश दुबे 'प्रकाश' को 'कबीर पुरस्कार', रामकृपाल 'कृपाल' को 'सुब्रह्मण्य भारती पुरस्कार', अरविंद कुमार सिंह को 'बाबू विष्णुराव पराड़कर पुरस्कार', उषा बनर्जी को 'सरस्वती पुरस्कार', प्रताप नारायण शुक्ल को 'हजारी प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार', हृदय गुप्त को 'गिरिजादेवी पुरस्कार', रश्मि श्रीवास्तव को 'मदन मोहन मालवीय पुरस्कार', मधुसूदन त्रिपाठी एवं विनायक त्रिपाठी को 'गोविंद वल्लभ पंत पुरस्कार', अशोक कुमार राय को 'डॉ. भीमराव अंबेडकर पुरस्कार', दिनेश चंद्र श्रीवास्तव को 'आचार्य नरेंद्र देव पुरस्कार', श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी को 'गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार', संदीप कुमार तिवारी को 'संपूर्णानंद पुरस्कार', कृष्णकुमार मिश्र को 'के.एन. भाल पुरस्कार', आनंद प्रकाश को 'बीरबल साहनी पुरस्कार', सुभाष चंद्र गुरुदेव को 'पं. सत्यनारायण शास्त्री पुरस्कार', शिव मोहन यादव को 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' पुरस्कार, मंजु शुक्ल को 'महादेवी वर्मा पुरस्कार' के तहत ७५ हजार रुपए की राशि दी जाएगी।

सर्जना पुरस्कार के अंतर्गत सर्वश्री रवींद्र नाथ तिवारी को 'अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' पुरस्कार, केदारनाथ शुक्ल को 'आनंद मिश्र पुरस्कार', दीनानाथ शुक्ल को 'नरेश मेहता पुरस्कार', मंजु लता श्रीवास्तव को 'बलबीर सिंह 'रंग' पुरस्कार', मदन मोहन 'अरविंद' को 'अदम गोंडवी पुरस्कार', अनूप शुक्ल को 'गुलाब राय पुरस्कार', अनूप सिंह को 'मोहन राकेश पुरस्कार', तरुण निशांत को 'अमृतलाल नागर पुरस्कार', उषा सिसोदिया को 'रामप्रसाद विद्यार्थी 'रावी' पुरस्कार', नरेश कुमार गौड़ 'अशोक' को 'रामविलास शर्मा पुरस्कार', सोनरूपा विशाल को 'जगदीश गुप्त पुरस्कार', रौशन एहतशाम को 'विष्णु प्रभाकर पुरस्कार', इंद्रजीत कौर को 'शरद जोशी पुरस्कार', संजीव कुमार गंगवार को 'भोलानाथ तिवारी पुरस्कार', सतीश आर्य को 'वंशीधर शुक्ल पुरस्कार', आनंद संधिदूत को 'भिखारी ठाकुर पुरस्कार', मंजरी शुक्ला को 'सोहनलाल द्विवेदी पुरस्कार', रामसागर शुक्ल को 'नजीर अकबराबादी पुरस्कार', गोपाल नारायन को 'काका कालेलकर पुरस्कार', विजय शंकर पांडेय को 'धर्मवीर भारती पुरस्कार', हीरालाल मिश्र मधुकर को 'धर्मयुग पुरस्कार', आचार्य मंडित उमाशंकर मिश्र 'रसेंदु' को 'नंदकिशोर देवराज पुरस्कार', अनिता अग्रवाल को 'विद्यानिवास मिश्र पुरस्कार', अनूप बरनवाल को 'आचार्य परशुराम चतुर्वेदी पुरस्कार', डॉ. राहुल को 'ईश्वरी प्रसाद पुरस्कार', हरजीत सिंह को 'आचार्य रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी पुरस्कार', शिवप्रसाद त्रिपाठी को 'सतीश चंद्र राय पुरस्कार', दिनकर चतुर्वेदी को 'डॉ. रांगेय राघव पुरस्कार', नूतन पांडेय को 'विद्यावती कोकिल पुरस्कार' के रूप में ४० हजार रुपए की राशि सम्मानस्वरूप दी जाएगी। सुश्री रश्मि शाक्य को 'हरिवंश राय बच्चन युवा गीतकार सम्मान' के साथ पच्चीस हजार रुपए की राशि सम्मानस्वरूप दी जाएगी। ☐